

रूप रसिकदेव और उनका साहित्य

(बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी)

: की :

पी-एच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

सन् 1999 ई०

शोधार्थी

मदनप्रताप सिंह चौहान

एम. ए.

निर्देशक

द्वाराका प्रसाद मीतल

एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्
सेवानिवृत्त, अध्यक्ष हिन्दी विभाग
बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी



जिन्होंने अपने गुरु की आज्ञा की । अपने गुरु की प्रज्ञा में तथा उनके प्रतापके अन्तर्गत है इस में * हरिश्चन्द्र का कृत * ग्रन्थ की रचना की । इस के लिये उन्होंने ही शायद श्याम का सम्बन्ध स्थापित कर युक्त आराधना करते हुए उनके इन उक्त दो में पूरे विश्वास अर्पितियों का वर्णन किया । इन अन्तर्गत वर्णन * ब्रह्म उक्त्यर्थात् * में हुआ । शीलाचरित में शीलाचरितों का वर्णन तथा * नित्य विचार प्रथा में * नित्यविचार का वर्णन हुआ । इस सति के दो प्रभावकारी भावना के जोर सागरानिर्गतों से यह भी प्रथा में प्रभाव में की प्रोद रचना की । उनका आदित्य अन्तर्गत होते हुए भी कुछ ही सामान्यताओं के लिये तब की सभा । उनके प्रचार प्रसार के लिये उन उन लोको पहुँचाने के लिये यह आवश्यक था कि उस पर लोड किया जाय । यह लोड ब्रह्म अन्तर्गतता की प्राप्ति के लिये तथा उनके आदित्य पर लोड प्रकाश प्रेरण । अतः ये विषय पर कार्य होना निश्चित आवश्यक था । विषय अन्तर्गत मौलिक है यह लोड की मौलिक अन्तर्गतताओं को प्रकाश में लाया गया है ।

यस जोड़ प्रत्यक्ष के प्रथम अध्याय में सब सत्त्व देव के निवास स्थान,
आत्म देव, गुरुदेव, मान तक सम्बन्ध सब चीज पर प्रकाश पड़ता है ।
 सब सत्त्व देव के सम्बन्ध में परिष्कृत निरूपण है। द्वितीय अध्याय में सब सत्त्व
 देव के साहित्य का परिष्कृत दिया गया है सभी बताया गया है कि उन्होंने
परिष्कार पदाङ्ग, सुखपद, मनोमय, जीवात्मिका, नित्य विचार
पदाङ्गी, और सुखपद की रचना की । सुखपद उपलब्ध नहीं है ।
 अन्य चारों ग्रन्थों के सम्बन्ध में संक्षिप्त विवरण सब दिया गया है।

द्वितीय अध्याय में हम शक्ति केव के साहित्य की कुछ भूमि एवं
 धार्मिकताओं पर प्रकाश डाला गया है । भक्ति साहित्य पर प्रकाश डालने
 को सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति पर प्रकाश डाला गया है । धार्मिक
 स्थिति पर प्रकाश डालने को लोक सम्प्रदायों पर प्रकाश डाला गया है ।
 निम्नार्थक सम्बन्धी साहित्य में हम शक्ति केव की उन स्थान निर्धारित किया गया है ।

सूर्य केन्द्र में नए सौर दैव के दार्शनिक सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है। जल, धातु, पृथिवी, अग्नि के तन्त्रों में बताया गया है। अन्य सिद्धांतों के आधार पर प्रकाश डालते हुए नए सौर दैव के दार्शनिक सिद्धांतों पर प्रकाश डाला गया है।

पंचम अध्याय में हम सतित देव के भक्ति पर प्रकाश डाला गया है। भक्ति की व्याख्या करते हुए भक्ति के प्रकार पर प्रकाश डाला गया है। निम्नार्थ साम्प्रदायकी भक्ति भावना पर प्रकाश डालते हुए हम सतित देव की भक्ति भावना बताई गई है। भिन्न साक्षात्कार, उन्मत्त, नामावाधार, कर्मात्म निश्चेष्टता, पर प्रकाश डालते हुए कृष्ण भक्ति के सम्बन्ध में बताया गया है। निम्नार्थ साम्प्रदाय के भक्ति सम्बन्धी वाक्य पिछान केन, कलाप, साम्प्रदायिक नैतिकता उत्पन्न, भिन्न और उन्मत्त के अर्थ कर्म दिया गया है।

कल्याण कल्याण में इस सत्त्व देव के कल्याण पर प्रकाश डाला गया है।
 यह विषय जो विद्वत् समझाया गया है। उनके भाव पर, रस, भाव, उन्म
 विद्वान को समझाया गया है। ज्ञानर विद्वान व गुणों पर प्रकाश डाला गया है।
 इस सत्त्व देव का निम्नार्थ साधना में ज्ञान निश्चित विद्या गया है।
 इस सत्त्व देव की अन्य विषयों में सुखा की गई है जो में बताया गया है कि
 इस सत्त्व देव का विद्वत् साहित्य में क्या प्रदेव रहा । इस प्रकार समझे
 जोड प्रकाश में इस सत्त्व देव के समूर्ण साहित्य पर विद्वान प्रकाश डाला गया है।

[illegible]

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

उन्मुखिका

स्व रतिक देव और उनका साहित्य

प्राथमिक अध्याय

स्व रतिक देव जी का जीवन वृत्त

	<u>पृष्ठ संख्या</u>
प्रारम्भ	1 - 3
उन्मुखिका	4 - 6
1- स्व रतिक देव का उल्लेख करने वाली रचनाएँ	1 - 4
2- स्व रतिक देव की कृतियों में उपलब्ध जीवन सम्बन्धी सामग्री	5
3- जन्म तिथि	6
4- निधन स्थान	7 - 8
5- राज्य क्षेत्र	9
6- वैवाहिक परिवार	10
7- गुरुत्व	11 - 17
8- शिक्षण परम्परा	18
9- विविध व्यक्तियों से स्व रतिक देव का सम्बन्ध	19
10- आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक ज्ञान	20 - 24
11- व्यवसाय एवं धर्म	25
12- जीवनवृत्त	26

द्वितीय अध्याय

स्व रतिक देव जी का साहित्य

1- साहित्यिक विवरण	27
2- प्रामाण्यता का विवरण	27
3- ग्रन्थ परिवार :-	
1- हरिवंश काटपुत्र	28 - 33
2- वृद्धतम मणिमान	34 - 38
3- नीला विराटि	38 - 40
4- विद्याविहार वदामनी	41 - 43

4- ग्रन्थों का निम्नार्क साहित्य में स्थान

पृष्ठ संख्या
44 - 53

तृतीय अध्याय

स्व रतिक देव के साहित्य की पृष्ठ भूमि एवं परिस्थितियाँ

1- भक्ति आन्दोलन	54 - 57
2- सामाजिक स्थिति	57 - 58
3- राजनीति की स्थिति	58 - 61
4- धार्मिक स्थिति	62
- शक्तिवाच्य का उत्पन्न	63
- रामानुजाचार्य का भी सम्बन्ध	64 - 65
- मध्वाचार्य का मध्य सम्बन्ध	66 - 67
चिच्छन्दा स्वामी सम्बन्ध	68 - 70
निम्नार्क सम्बन्ध	71 - 72
बालम सम्बन्ध	73 - 74
वैतन्ध सम्बन्ध	75 - 76
रत्नविमल सम्बन्ध	77
हरिदास सम्बन्ध	78
निम्नार्क सम्बन्ध सम्बन्धी साहित्य एवं स्व रतिक देव	79 - 96

चतुर्थ अध्याय

स्व रतिक देव के दार्शनिक सिद्धांत

आचार्य निम्नार्क के दार्शनिक सिद्धांत -	97 - 98
कर्म, ज्ञान, प्राकृत	98 - 101
प्राकृत कर्म, मुक्ति मार्ग	101 - 103
पृष्ठ भूमि की आध्यात्मिक पक्ष	104 - 109
स्व रतिक देव के दार्शनिक पक्ष	110 - 119

पंचम अध्याय

स्व रतिक देव का शक्ति पक्ष

पृष्ठ संख्या

1 - शक्ति की व्याख्या	120 - 126
2 - शक्ति का विज्ञान	127 - 137
3 - निम्बार्क तन्त्रदाय को शक्ति भावना	138 - 139
4 - स्व रतिक देव को शक्ति भावना	150 - 158
5 - निम्बार्क और शक्ति	159 - 160
6 - उन्नयना	161 - 164
7 - नाम उद्घाटन	165 - 167
8 - वर्णाश्रम नियमिता	168
9 - धर्म का उद्घाटन	169 - 170
10 - पूजा शक्ति	171 - 173
11 - निम्बार्क तन्त्रदाय के शक्ति सम्बन्धी बाह्य विधान :- - सेवा, समाज, साम्प्रदायिक, नैमित्तिक उत्सव, तिलक, कंठो	174 - 194

षष्ठ अध्याय

स्व रतिक देव का कौट्य पक्ष

1 - वर्ण विभाग	185 - 195
2 - शासक पक्ष	196 - 197
3 - रत्न	198 - 200
4 - शासक	201 - 208
5 - उन्नय विधान	209 - 210
6 - प्रसन्नता योजना	211 - 218
7 - पुण्य	219 - 220
8 - स्व रतिक देव को का निम्बार्क तन्त्रदाय में स्थान	221 - 222
9 - स्व रतिक देव को को उन्नय कविता से तुलना	223 - 224
10 - हिन्दु साहित्य को स्व रतिक देव को का उद्देश	225 - 226

साहित्य ग्रन्थ सूची

- संस्कृत ग्रन्थ	227
- हिन्दु ग्रन्थ	228 - 229

प्रथम अध्याय

रूप रसिक देव जी का जीवन वृत्त

स्वराष्ट्रिक देव की का कीका कृत

स्वराष्ट्रिक देव का उत्पन्न करने वाली रक्षा - उन साक्षिणों का उद्धार -
होने लगे

उन लोगों के उपरान्त वह सम्प्रदाय के एक अन्य महान
 कवि हैं, श्री स्वराष्ट्रिक देव की - श्री स्वराष्ट्रिक देव की साक्षिणी एवं प्रविष्टा
 ग्राहण कृतोत्पन्न माना जाता है । ३६ वर्ष की उम्र में ममरा में उन्होंने
 श्री स्वराष्ट्रिक देव की का उद्धार स्वीकार किया, किन्तु वह कथुवि है कि
 श्री स्वराष्ट्रिक देव की का उद्धार स्वीकार किया किन्तु वह क-
 थुवि है कि स्वराष्ट्रिक देव की का उद्धार स्वीकार करने के लिए ममरा
 पहुँचे तो वहाँ निदिष्ट हुआ कि उद्धार की की पुत्तु तो चुकी है, किन्तु
 उन्होंने प्रविष्टा की कि अब तक बाबाई उद्धार की के नहीं कर चुका
 कोई कार्य नहीं कहता । वह विस्मयित हुआ जाता है कि उनकी यह प्रविष्टा
 के कारण श्री स्वराष्ट्रिक देव की को प्रष्ट होना पड़ा, और उन्हें विधि पूर्वक
 मंत्र-दीक्षा के के उपरान्त उन्होंने अपना दिव्य स्वरूप प्रकट किया । उनके
 उपरान्त स्वराष्ट्रिक देव की का उद्धार सम्प्रदाय में विज्ञान हुआ । स्वराष्ट्रिक
 देव की ने तीन भाग्य ग्रन्थ लिखे । एक मुहूर्तस्तव भाषावाच, दूसरा उद्धार
 यज्ञस्तव और तीसरा नित्य विचार भद्रावली । वह सम्प्रदाय के स्वराष्ट्रिक
 की का भी सम्मान है, वह कारण नहीं है, क्योंकि उनकी रक्षा में माधुर्य
 और की वही है श्री स्वराष्ट्रिक देव की ने लिखी है । वही श्री भाग्य भाषने
 हमें जाने पुरा है की अधिक लिखा है । उनकी श्री रक्षा कोई भी पद देता
 नहीं है - विविध होता है - किन्तु श्री प्रसाद ही । किन्तु हीनार्थ का नहीं
 उन्होंने किया है वह नविम्य हीनार्थ है । कृष्ण और शारदा का स्वरूप बहुत
 प्रचलित स्वरूप है, किन्तु वह कवि ने " स्वामय " का वर्णन करने में ही एक
 नया हीनार्थ प्रकट किया है, वह पद में विविध होता है —

स्वामय-म, उमंगि - उमंगि का वादे ।

श्रीट मुहूर्त, मुहूर्त, पीताम्बर, मनु बाबाबाबि दत्तात्रेय ॥

मीरिन - माछ छव उर छपर, म्हु कस पांवि छववि ।
 मुरही गरव मोहर धुनि सुनि, सक - मोर सुनपावि ॥
 हन पर कुवा करि छरि नानी नीर - नेह-कर छवि।
 "स्परसिक" यह घोषा निरखत, मन-मन-मन धिरामे ॥¹

निम्बार्क सम्प्रदाय विद्वान्ध और साहित्य - डा० प्रेमनारायण श्रीवास्तव
"प्रेमन्ध्र"

श्री स्परसिकीय की जो प्रविष्ट प्राज्ञता कुतूहल
 की कृष्ण मङ्गल जिन छे हैं । नात्यजत ये ही भेष्टिक, ज्ञापारि ,
 भीतरानी क्या भी राधाकृष्ण के परम उपासक थे । ये दक्षिण देश
 की होकर जने उपासक के भूमि कुन्दावन में बानी थे । कुन्दावन में
 जाकर जब बापने भी हरिध्यास के की कीति सुनी तो आप अपने उन्नी
देवकी दीक्षा लेने की बलिदान करने लगे । मरम्भ परन्तु दीक्षा
 लेने के पूर्व ही जब उन्नी हरिध्यास के गोलीकाम नाम का समाचार
 मिला तो ये ध्यास होकर संज्ञा हीन हो गये । कहा जाता है कि इनके
 इस नावाधेय में कुछ गुरु गुणानुवाद के रूप में " श्रीहरिध्यासशायक"
 का प्रस्तुत हुआ था । उन्नी क्या भी हरिध्यास के दिव्योद कारण
 कर कोटिक डंग थे उन्हें देवकी दीक्षा प्रदान की । इस प्रकार ये
 परमराजीय की परम्परा के निम्बार्कीय मङ्गल बन गए । ये आचार्य परमुराम
 देव के सम्प्रदायिक थे । डा: आपका जन्म वर्ष १९२० ई० स्वीकार किया
 जाता है । इनके द्वारा लिखित तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं - श्रीहरिध्यास
 यशायक , पुस्तक मणिनाथ और हीरा विजय क्या नित्यविहार
 पदावली ।

१ - कुछ साहित्य का इतिहास - डा० सत्येन्द्र पृष्ठ सं० १०६- १०७

२ - निम्बार्क सम्प्रदाय विद्वान्ध और साहित्य डा० प्रेमनारायण श्रीवास्तव
 पृष्ठ २२४

श्री ह्परशिवदेव एक अद्वितीय रहस्य मन्त्र थे। श्री
 हरिश्चन्द्रदेव विरचित दिव्यमहावाणी को प्रकट करने के लिये ही मानी
 उनका आवरण हुआ था। परन्तु गौरव एवं रहस्य की परिपटी के ज्ञाताओं
 में उनकी साम्प्रदायिकता एवं बाधा की विलक्षण ही होगी। श्री अधिकारी साहब
 उनकी शरण में पहुँचे उन्हें अनेक मात्र है ही उन्होंने कुंभ के लिये का अनुमति
 करा दिया। वस्तुतः ये श्री प्रिया प्रियकर की दिव्य सत्कृति मानी
 वास्तविक रहस्यमय मनीषा की ह्परशिव रूप है मन्त्र पर आवरण हुआ
 है।^१

१ - निम्नार्थ सम्प्रदाय सिद्धान्त और वाक्य -

डा० प्रेमनारायण श्रीवास्तव पृ० २२५-२२६

मित्र कन्यु विनोद :-

मित्र कन्यु विनोद नाम ३ पु० १५६ में बुन्दावन
माबुरी की कथा की गयी है। वहाँ की एक स्परसिकीय की के
सम्बन्ध में लिखा है -

पु० में० खोज में० उनकी एक पुस्तिका 'बुन्दावन -
माबुरी' का पता पड़ा है। जालख नागरी प्रचारिणी सभा में
पुस्तकाया गया किन्तु वहाँ की जी एक पता नहीं पड़ा।

मित्र कन्युर्वी ने यशवाजी का रक्ता काष्ठ सम्बन्ध
१५६० माना है। स्परसिकीय में 'बी बुन्दावन माबुरी' के कन्स
में उलका काष्ठ सम्बन्ध १५६० बताया है।

२ - स्व रक्षित देव की कृपियों में उपलब्ध जीवन सम्पत्ती सामग्री -

श्री हरिव्यास महाभूष में कई स्थलों पर आपने श्री परशुराम देवाचार्य के का नामोल्लेख किया है जिससे पता चलता है कि आप उनके सग सम्पत्तिक थे । आप श्री परशुराम देवाचार्य से श्रोटे हैं या कोई हों परन्तु जिस समय आपने हरिव्यास महाभूष की रक्षा की उस समय श्री परशुराम देवाचार्य आचार्य सिंहासन पर विराजमान थे । उनका समय जीक पट्टे परधानों के आचार पर वि० सं० १४१५ से १४५० तक माना जाता है । 'हरिश्चन्द्र कुन्दावन माधुरी' में उल्लिखित श्री स्वरक्षित की का वि० सं० १४५० की मुक्ति मुक्त प्रतीय होता है । श्री स्वरक्षितजी के विरचित छीछाविंशति की कुन्दावन माधुरी में उनके पूर्ण करने के संक्ष् १४५० का विवरण निम्न प्रकार आया है -

पदार्थिक सत्ताधिया माधौल्य जाहीव ।

यह प्रकृत्य पुरन मनी, कुंठा एम दिन जीव ।।

आपने वरिष्ठ काल के एक वरिष्ठतात्व केन्द्र दिव्युक्त की कल्पना किया था । वात्सल्यकाठ है श्री श्रीराजा सर्वेश्वर प्रभु एवं उनके नाम । 'ब्रह्म कुन्दावन' में आपकी स्वाभाविक निष्ठा थी, जब किशोर अवस्था पूर्ण होती ही आप श्री कुन्दावन मधुरा जा गये थे । उस समय रक्षित राजराजेश्वर श्री हरिव्यास देवाचार्य छीछा विस्तार कर चुके थे, किन्तु आपकी परम निष्ठा के कारण व्यक्त होकर उन्हीं आपकी वरिष्ठ वीर उपदेश किया ।

१ - छीछा विंशति श्री कुन्दावन माधुरी स्वरक्षितजीय पु० २४-८२

२ - श्री ब्रह्मकुन्दावन मणिमाठ - स्वरक्षितजीय - भूमिका पु०

श्री ब्रह्मकुन्दावन देवान्ताचार्य

३ - कर्म-विधि

श्री हरिश्चातदेव ने ब्रह्माणा में महाबाणी की रक्षा की ।
 भिन्न-भुवी में उनका रक्षाकार संवत् १५१० माना है । श्री हरिश्चातदेव
 की के दिव्य रूपरक्षिणी ही ने " श्री कृष्णाय नमः " के वन्द में उनका
 रक्षा कार संवत् १५५० बताया है । दिव्य महाबाणी को फाट कर ले
 ली ही उनका कलार हुआ था । परम नीच रक्षक - स्व की परिपाटी
 के आवाज में उनकी समस्त रक्षी बाहर कीर्त नहीं था, जो बापकारी बापक
 उनकी छाया में आये उन्हें संजो दे ही उन्होंने कुल केरि का अनुभव करा
 दिया । वे श्री प्रिया-प्रियम की दिव्य सत्परी का बापाव रक्षिणी ही
 माणिक्य की रूपरक्षिणी के रूप में मूल पर फाट हुए थे ।

४ - निवास स्थान

उपरलिखित महात्मा नै वासि के वसिष्ठजी ब्राह्मण थे ।

उनके पूर्वज बहुत कम्य थे इस देश में ला गये थे । इसलिए उनकी शिक्षा भी वहीं देश में हुई । उनकी चौक-बाक भी वहीं (तुंडार या मरु) देशवासियों की ही हो गई । ये कम्य थे ही वैश्वदेव ब्रह्मर्षि पुत्र का - पालन करते रहे । पीरि पीरि से संसार से उदासीन हो गये और राधा-कृष्ण ही देवा उवा नामना में रहने लगे ।

ये भी राधाकृष्ण की उवा सुने में उत्पन्न रहते थे । जहाँ पर भी कृष्णोपासक भक्त्यास का आगमन हुन्हीं किया गये हुने पर वे उठकर पुनर्वास कर देते थे । ये २६ वर्ष तक वहीं प्रकार पर में रहे । बाद में एक स्वप्न में परमेश्वर ने आज्ञा की कि जब तुम भी हरिष्वास देवाचार्य की शरण में जाओ । उन्होंने भी हरिष्वास देवाचार्य का कौटुम्बिक प्रभाव सुन खा था । इसलिए वे प्रसन्न होकर ये भी हरिष्वास देवाचार्य की शीव में मगुरा पहुँचे । किन्तु उस समय भी हरिष्वास देवाचार्य अपनी हीला संवरण कर परमेश्वर प्रकार हुने थे । उनके शिष्य भी परबुराम देवाचार्य मगुरा में पुन टीला पर विराजमान थे । उन्होंने उन परबुराम देवाचार्य से भी हरिष्वास देवाचार्य के सम्बन्ध में पूछा तो उन्होंने कसमकस कहा कि भी महाराज ही गी भीटे पिन हुने परमेश्वर प्रकार हुने हैं । यह सुनकर उपरलिखित नृसिंह होकर गिर गये ।

श्री परशुराम देवाचार्य ने बीरे बीरे वात्सावन देकर छाती से लगाया ।
 स्फुरितकौश ने कहा कि मैं तो उन्हीं महाबाहू की तरफ में जाऊंगा
 बाहे प्राण रहें या न रहें । कलक कुल चारण कर में प्राण त्याग दूंगा ।
 ऐसा कहकर वे रत्नासन से उठकर उनका व्यान करने लगे । वही प्रकार
 जब पांच दिन बीत गये तो श्री श्री हरिव्यास देवाचार्य ने फूट होकर दली
 पड़े । हरिव्यास देवाचार्य ने कहा कि हेतु मैं लामे उड़ा हूँ । उन्होंने
 भैरव होकर वह देहा धी आनामुकुट श्री हरिव्यास देवाचार्य की दिव्य
 रूप में लामे लामे पाया । उन्होंने प्रसन्न होकर साष्टांग प्रणाम की ।
 श्री हरिव्यास देवाचार्य ने पंच हंकार कर श्री महाबाणी का उपदेश
 किया और नित्य धाम की स्थापना की । उन्होंने श्री हरिव्यास
 देवाचार्य की महाबाणी का प्रचार किया ।

५ - काव्य दोष

श्री हरिव्यास यज्ञानुस की पुनिका में लिखा है " इनके काव्य दोष " नीचे काव्य " काव्य तक लिखे हैं । चित्त में एक पद " श्री हरिव्यास यज्ञानुस " इस प्रकार काव्य दोष है और दूसरे काव्य का नाम " गुरुत्वं - माणिमात्र " है इसमें काव्य काव्य । नाम सुकृष्ट ५ की वेंनी । है उगाकर काव्य काव्य । नाम हीना सुकृष्ट २२ । एक है इस यज्ञानुस की मगधान के उदयन के पद नामा राम रामनियी में वर्णित हैं ।

" इनके काव्य दोषों का नाम " नित्य विहार पदावली है । इसमें श्री नामा रामरामनियी में श्री राधाकृष्ण के नित्य विहार के एक ही बीच पद है " गुरुत्वं में जादि में ही यह काव्य लिखी है - यथा " हस्तव वीर्य पदावली " काव्य संग्रह द्वार । चित्त करव ही यह पदावली पद नित्य विहार ।।

१ - श्री हरिव्यास यज्ञानुस की पुनिका पृष्ठ ३

श्री मत्स्य पुराणार्थ पदाभिज्ञानित वेष्णव रामकृष्ण एवं यज्ञानुस की उत्तम कथा कथावली -

२ - श्री हरिव्यास यज्ञानुस की पुनिका पृष्ठ ४ -

श्री मत्स्य पुराणार्थ पदाभिज्ञानित वेष्णव रामकृष्ण एवं यज्ञानुस की उत्तम कथा कथावली ।

६ - बंध परिणम

स्मरतिस्मय की की धापना क्यूँ ही । बापकी बेगी रह
उपासकी में बाप धरनीर थे देखी -

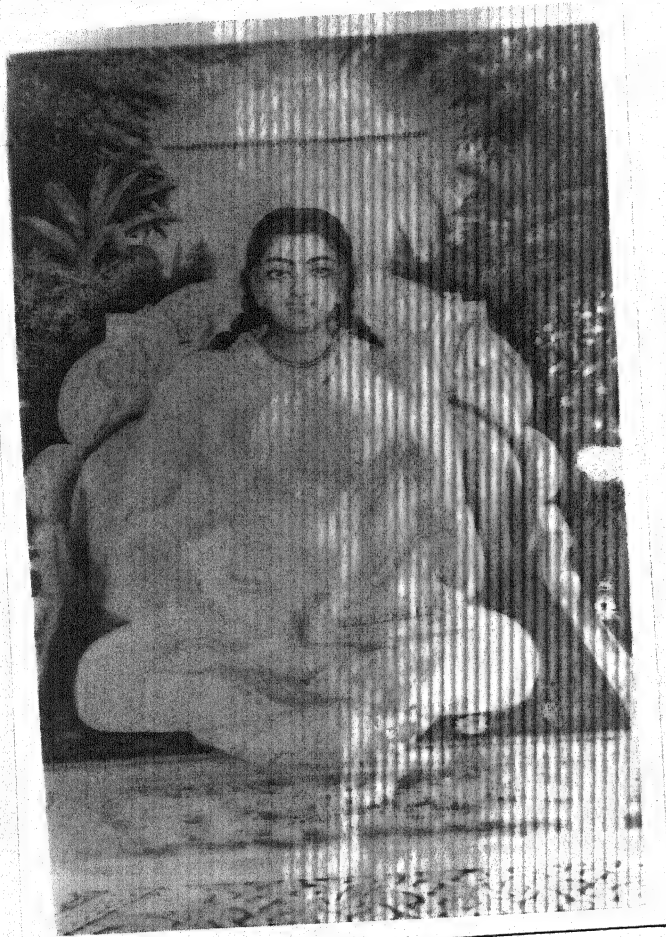
हे हरिनाम बना सबंधीर की परकी पर भेद लीं मन ।
सुर के नीचे न केवल के ऊपर मोचुर लीं लोचर लीं भा।।
हार फल सबंध धरनीर की नीर की नैक लामें नहीं लम ।
एक ही नीर है एक गिरी पर की हरिध्यास के बाद नीर मन ।।

उनके कम समय बना ग्रामादि के नाम का ठीक ठीक
पता लगा नकुं ललित थे । उन समय के नवास्थामन परम धरिण नीर
परिणत रहित लीं थे । वे अपनी मुदावस्था के ग्रामादि का पता हत्यादि
नहीं दिया करते थे । वे अपनी कीर्ति के निमित्त भी कोई काम नहीं करना
चाहते थे ।

बाप वशिष्ठ काय के एक वशिष्ठत्व प्रेक्ष दिवसुत के
थे । बाल्यकाल से ही की राधादेवस्वर प्रभु एवं उनके बाप (जब कुन्दावन)
में बापकी स्थापनाधिक निष्ठा की । इसलिए किसी कल्याण पूर्ण लीं की
बाप कुन्दावन - पुरा जगदी ।

१ - प्रकाशकीय दायित्व - श्री लीलाविहारी - माधुरिदास -

काव्यशार पुस्तक १



गुरुवर श्री हरिव्यासदेव जी

गुरुत्व

गुरु की सर्व शक्तियों की कुर्बानी कहा गया है। सर्वशक्ति के गुरु गुरु ही है। निर्गुण - समुण्डा के उपासकों में समुण्डा की शक्ति का परम मान किया है। श्री हरि के कृपे पर गुरु वहा-
यवा कर ली है, पर गुरु के लक्ष्य होने पर साक्षात् परब्रह्म की
सहायता करने में कामी है। सर्व प्रकार के प्रयत्न करके गुरु की प्रशंसा
करने का उपाय ब्रह्मना पाविले। गुरु की साक्षात् हरि की है।
का - कल और कर्त है निष्कल नाव पूर्ण गुरु की सेवा करनी
पाविले। श्री कृष्णजीस की ने साक्षात् के कारण में कभी गुरुदेव
श्री हरिप्रसादजी का "सकल कर्त के नाम" कह कर सर्व प्रथम
स्मरण किया कि उन्होंने कभी गुरु की प्रशंसा में हरिप्रसाद
सहायता प्रत्य की रक्षा की है। कृष्णजीस ने गुरु की नित्य
स्मरण कादि और कालि कहा है। उनके गुरु श्री हरिप्रसाद
देव की नित्य सभी कभी हरिकर में श्री हरिप्रसाद सत्कारी
के रूप में सेवा किया किया रखी है। वे ही कल

१ - प्रथम सुपरि हरिप्रसाद, सकल कर्त के नाम ।

द्वितीय पर कलविं कलविं, तीर्था विंविं नाम ।। - तीर्थाविंविं १

२ - का का श्री हरिप्रसाद सु, नित्य हरिप्रसाद नाम ।

तीर्था विंविं २५१२

कृताब्द के हैं^१। पर कृताब्दोत्तर की पूर्वी पर कर्त्तव्य होने पर
वाप भी उनकी कृताब्दोत्तर स्वरूप धारण कर प्रकट होते हैं। मर्त्य
के सुखादिओं के पाप भी वाप ही हैं^२। वापने की हरिप्रिया सत्परी के
रूप में प्रकट होकर रत्नों के प्रति नित्य विचार रख का प्राप्ति कर उनके
मन-मुरी की मर्त्य का दिया है। की गुरुदेव की सम्पूर्ण मुक्तों
की सुन्दर मुद्राणि के रूप में जीमायमान हो रहे हैं।

की स्वरचित्त्व ने गुरु की निर्गुण सम्प्रदाय का
वाचार्थ उत्तर उन्हें धर्मोत्तर मनवत्स्वरूप माना है। की हरिप्रिया देव
की निर्गुण सम्प्रदाय का वाचार्थ करने का वाचार्थ यहाँ गुणादीय कथा
वच-रक्त-रूप से परे निर्गुणादीय से है। स्वरचित्त्व निम्नार्थ सम्प्रदाय
के वाचार्थों की ही निर्गुण सम्प्रदायस्वरूप वाचार्थ कही है। अतः ही
वाचार्थ सत्त्वगुण रवीगुण और कर्त्तव्यगुण से समीक्षा कीति है। गुरु -
प्राणी का कर्त्तव्य गुरुण कर ले पर सब कुछ सुख ही जाता है। वेद
का वाच के वाचार्थ हैं कि किता गुरु के मनमान की प्राप्ति समीक्षा -
वाचार्थ है।

१ - यही की हरिप्रियासु निमित्त ही गुरु कि - हीताविर्गति २०१२

२ - का का की हरिप्रियासु मर्त्य गुण मनवत् ।

उत्तरा विप्रु हरिप्रिया प्रकट रूप धर्मोत्तर - हीता विर्गति २४२

३ - प्रकट किता विनि धार सुख कर्त्तव्य नित्य विचार - यही २५१२

४ - निमित्त मर्त्यकथ कर्त्तव्य, मर्त्य प्रार गुणारु - यही २५१२

५ - वाचार्थ की गुरु निर्गुण सम्प्रदायस्वरूप वाचार्थ हैं की वाचार्थमनवत् रूप-

६ - की गुरुनाम निर्गुण सम्प्रदायस्वरूप वाचार्थन की- है - हीताविर्गतिपृ०४१

- हैं की की यह नाम उपाय नहीं, की वाचार्थ मनवत् समीक्षा हीव हीव

रक्तमन हीव रक्तमन हीव परवाणी गुण हीव की की निम्नार्थ सम्प्रदाय

वाचार्थ वाचार्थ हीव, वही ही यह सुख कि कर्त्तव्य निमित्त नहीं की वाचार्थसु

की प्रकट हैं किता गुरु हैं - हीता विर्गति पृ००१०

७ - किता कर्त्तव्यमन हीव हीव किता कर्त्तव्यमन की प्राप्ति वाचार्थ

की की गुरु की वाचार्थ कि, वेदसु कर्त्तव्य हैं कि किता गुरु मनमान की

प्राप्ति नहीं - हीता विर्गति - पृ० २० ३२

रूप-रहितत्व ने " की हरिव्यास यज्ञाभूष " में सर्वत्र
गुरु की महत्त्व का नाम दिया है । किन्तु वे गुरु नाम का एक बार
ही उच्चारण करने पर भी राधाकृष्ण मंत्र के ही बार जप का फल
मिलता है ।^१ श्रुतिशास्त्रिका प्रकृति पर जो स्वल्प गुरु की धेरी का
कर लगी है ।^२ गुरु की हरि रूप से माया का वाक्य प्रकट कर श्रुतिशा-
स्त्रिक ज्ञान का विस्तार करते हैं । माया उनकी दाहि बाँकर उनसे प्रण-
कर्मों का संघाल करती है ।^३

क्याग के कारण जीवात्मा बांधारि माया नीच
रूपी नीच कर्माकार में गटकता रहता है । जब तक परमात्म-स्वरूप गुरु
ज्ञान का प्रकाश उसे नहीं भिजाता, जब तक उसका ब्रह्मनायक दूर नहीं
होता । काः काहे - रोहि - उठे - कैले निरन्तर परमात्म गुरु का
ही भक्त चिन्तन करना चाहिए । पूर्ण परात्मा गुरु एक ही नीच की
कीक रूपों में ब्रह्माकार बाराण करते हैं । की कुन्दाका मन्द के रूप में भी
ये ही प्रकाशित हो रहे हैं । की कुन्दा का नित्य विहार भी उन्हीं से
प्रकट है । कहेयः एक ही परमात्म नाम-वाणी नीच रूप में प्रकाशित
हो रहा है ।^४ गुरु कुन्दा है ही कुन्दाभाषना जल क्षीयभाषना का
रक्षक समस्त में जा रहता है ।

१ - एक बार हरिव्यास रत्ना किन्ही उचार ।

की की राधाकृष्ण की मंत्र कर्मा ती बार - हरिव्यास यज्ञाभूष पृ० ११ ३३

२ - लव रचित हरिव्यास ३, बाबावरण कर जप ।

जुल प्रकृति धेरी मर, श्रुति शास्त्रा काव ॥ हरिव्यास यज्ञाभूष ११ ४३

३ - रूप-रहितहरिव्यास ३, बापक हरिव्यास ।

माया का विस्तारणी, बाबु फोटा काव ॥ पृ० ५१ ४४

४ - जने की हरिव्यास मरि, रोहि की हरिव्यास ।

उज्ज कैल फिरत की - स्मास स्मास हरिव्यास ॥ पृ० ७१ ४५

५ - एक रूप हरिव्यास ३ है कीक ब्रह्माकार ।

की कुन्दाका मन्द की बरन्धी निर विहार ॥ पृ० ८१ ४६

६ - की राधाकृष्ण उवाचना की कुन्दाका पाव ।

की हरिव्यास कुन्दा किन्ही पूर्ण होव न जप ॥ पृ० ९१ ४७

की रूप रसिक के के अनुसार वास्तविकता यह है कि
 की हरि की विराट् सत्ता के रूप में की गुरु की विराट्मान है ।
 गुरु अपनी उपदेशों से शायक का मन सांसारिक मोह माया से हटाकर
 ईश्वरीयमान करते हैं । गुरु कृपा से ही शायक वाक्यात्मिक कथ्य में
 प्रसिद्ध हर गोविन्द के गुरु मान का मानन्दानुभव कराया है । इच्छा
 गुरु की कृपा ही प्रधान है गोविन्द की नहीं ।

त्रिगुणात्मक माया बाध है गुरु होने के लिए
 त्रिगुणाधीन परब्रह्म स्वरूप सद्गुरु की ही उपाय ग्रहण करनी चाहिये
 उनकी कृपा बिना की साधनामोक्ष के रक्षण की नहीं जाना जा सकता ।
 हरिध्यास के अर्थ नाम हरि का ही यदि जप्य ग्रहण कर लिया जाय
 तो कराट् लक्ष्मण से सहज ही मैं हुटकार मिट सकता है । का: स्वामि
 का है तथा उनके जड़नाम 'हरि' का ही चिन्तन करते रहना चाहिये ।
 श्री गुरु की मित्य उपासन, वन्द, कर्म, परमोदार और साक्षात्
 हरि स्वरूप है । वे गुरु नर मुनि क्या हीन जनों के सिद्धासन के लिए
 बारम्बार उपकार कारण करते हैं । श्री 'हरिध्यास देवाय नमः'
 मन्त्र का भी निरन्तर जप करता है उसे पुनरावन में निवारण करने
 वाले की प्रिया प्रियतम सहज ही मैं प्राप्त हो जाते हैं ।

१ - लीट रहे हरिध्यास कृत है । लीट रहे अनुष्ठान विधान ।

लीट मका वेदुण्ड विद्यास लीट रहार गोडी लीट मारी ॥

लीट रहे हरि धामर हरि में लीट रहे परमेश्वर मर्म ।

पूछि रहे पुन मैं सब ही हरिध्यास बिना धरि ही परमेश्वर विधान ॥

२ - स्वरसिक विचार ली श्री हरिध्यास बिना हरिध्यास ली ही -

३ - त्रिगुण एवं हरिध्यास की, और त्रिगुण एक मान ।

तामिन राधा छार ली, लीय नहीं पक्षाम ॥ वही ५०२॥३

४ - रे मन का लीट काट मैं और उपाय न निव ।

ली नाम हरिध्यास की मारी तथा ली निव ॥ वही २५॥२३

५ - मित्य उपासन वन्द कर्म, श्री हरिध्यास उपार । गुरु नर मुनि का-

६ - श्री हरिध्यास देवाय नम मन्त्र की का भी ।

कावरी की माये, भारी प्रियतम वीय ॥ वही २५॥३

कल्पदरु' की ममयत्कल्प' की हरिश्चात देवाय नमः
मन्त्र की श्रद्धा करने में काममें है। इसमें मुक्ति और सामान्य माक्ति
नहीं है। यह भी एक मात्र राजास्मिता विष्णु प्रेममक्ति है ही
सौरभूर्ण रक्षा है।^१ यह गुरु मन्त्र की मुक्तियों का चार है। किन्तु
इसका कलमन छिद्र की हरि की माक्ति विज्ञा निवाम्य जति है।^२
की गुरु की अजिवाकम्ब मान स्वयम् उदा जनावन एवं रक्त्य हीन
नित्य विराजमान रहते हैं। अन्य-मर्या है ये दशैव परि है।^३

की गुरु के लक्षण 'हरि' की महिमा मान करी में
ये भी वेति वेति कही है। उनके गुरु मान का साक्षात्मान करने
में केवल शारदा की काममें है। इस प्रकार की एक-रहित देव की ये
गुरु वत्स का निम्न-मिन्न रूपों में वर्णन किया है। उन्नीति हरि
और गुरु में निमित्तत्वान की कन्धर नहीं माना। इस वत्स और गुरु
वत्स एक ही है। ममदान की भी हीन निम्नागर्णों के छिद्र की
काम्य है, एक गुरु कुभा है तावक के छिद्र वत्स में ही मुक्त्य ही
जती है।^४

१ - हरिश्चात देवाय नमः का सम सुरदरु मादि ।

यामे नक्ति न मुक्ति है परा प्रेम का माक्ति ॥
हरिश्चात यत्तामृत ॥२

२ - हरिश्चात यत्तामृत - पृ० ३६। १२

३ - उदा जनावन एक एक वास कम्ब नहिं नाम ।

महा कल्पवर्णन का, यहाँ कावि हरिश्चात ॥

वही पृ० ११

४ - की हरिश्चात यत्तामृत पृ० १, ५२। ६२

५ - वही पृष्ठ ६६

हरि ऊर्ध्व कृष्ण का कर्ष रक्ता है । व्यास मक्ति का
विस्तार है । यह प्रकार हरिश्वाय नाम वक्त्र बुद्धि का सार है^१ ।
हरिश्वाय नाम कृष्ण कर्ष-वक्त्र राधा का वाक्य है । हरि का कर्ष
कृष्ण और व्यास का राधा है । दोनों की मिठाकर युक्त करि है^२ ।
भी हरिश्वायकी मन्त्रादित्य है - और स्वरसिद्ध के कृष्ण के नाम है -
कर्म श्रीमत् हरिश्वाय यत्त पीदक रत्न सुनाम ।

मन्त्रा दिव्य स्र निधि प्रसूट, रूप-रसिद्ध क्षिप नाम ॥^३

यौ बड़े बानी हैं और विन्नीति मन्त्रावाणी की रक्षा
की है -

मन्त्रावाणी मुक्त बानी रसिद्ध बानी विनि कही ।
मुक्त रूप कृष्ण सब दिन भी हरिश्वाय मन्त्रों चही ॥^४

भी हरिश्वाय यज्ञानु गुरु मक्ति और प्रेम का
वासर है -

रवि हरिश्वाय यज्ञानु वासर । भी गुरु मक्ति प्रेम की वासर ॥^५
रूप-रसिद्ध देव का कर्म है कि है का । तु हरिश्वाय
की मन्त्रों के स्वाभा स्वाभ के प्रदायक हैं -

रे का भी हरिश्वाय मन्त्र, वायक स्वाभा स्वाभ ।
मक्ति और गुरु प्रेम निधि वाणी का दम्पति नाम ॥^६

ये कहे हैं कि है का तु का है प्रेम होकर हरिश्वाय
का मन्त्र का । का तु निर्गुण का वाच होता वह कुंठे हुए की राशि
प्राप्त होती । -

१ - स्वर्ग कृष्णहरि मन्त्र वक्त्र, व्यास मक्ति विस्तार ।

रूप रसिद्ध हरिश्वाय की, नाम वक्त्र बुद्धि ॥

२ - स्वर्ग कृष्ण हरिपद वक्त्र, व्यास राक्षसि कर्षि ।
हरिश्वाय यज्ञानु - पृ० २५।३२

स्वरसिद्ध हरिश्वाय की, नाम वक्त्र कर्षिमान ॥

३ - हरिश्वाय यज्ञानु - पृ० २५।३
४ - हरिश्वाय यज्ञानु - पृ० २५।३
५ - हरिश्वाय यज्ञानु - पृ० २५
६ - हरिश्वाय यज्ञानु - पृ० २५।३

१ मन का ही प्राप्ति सब, नाबि, नाबि, नाबि हरिव्यास ।
 नाबि नाबि निर्गुण संग की सब पायी सब रास ॥^१

बी हरिव्यास के जिन धेरा कोई नहीं है । उन्हीं की
 कृपा ऐसी ही प्रियतम दोनों की प्राप्ति होती है -
 १ मन की हरिव्यास कि, धेरी नाबि न जीय ।
 तास कृपा है नाबि, यही प्रियतम जीय ॥^२

बी हरिव्यास का पूर्ण नाम देना चाहिए । उसकी
 कदाई कोई नहीं कर सकता । हरिव्यास के नाम पर करोड़ों की ब्योबाबर
 किया जा सकता है -

बी हरिव्यास नाम है पुरी ।
 बाकी की कहि सबे कदाई ।
 रूप रसिक हरिव्यास नाम पर -
 कीटिक बार बारै कोई ॥

प्रातःकाल हरिव्यास का जल नाम लीये । जिनका नाम पढ़े
 ही कलत्र पाप का जल है ।^३ हरिव्यास का मन्त्र कर किन्हीं महाबाणी
 का पुनरावृत्ति किया, जिनके बाधे नाम लीये है ही कलत्र पाप नष्ट हो
 जाये है -

जिनके बाधे नाम पारुते, सब पाप है नाश ।

बीधरा हरिव्यास नाबि, महाबाणी पु पुनरा ॥^४

१ - बी हरिव्यास यज्ञायुक्त - स्मरतिस्मृत पृ० ३१३

२ - बी हरिव्यास यज्ञायुक्त - " " " ३१३

३ - बी हरिव्यास यज्ञायुक्त - " " " पृ० ५३४

४ - प्रातः समय हरिव्यास नाम जल लीये सब कलत्रकारी ।

जिनकी नाम नाश पढ़े ही पाप कलत्र पाप नाश हो ॥
 हरिव्यास यज्ञायुक्त - स्मरतिस्मृत पृ० ५४

५ - हरिव्यास यज्ञायुक्त - स्मरतिस्मृत पृ० ६०

६ - विशिष्ट व्यक्तियों से रूप रसिकता का सम्बन्ध

१० - शास्त्रीय एवं व्यावहारिक ज्ञान

छोटा विंशति में कहीं कहीं के उत्कर्ष एवं सुन्दर भाव हैं और उनकी उद्भावनाएँ मनोहराणियों हैं। इसी प्रतीक होता है कि वे उत्कृष्टीय का शास्त्रीय ज्ञान रखते थे। अनुप्रास कंठार की परमार तथा लोक कंठारों का सुन्दर प्रयोग, लोक राग-रागिणियों का ज्ञान की रत्ना, भाषा पर अच्छा अधिकार आदि के प्रतीक होता है कि उन्हें अच्छा शास्त्रीय ज्ञान था। और उनका व्यावहारिक ज्ञान भी बढ़ावा था। ज्ञान का ऐसा एक उदाहरण देखिये -

लोकप्रिय केशरी कदम कुरांमंद कुंद

केसर कबीर केरि केसरि सुनत हैं।

नीलकिरी मलही भाठवी फोटी कंस में

कुली में छुंवाय जाय दुखी के छवन में ॥१॥

का का मापुरी के फोरन में फूमि मक फूमि,

सुनि सुनि धरत सुनका के का में।

रहे निहारों का मोहन को का नहा

रासिक फोरी के रूप वन का में ॥^१

* छोटा विंशति में प्रायः लोक पर पंक्तियाँ और भाव ऐसे हैं जो अन्य कवियों की रत्ना के समाने सुखी हैं - जो :-

धरत लोक फुडामा कापि ठाठ प्रवीन।

कपि च्यारी पुन के जाने रहे दीन ॥^२

१ - नित्य विकार पदावली - विचारन देव पुस्तक ७०-१४

२ - जेन मंथनी - स्मरतिभूषण

प्रीति की रीति रंगीली है कम ।
क्यापि बलिष्ठ होय पुत्राग्रानि दीन कनू भी नार्ने ॥^१

श्रवण उदाहरण देखिये :-

प्यारी तु कर्मेयी तिस पढ़ी ।
बिनही पनापि मेपि तिस ठरि मोह रहत निस कही ।
बिनही धार्थि नेनमान तुम कस क्यारति कही ?

—
हीन हीन कर्मेयी पढ़ी तिस तिस मोहमान ।
कस तिस नेन पुन नहिं कं कियोन वान ॥

पुत्रीय उदाहरण देखिये -

ठाठ उरकी उरकी प्यारी ।
मानि पुनन की परत उतारी ए कबहू नहिं प्यारी ॥^२
बी पर बारी उरकी पुन राफिके पुमान ।
तु मोल के उरकी है उरकी समान ॥^३

पुत्र्य उदाहरण देखिये -

कोन तन कीनी कस के मोदी ।
क्यार एया कसकर रहे निशिदिन के न परत पियोदी ॥^४

१ - बी तिस प्यारी - स्वरचित्त

२ - नित्यविहार पदावली - स्वरचित्त

३ - बिनही सखी - बिनहीठाठ । ४-नित्यविहारपदावली-स्वरचित्त

५ - बिनही सखी - बिनहीठाठ । ६- नित्यविहारपदावली - स्वरचित्त

देव - पद ४४

नाक बाध केरि छयो नीक मुँहान के संन^१।

एक कथ उदाहरण देखिये -

संका हें नीके हें ए संका हें नीके हें -

सुरंगन हें नीके हें ए भन खति नीके हें^२ ॥

एह सिंगार संका निर संका संका भन ।

संका संका हू थिना संका संका भन ॥

और स्वाधी पर महाकाव्यी का कुराण भी
निष्ठा है । एव रचित्वीय की उद्भावनायें की मनीहारिणी हैं और
एव कल्पनायें की निरासी हैं -

कपर सुवा के छीम छाप्पी कुराप्पी वन

कपल कनाप्पी वर पाप्पी पीन पन है ।

ऊरव वरन करि संझी प्रेम छे वर

करव करव मीन मंग की वन हैं ॥१॥

भेरे कानिमे मे निरखेकी यह वाक्य है

वाक्य हैं रवि-स- कानों कान है ॥२॥

एव उक्तारी कही थ्यारी सुन केरि में

नीकी नहिं छीम कानीन की पन हैं ॥३॥

१ - विवारी छत्तई - विवारीकाठ

२ - नित्यविहार पदावली - कपरचित्वीय - पद ५५

३ - विवारी छत्तई - विवारीकाठ

४ - नित्यविहार पदावली - कपरचित्वीय पद ५२

उनका काव्य उज्ज्वल, स्पष्ट, उत्प्रेरणा, अनुभव जाति
 लोक कोशरी है मरा पड़ा है । इसी प्रवीण सीता है कि उन्हें कोशर
 शास्त्र का अच्छा ज्ञान था । उनकी कल्पनाओं की क्यूटी है । राधा का
 सौन्दर्य वर्णन उन्होंने जो निम्न पद में किया है यहाँ कोई सांस्कृतिक
 ज्ञान का ज्ञान ही करता है जो उन्हें सबसे ही उज्ज्वलीट के कवि की
 शैली में छा रखा है -

सीता प्रभा की की की को, उज्ज्वली रूप खात ही ।
 कि कोश मानी मीन, बड़ी समझा रूपि मात ही ॥
 की मोह को पंख नयन, को उज्ज्वली कोश है कीर ही ।
 कुछ नातिनाथ विन्ध फल, विधि परमान बावो कीर ही ॥
 कुछ बुझीन नानि फल, बुधि पुन नालि नाथ ही ।
 किं किन्तु स्याम विधि नु, अति हीन रानी उज्ज्वली ही ॥
 कुछ कोश पुनीति नानि - कुछ स्याम विधि विधि ही ।
 कुछ कोश पर हीन देव नु, विधि पुन उज्ज्वली ही ॥^१

उनके लोक पद में हैं और राम-रामान्धी पद हैं ।
 उज्ज्वली बुधि मरु एवं सुन्दर है । इसी प्रवीण सीता है कि ये
 उज्ज्वलीट के नायक है । पुस्तक नानिनाथ का निम्न उदाहरण
 पुष्ट है --

नान नान का नरक नीर नीर,
 किन्तु नीर नीर नानि नीर नीर की ।
 सीता की नीर नीर नीर नीर नीर नीर,
 पुन पुन नीर नीर नीर नीर नीर की ।

राशि बिधि कांठा विराधे दौऊ छाठ गौरि,
 बंधि की रसाठ जैरी युक्त निहार की ।
 कसुन कसुन रूप रसिक निहारि में,
 पावत है में में आनंद न गौर की ॥^१

उनके काव्य में अनुप्रास की जो बटा बहारा रही है ।
 काव्य काचित्त्व उमड़ा पकड़ा है । उच्च व्यंजना मगुर है और पैयता का
 वापसाय चित्ता है । नित्य विहार पयावकी का निम्न उदाहरण दृष्टव्य
 है :-

गौर बंटिका में चिरा में बाह गौर में
 चारि की लीरि में बरीं चिरिं लीं ।
 मुर कल में बरी में बुडु बंटिका में -
 मुंछी में निछि लें मुर युवा - रीं ॥टेका॥
 पीठांवर में प्रीठ करि ररि मुर में,
 बंधि की कसुन रूप रसिक की की ॥१॥
 जोड़ जोड़ की जुधि कीनीं युम र्याम लामें
 राशि नु की नाम की रगार सब में की ॥२॥

ये मेष्टिक कुपारी ये लीर नवावाणी के प्रार कर्ता ।
 उनके महावाणी के प्रार प्रार का कता पर व्यापक प्रभाव था। चिनका
 कता पर व्यापक प्रभाव ही लीर चिके उपेक्ष की कता स्वीकार करती
 ही निश्चय की उनका व्यवहार लीकप्रि रता हीना । किमें व्यावहारिक
 ज्ञान की दायता ही बुरी जपि सुदीनान्य रूप का का प्रि ही उकवा है ।
 का में हम हय निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उन्हें कुम्हलीटि का हास्त्रीय रूप -
 व्यावहारिक ज्ञान था ।

१ - मुकुट उत्सव मणिमाठ - रूप रसिकीय - पुष्प ३६ पद १६

२ - नित्य विहार पयावकी - रूपरसिकीय पुष्प ७६ - ८० पद ६२

११ - सम्मान एवं परित्र

बाबीच ब्राह्मण भी कृष्ण की कापुर राज्य के की विकलापाठ की के मन्दिर के निर्माता थे । उन्होंने एक बापु की जमीन छेकर भी विकलापाठ की का मन्दिर बनवाया था । उनके कोई पुत्र नहीं था इसलिए जमी दोषित कुम्भिन की जो उस मन्दिर का देवा-पिकारी बनाया । की कृष्ण मित्र की सवाई नाचोपुर नये और राज्य की और के मन्दिर में आकीमक आकीविका बंनाने की बात उन्होंने सीबी की । परन्तु उधर ही उनका देहावसान हो गया । कुम्भिन के समान मन्दिर में ही पुकारी थे उनका नाम स्मरलिक की था । वे शासन निष्ठ शास्त्रिक ब्राह्मण थे । उनके सदाचार के कारण कुम्भिन की और उनके पुत्र पीत्र छी उनका मान सम्मान करते थे । कृपाकल्प-वह आदि ग्रन्थों के रचयिता भी स्मरलिक की वे आकीवन मेष्टिक ब्राह्मण पुत्र का पालन किया । उन्होंने सांसारिक व्यवहारों से मुक्त रहकर निरन्तर भी स्वामात्मान का गुणमान किया^१ ।

१ - की कृष्णराय मणिनाथ मुनिका पुष्ठ ३

कृष्णरायराय देवान्नाचार्य पण्डीरथ ।

१२ - गीताविज्ञान

जिन ग्रन्थों में श्री हर्षसिन्धु की का कविता का समय अनुमानित है १०६० संवत् माना है । श्री हर्षसिन्धु के भाषाया श्री - हरिव्यास के पुत्र के भात्र थे । श्री हर्षसिन्धु ने कुन्दावन भाषाया "के कन्द में रचना गुरु संवत् १०६० कलताया है :-

पंचराष्ट्र सत्वाख्या, पाशोत्तम जातीय ।
यह प्रथम पुरन मयी, कुन्दावन दिन दीव ॥

जो हर्षसिन्धु के श्री ने हरिव्यास महापुरुष की रचना की थी उस समय श्री परशुराम के भाषाया विंशत्य पर विराजमान थे । उनका समय श्री पट्टे परशुराम के भाषाया पर विंशत्य संवत् १०६० तक माना जाता है ।^३ इस प्रकार कुन्दावन भाषाया में उत्तिष्ठति श्री हर्षसिन्धु की का समय संवत् १०६० युक्तियुक्त प्रतीय होता है ।

१ - गीताविज्ञान - श्री कुन्दावन भाषाया हर्षसिन्धु पुस्तक ३४ - ८२

२ - श्री गीताविज्ञान - श्री कन्द - प्रकाशक उरण पुस्तक ३ //

द्वितीय अध्याय

रूप रसिक देव जी का साहित्य

स्व रक्षित्व की का वांछित

साहित्यिक विचार

स्व रक्षित्व देव के ग्रन्थों में बर्णित है। इनके ग्रन्थों का विचार अन्य साहित्यिक ग्रन्थों में नहीं मिलता। इनोंने साहित्यिक कौटिल्य के बर्णित व्यास व्यास, यज्ञ उत्सव विचार, तीक्ष्ण विचार और निम्न विचार पदावली लिखे। जिसका विचार ग्रन्थ से दिया जा रहा है। व्यासका यह की प्रति उपलब्ध नहीं है। बर्णित व्यास व्यास में उन्होंने अपने गुरु की बर्णित देव के गुरु का व्यास करते हुए उनके का की भाषा गाई है। यज्ञ उत्सव विचार विभिन्न उत्सवों की भाषाओं की भाषा है उनमें अन्य उत्सवों का वर्णन है और उनमें व्यास व्यास के दो का वर्णन है। तीक्ष्ण विचार में तीक्ष्ण तीक्ष्णों का वर्णन है।

पाँच नैजरी पाँच विचार, सत्तरी पाँच पाँच सुभाष।

या प्रकाश विचार सुभाष, भिन्न भिन्न सुभाष सुभाष ॥ ॥

निम्न विचार पदावली में व्यास व्यास के विचार सत्तरी पदों का वर्णन है।

१. व्यासकात्मक विचार :

व्यासकात्मक ग्रन्थों में स्व रक्षित्व देव और इनके ग्रन्थों के सम्बन्ध में कोई सम्बन्ध नहीं मिलता। इनके ग्रन्थों की न तो कोई व्यासका ही पूर्व न कोई तीक्ष्ण लक्ष्य हुआ। देव व्यासका में तीक्ष्ण विचार ही सम्बन्ध के ग्रन्थों में विशेष जाका रखे हैं। बर्णित व्यास देव की व्यासका निम्न व्यासका का विचार का विचार ग्रन्थ है और स्व रक्षित्व देव में अपने गुरु की बर्णित देव की विशेष वर्णन, प्रार्थना की है और उनकी व्यासका का भी गुरु गान किया है।

स्व रक्षित्व देव ने व्यासका के व्यास का प्रमाण दिया था उत्सव व्यासका प्रसार दिया। अतः व्यासका के व्यासका का व्यासका, व्यासका ० व्यासका व्यासका के निम्न व्यासका विचार और साहित्य विचारों, विचारों में इनके सम्बन्ध में कुछ विचार मिलते हैं। व्यासकात्मक ग्रन्थों के व्यासका व्यासका के व्यासकाओं में व्यासका विशेष व्यासका है और इनके ग्रन्थों की व्यासका व्यासका है।

१- श्री तीक्ष्ण विचार की स्व रक्षित्व व्यासकात्मक व्यासकात्मक व्यासकात्मक

३ - गुण्य परिक्रम

१ - हरिष्यास यज्ञाग्न

हरिष्यास यज्ञाग्न स्वामी स्मरदिक्रम द्वारा प्रणीत
 स्वात्मक गीत काव्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि हरिष्यासदेव
 की "हरिष्यास यज्ञाग्न" प्रकट रक्ता है। सन्वत्सर में गुरु की
 उपासना करना एक परम्परा थी और चारणा थी कि बिना गुरु
 की कृपा के न ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है और न कभी उपास्यके
 का वाग्निज्य ही प्राप्त हो सकता है। सन्वत्सर में यही चारणा
 थी। उन्होंने कभी गुरु की हरिष्यास देव किन्हीं निम्नार्थ सम्प्रदाय
 के महान् गुण्य "महावाणी" का प्रणयन किया उनके यज्ञ की भाषा
 इस गुण्य में गार्ह है। उनके गुरु की उनकी दलीन के काने बाँटे,
 कुष्ण मणि में वाष्पाक्षि करने बाँटे और वस्तु मार्ग की काने
 बाँटे थे। बिना गुरु की कृपा है कौन छंदार चानर है पार नहीं हो
 सकता है, इस सम्पूर्ण गुण्य में कौन अन्य विषय न होकरके गुरु
 की महिमा का ही मान है। इस सम्पूर्ण गुण्य में उनके गुरु की
 हरिष्यास देव के यज्ञ तथा महिमा का मान है। इस गुण्य के प्रारम्भ
 में ही की स्मरदिक्रम में लिखा है कि "हरिष्यासदेव यज्ञ कृत्त चानर
 है और उद्यम की कर्माँ उन्होंने हकी किया है। स्मरदिक्रम लिखते
 हैं :-

- की हरिष्यास हरिष्यास रूप किन्हीं कृपा बनाई।
- की हरिष्यास देव यज्ञ कृत्त चानर लिखा काई ॥
- काने काव्य सन्वत्सरा विधि की उद्यम समुदाई।
- युक्त रत्न बाई यह गार्ह रूप-रहित फल गार्ह ॥

१ - की हरिष्यास यज्ञाग्न - स्मरदिक्रम - पृष्ठ १ - १

जी हरिध्यास ने साधारण भोजन करने पर ध्यास के व्यवहार के बहुत लोक प्रचार की वाणी और लोक प्रचार के मुन्दी का निर्माण किया है कि प्रचार समुद्र के एक ही पत्ती जमी जमी बीच पर छे है उही प्रचार लोक ध्यास जमी जमी रूपि के अनुसार उनके मुन्दी से माय एवं साकरी प्राप्त कर छे है -

“ बहुवानी वह मुन्दी छि, काली बार न बार ।
 रूप रसिक हरिध्यास के घर ही की ध्यास ।।
 जमी जमी बीच पर, छे कीछ छे वाय ।
 रूप रसिक महा विन्नु की, कहा कहा घटि जय ॥”

स्परधिलीय का कला है कि हरिनाम बिना ध्यास कि मुन्दी में वाता है की वह उनके किरी काम का नहीं है -

“ वापस हूं किरी मुन्दी में ध्यास बिना हरिनाम ।
 रूप-रसिक छे की, की पेर नाहिं काम ॥”

कमि स्थान पर लोक प्रचार के मछ हैं परन्तु हरिध्यास के की मका की दीप्ति पूर की है :-

“ मछ मछ एवं की गिरी, जमी जमी छोर ।
 स्परधिलीय हरिध्यास की, मका दीप्ति पूर की ॥”

बीधुध्या की छीछा कि दीप्ति की है उही धुध्या-छीछा का वर्णन की हरिध्यास के की सबसे छि कहते हैं :-

“ एवं छीछा धुध्या की, की किरी छाया की ।
 रूप-रसिक हरिध्यास व, केव सका की छीय ॥”

१ - हरिध्यास महापुत्र स्परधिलीय पृ० १-२-४

२ - “ “ “ “ ५० २ - ७

३ - “ “ “ “ ५० २ - ८

४ - “ “ “ “ ५० २ - ९

की कुन्दावन कुछ सब सब का सार है जिसकी वह भिन्नता
है उन पर ज्वार कृपा है -

“ की कुन्दावन बहुत कुछ, है सब सब की सार ।
स्पर्शिक जिसकी भिन्न, तिन पर कृपा ज्वार ॥^१

जिसे प्रसार से बाधक प्रेम करता है और जो प्रसार की
हीनता करता है उसी प्रसार हरिश्चासदेव ने जो प्रसार की हीनता का वर्णन
किया है -

“ की हरिश्चास हठावली, त्यों त्यों ठाढ़ बाव ।
ठाढ़ हठावली ठाढ़ की, करव हवा प्रविभाव ॥^२

स्पर्शिकीय का कर्म है कि कर्मका उन है न की
की गति हीन है और न के भाव की गति हीन है । हरिश्चासदेव
ही उस भाव की वर्णन है -

“ कर्मों जाने मन पड़े, न के जाने भाव ।
स्पर्शिक हरिश्चास की, उन की है परभाव ॥^३

बीज्यास हरिश्चास की का नाम एक बार भी जता है -
स्पर्शिकीय उस पर उन, न, न ज्योहावर कर भी है -

“ की बीज हरिश्चास की, नाम की ज्वार ।
उन, न, न का ऊपर, हीन त्यों युवार ॥^४

१ - हरिश्चास यज्ञपुत्र - स्पर्शिकीय	पृ०	३ - १६
२ - " " "	पृ०	३ - २०
३ - " " "	पृ०	३ - २५
४ - " " "	पृ०	४ - ३०

कोई बाहर व्याप्त है, कोई भीतर व्याप्त है परन्तु
हरिव्यास देव की समस्त स्थानों में व्याप्त हैं - इनके समान और कोई
नहीं है -

स्वरसिद्ध हरिव्यास तु, इनकी सम की और ।
कोउ बाहर कोउ भीतर, ये व्याप्त सब ठौर ॥^१

जिही की बात कह, जिही की पन्द्रह नाम ठीक
है परन्तु हरिव्यास की देव की बात सम्पूर्णविषय सम है -

काशु की बात पंच दश, काशु की बात बात ।
रूप रसिक हरिव्यास की, बिही दिव्यावाट ॥^२

हरिव्याससु नाम हरि के ही रूप है जिस माया का का
में विस्तार है सब भी बुझाये पेटों की फोटी है -

रूप रसिक हरिव्याससु नाम रूप हरि राय ।
माया का विस्तारणी, वासु फोटीस माय ॥^३

इस माया है सबके प्राण जो रूप हैं वरुणिर माया की
गुरु की हरिव्यास की काशु मका कर -

रूप रसिक सबकी जो, मा माया की प्राण ।
वासें तु हरिव्यास पवि, माया गुरु ममवान ॥^४

१ - श्री हरिव्यास यज्ञाश्रम - रूप रसिकस्य पृ० ४ - २५

२ - " " " " " पृ० ३ - २६

३ - " " " " " पृ० ५ - ७५

४ - " " " " " पृ० ५ - ७७

रूप रक्षित की का कथन है कि सबकी सभी सभी कार्य
मित्र लगते हैं । वेरा कार्य यही है कि तु हरिश्चास के सुन्दर नाम का
मन्त्र कर -

रूप रक्षित सबकी ली, सभी प्यारे काम ।
तु हूँ किसी काम की, नहि हरिश्चास सुनाम ॥^१

कुन्दावन में राधाकृष्ण उपासना है । श्री हरिश्चास
कृपा के बिना कोई कार्य पूर्ण नहीं हो सकता -

नैष्ठिकवर्तिनः कृष्णराधाकृष्णवर्तिनः नैष्ठिकः

श्री राधाकृष्ण उपासना, श्री कुन्दावन नाम ।
श्री हरिश्चास कृपा बिना, पूरणा होय न काम ॥^२

श्री हरिश्चासके की है लोक व्यवहार है । हरिश्चास
यज्ञाभूष में नित्य विचार का वर्णन हुआ है -

एक रूप हरिश्चासनु, है लोक व्यवहार ।
श्री कुन्दावन चन्द्र की, कसौ नित्य विचार ॥^३

हरिश्चास यज्ञाभूष में रस-रंगित का वर्णन है श्री
जयिकारी की ही वर्णित की का सखी है -

जयिकारी दिन की कहुं, पावे यह रस रंगित ।
रूप रक्षित पुत्र नहिं लहे, उठटी है निररंगित ॥^४

१ - श्री हरिश्चास यज्ञाभूष - रूप रक्षितमेव पृ० ६ - ५२

२ - " " " " " पृ० १० - ६३

३ - " " " " " पृ० १० - ६४

४ - " " " " " पृ० ११ - १६२

२ - बुद्धुत्सव मणिमाठ

बुद्धुत्सव मणिमाठ नाम है ही फ़ाट होता है कि यह
गुन्य कीक उत्सवों की मणिमाठ की माठा है । इस गुन्य में कान्य
होरी गादि बर्ष भर के उत्सव मणीमाठों का मनीकर उत्सव वर्णन
किया है । उपर्युक्त सभी प्रसिद्धों के कान्य में मणिमणना का उत्सव
इस प्रकार है -

पद कान्य पर्वत व्याजि होरी बुन्दर । होर व्यारि वाराह एक
पद वेरु रदर ॥

फरु होर पर व्यारि व्यारि व्याय बुदीया पद । पीवह बनकी कन्य
राम्य नरहरि के घर मर ॥

कट विहार के व्यारि व्यारि पद रम्य के बुनि । बरवा रिसु बैदीय
पर्वत बिंदोरी के बुनि ॥

व्यारि पवित्रा मानि राखी के व्यारि ही । कर्वि कर्वाह ठाठ -
श्रिगु की उन्दीय ही ॥

कट पूजा पद एक पांच पद कर्वि बाधन । कट ऊपर पद पांच कर्वाह
ले बुधक ॥

है बांकी पद व्यारि बिने कर्वाह के नीके । कट पद राय बिहाय
विवाद का व्यारी नीके ॥

कालिक ली पद एक राम्य बीबीत्सव के बुनि । गिरि पूजा पद व्यारि
रम्य गिरिपारन बु के बुनि ॥

व्यारि प्रवीचि बिनारि एक बुद्धी बिहाय रहि ।

राधापूजा बिहाय मल्ल कोठ एक रजिह ॥

पद बिनारि बुनि व्यारि बावही बिजा कैर ।

एक बु पद विद्वान्द बीन ली वज्र ऊपर ॥

बीका - बुद्धुत्सव मणिमाठ यह मरन सुमंजस रूप ।

रूप रचित उर मरत ही होत स्वल्प कल्प ।

है वज्र पर नव सुख बुनि बीरानने मनि ।

बुद्धुत्सव मणिमाठ की संस्था हवनी मानि ।

कान्त २५, कीरी ४१ कीर ४ कूली ४ कान्त कुर्वीया
४, क किकार ४ रमाया ४ बर्मा ३३, विहोरा कीर दीप २०,
पवित्रा ४, रसावन्त ४, ठाठू की बर्मा ३६, प्रियाय की बर्मा
३०, क पुवा १, रंभेवी बर्मा १७, धांकी २, विकीत्तम २,
हरद १०, काविक १, दीपोत्तम ७, नीवकी पुवा ११, प्रवीण ४,
कुली विवाह १, कुल विवाह १, मल्ल माल १, विजय दावरी ५,
सिद्धान्त १ इस प्रकार कुवादि में २६० पद हैं ।

उपराह में बीराम बर्मा १०, बी कालान्विनी की बर्मा
६, नरिहकान्दी ७, बाग्य आन्दी ५ इस प्रकार २८ पदों का संकलन
है । इस प्रकार २२० पद ही आते हैं । बाप कियों के बाप पाठे ७
पद की परिशिष्ट में रख दिये हैं ।

बी पुण्ड उत्तम मणिमाह के पुण्य दो दोहे दोहो -

पुण्य सुगिरि बी मुल चरन, हल चकल कलाह ।
वायु कुमा-कल कल की, मुकुत्तम - मणिमाह ॥
करि जारम्य कान्त से, ध्वंका दादहि राहें ।
रूप रहिक या नाम की, जो कल सत्य कलाह ॥

दीर्घोत्तम में रागिका ल्य होन्वी निहारिये -

की नीह कु पंचव नान, मु कुडकि बहि मे कीर ही
सुन नाहिका पर विम्व फल, विहिं परमनि बायी कीर ही ॥
सुन सु फोडनि ननि कलक धति सुन बलि आग ही ।
विहि किंकु स्वान पिडीन मुबहि हीन रलो कलाय ही ॥
कलक सुष्ट सुमीति ननि - सु दीव विविन विनाय ही ।
कुन कल पर हीन केन मु विजया सुष्ट सुलगाय ही ॥

१ - पुण्ड उत्तम मणिमाह - रूप रहिकीय पुण्ड दोहा १ व २

मुमन सु मुमिव मुम कीं बहु मांवि वर हवि देव री ।
 जटि जिंजी नुर सु पायनु, के के सुव देव री ॥
 मर हरि मांनिक विविन की, वर वरनि जाव न केन री ।
 बसि ह्य दसिक निहारि मैदान, पारिमें उर देन री ॥^१

पूठ डोठ में कुम्हा राधिका का सुन्दर वर्णन -

देखिये :-

फूठे फूठे राखत हैं फूटन की डोठ पर,
 फूठे फूठे फूठ की माछा उब पछिरे ।
 फूटन के मुमन कान फूठे फूटन के,
 फूठे फूठे फूटान की फूटें हवि बधरे ॥
 फूठी प्यारी कैं जाव फूठ के करतै जाव,
 फूठे प्रिय रीफि भीषे के रंग गहरें ।
 फूठे फूठे देखि ह्य - दसिक प्रवीन बौड़,
 फूठे में भीम पर माकुरी के बधरे ॥^२
 कपारि ह्यु पिलारीत्तव का वर्णन देखिये -

कान कान कान गरब और धीर,
 विपुलानि होरि धारै कुव कान और की ।
 केशि भीषी कलानि पपीहनि की भीषी भुनि,
 पुनि पुन सनी भस्मी बहु और की ॥

१ - मुख्य उत्सव पण्यपाठ - उपरसिक के पृष्ठ ० २६

२ - " " " " " " पृ० ३३ पद ७४

जबि किन कांठा विराजि दौर छाड मोरी,
 जबि की रसाड मोरी दुख किछीर की ।
 कहुन कहुन रूप रसिक निहारि भै ,
 पावत है भै देन आनंद न मोर की ॥

रूप-रसिक ने कंठ के व्यापारियों को परीमुख कर
 रखा है । ठीक ठाव की त्यागकरने छान निहारी को देखि ही रखी
 है -

छोवन छाड की मजारी ।
 ठीक ठाव कुं जानि सवे जबि निरुपव छाड निहारी ॥
 उन बाजार छाट दोन दोनान, सोवा करव न छारी ।
 मरत कली-निश कुम मंडारनि देव न एक छारी ॥
 मरत मरत वायव है ली भै जनि ननि ननि ननि ननि ।
 रूपरसिक रूप छीन छेप्टे , कंठ के व्यापारी ॥

पुस्तकत्व मणिनाथ में अंत माध मुक्ता ५ की पंक्ती
 है छानकर अंका आवती । माध छीन मुक्ता १२ ३ तक के श्रीमन्मान
 के उत्सव के पद माना रामरामनिवाँ मणित है । इस बाजार में छिडा
 है -

है मरत परनव मुक्ता पुनि मोरानमें जानि ।

पुस्तकत्व मणिनाथ की, संख्या ली जानि ॥

अर्थ की कन छकर नी ली मोरानमें हन है ।

पुस्तकत्व मणिनाथ के उत्तरांत में श्रीरामकनोत्सव का वर्णन
 है । अर्थ प्रतीत होता है कि उनका पुष्टिकीर्ण व्यापक था । मुक्ता के
 बाध राम का की मुक्ता मान लिया है । रास रसिक जो के कन कीकन

१ - पुस्तक उत्सव मणिनाथ - रूपरसिकत्व पृ० ३६ पद ६६

२ - " " " " " " पृ० ३३ पद १६

हैं। उन्हें ये भविष्य भविष्य कल्पे हुए ज्ञान बताते हैं। यही राम-राधा
व्यस्य के घर जन्म लेते हैं :-

भविष्य भविष्य, भव जाकी जन्म उबारि कै,
 केवहु निधि हैं जाकी भव नाहि ठेनि मे ।
 धिब हू समानि के जरावि केन छावि छि ,
 जावि ही जगानि निज छावि करेनिधि ।
 रहित जान निज बीरानि जगत् नहि,
 कुल सुकृप निज नाम कां भविष्ये ।
 कस है जावि कर माता छ छे रमावाता,
 सोई छाता नृप हू विहारि नृप देनिधि ॥^१

छोटा विरोधि

प्राचीन काल से ही साहित्य में एक ऐसी परम्परा थी जो
 जाती है जिसमें स्तुतियों, पद्यों वगैरह विषयों की संख्या के अनुसार
 रचनाओं का नामकरण किया जाता रहा है - छोटी वाद्यविद्या, ^२
 कुरुक्षेत्र, निज बीरानि, ज्वालीय छोटा जावि । इस परम्परा में
 छोटा विरोधि भी जाती है। इसमें वगैरह विषयों की संख्या बीस है।
 ये मंजरी, विद्या, माधुरी और कुछ बार नामों में विभाजित है।

श्री कपराधिक देव की ये "छोटा विरोधि" के प्रारम्भ में ही
 श्रीपाद्यों में सम्पूर्ण छोटाओं की कुलजाति का उल्लेख है कर दिया
 है :-

पाँच मंजरी पाँच विद्या ।
 माधुरी पाँच पाँच कुल नाम ॥^३
 या प्रार विरोधि कुलार्ध ।
 विन्य विन्य पुनि क्वं पुनार्ध ॥

१ - सुन्दरानु नृजिनात - कपराधिक देव पू० ११३ पद ७

२ - छोटा विरोधि - कपराधिक देव २१२

३ - विन्य विन्य पुनि क्वं पुनार्ध ॥

ये जाने लिखते हैं -

नम लिखता हूँ मंत्रों के ।
 रचित हूँ यह प्रेम कहानी ॥
 मंत्रों में पाँचों गुण गुनिते ।
 पंच विद्यायें तथा पुनि पुनिते ॥
 नम मायना नित्य रवि कलिते ।
 कुरु विद्यायें पाँचों नों कलिते ॥
 नम मायुरी कुरु अनुकूल ॥
 नानावर्ण मायुरी सुख ॥
 मुन्दावन विद्यायें नम हरि ।
 ए मायुरी पाँचों विद्या में हरि ॥
 पुनि पुन पाँचों पुन पुन यह नामा ।
 चार धर्म स्वरूप सुखनामा ॥
 लोरी पुन पंचम परिणामी ।
 लोरी विद्यायें हरि विधि कहानी ॥

श्री लोरी विद्यायें की विषय सूची एवं प्रकार है :-

१ - नम लिखता मंत्रों , २ - नम मंत्रों , ३ - रचित मंत्रों ,
 ४ - हूँ मंत्रों , ५ - प्रेम मंत्रों , ६ - नम विद्यायें , ७ - मायना
 विद्यायें , ८ - नित्य विद्यायें , ९ - रवि विद्यायें , १० - कुरु विद्यायें ,
 ११ - नाम मायुरी , १२ - मायुरी मायुरी , १३ - मुन्दावन मायुरी -
 १४ - विद्यायें मायुरी , १५ - हरि नम मायुरी , १६ - चार - पुन ,
 १७ - धर्म पुन , १८ - स्वरूप पुन , १९ - सुख पुन , २० - लोरी पुन ।

१ - लोरी विद्यायें - २५-रचित पृष्ठ २ । ३, ४, ५

छाँटा बिछोँटा की १२ छाँटाई पत्र में हैं और एक
 सिद्धान्त माधुरी ग्रन्थ में। छाँटा बिछोँटा की सभी छाँटाई में शीर्षक
 के अनुसार विषय का प्रतिपादन हुआ है। कन्दों के प्रयोग का जहाँ तक
 सम्बन्ध है प्रायः दोहे का प्रयोग हुआ है। अन्य कन्दों का प्रयोग
 स्वल्प है। सिद्धान्त माधुरी में नित्य विचार का सिद्धान्तिक श्लोक
 हुआ है। श्लोक में छंद का कल्पना बाधा उत्पन्न करता, इसलिए इस
 प्रकरण में कम-कम का प्रयोग है। इस पत्र की प्रकाशना कल्पना प्रौढ
 तथा प्रांथ है, सम्पूर्ण ग्रन्थ की भाषा पुष्ट और प्रांथ है।

छाँटा बिछोँटा में प्रायः शीघ्र पद पैरियाँ और भाव
 ऐसे हैं जो कल्पना शक्ति की रक्षा के लिये कुछ प्रतीत होते हैं - भी -

यस छोक फुलानी, यद्यपि छोक प्रीति ।
 यद्यपि प्यारी प्रेम है, जाने है रह दीन ॥^१

प्रति की रीति रंगीली है जाने ।
 यद्यपि यद्यपि छोक फुलानी दीन अनुपमा माने ॥^२

छाँटा बिछोँटा में कहीं कहीं कुछ उत्कर्ष पाये हैं। छाँटा
 बिछोँटा में कहीं कहीं मनोव्यक्ति - अनुभावनाएँ हैं - कुछ कल्पनाएँ भी
 निराली हैं -

नुर नुर नुर कानि मैं कानि कानि रंग नीति ।
 नर कन विनु मैं ननु सोवागिनि के नीति ॥^३

१ - छाँटा बिछोँटा - स्वरचित के - श्री प्रेम मंथरी पृष्ठ ६ - २

२ - श्री रचित नीराली

३ - श्री रचित मंथरी - स्वरचित पृष्ठ ७ - ६

नित्य विहार पदावली

नित्य विहार पदावली बहुत सुन्दर रक्ता है। इसमें १२० पद हैं लेकिन जो दो प्रतियाँ मिली हैं उन दोनों में केवल ७२ पद हैं। आरंभिक दोहे से पदावली के १२० पदों की पुष्टि होती है। आरम्भ में लिखा है -

इस सत्सीय पदावली, वाली संशुद्ध सार ।

लिखन करत ही यह मन्त्र, जिस पद नित्य विहार ॥

यह प्रोट रक्ता है। इसी भाषा की परिभाषित है और इसमें मान मान्यार्थ मिलता है। इसमें नित्य विहार का वर्णन है। इसमें अन्य विन्यास सुन्दर है। साहित्यिक स्वात्मन्ता इसमें उपलब्ध होती है। और राम रामनिर्वा में यह काव्य लिखा गया है। राम भैरव, रामदेव नंवार, राम रामनिरि, राम छल्लि, राम निनाथ, राम पिठाक, रामकलावरी, राम पनासरि, राम धारंग, राम नाट, राम कल्याण, राम अनरी, राम कडानी, राम केवारी, राम कंकरीटी, जादि के और राम इसमें जाये हैं। इससे प्रतीत होता है कि यह राम रामिनी का भैरव काव्य है।

काव्य गुण की दृष्टि से यह सर्वोत्कृष्ट काव्य गुण्य है यद्यपि स्लेयर में यह छोटा है। इसमें कालों की भरमार है। कथावली की कवि कविता है, जो स्लेयर की कथा सुन्दर बताती है। अन्य पद्यों का पैरों की कविता है।

इस रचित देव का कल है कि राधाकृष्ण समकला ही सुकल-के सुकल है। राधाकृष्ण भ्याना ही सुकल है -

राधाकृष्ण राधाकृष्ण समकिली सोई सुकल ।

यादि पर और नू समकिली सोई सुकल ॥ टेक ॥

राधाकृष्ण राधाकृष्ण भ्यायवी सोई सुकल ।

इस रचित हीर और कवरी नहीं सुकल ॥

स्वामी और स्वाम दोनों रंग में भीने हुए हैं। उन कुंठ-
किशोर की बगि के ऊपर रूप रसिक केम न्योहावर ही जाते हैं -

स्वामी स्वाम बोले रंग भीने ।

ठाठे कुंठ कदम की हथियां गर गर बहियां दीर्घ ॥ टंक ॥

बह बोली बह मुल मुल कोकिल बाह तांन पिच्छि गवि ।

मृकाका फल्यो फल फल्यो धारं राम पुष्पि ॥

तरा पंही मुल नीर बेहि गिर बगिच मये सुन बाही ।

जुल किशोर और बगि ऊपर रूप रसिक बलि जाही ॥^१

हमें कूटी कल्पनाये हैं। राफिका के केरि में भी
मोती लगा है बगि की देखा प्रवीत होवा है कि - बह मोती नहीं है अपितु
मन मोहन का मन है :-

बगर पुषा के लीम छाग्यो कुराग्यो तप

तपत समाग्यो उल भाग्यो बपी नपन है ।

बरण बरन करि बंध्यो पुन ऐल वर

फरव करव मौन मंत्र को मन है ॥ टंक ॥

भर बागिच में निहर्षी यह बाग्य है

ठाक्य है रति-रस-काजी मन है ॥

रूप उक्कारी ली प्यारी तुल केरि में

मोती नहीं होय मन मोहन को मन है ॥^२

मेघों की किल्लाणावा का कानन कहे ह्ये मे छिन्ति हैं -
कि ये दो कुरु के दोष हैं -

१ - नित्य विहार पदावली - रूप रसिक केम पृ० ३३ ३३

२ - " " " " पृ० ३६ ३३ ५२

अंका तें नीके हैं ए अंका तें नीके हैं -

दुरंतनीं नीके हैं ए मेन बाति नीके हैं ।

एन सुत की के हैं ए भन सुत की के हैं

ए नीर बिह की के हैं करन हरि की के हैं ॥टेका॥

मीन सर की के उमे ३३ दकी के रूप

रसिक रही के प्रांन बीबान ए की के हैं ।

टोनी ए की के हैं निमीना मीली के हैं

बिर्जीना रति की के हैं नि बीना दे की के हैं ।

हे स्वाम कि बिा की तुमने बीबीकार बिा हे उसमें
राधे व के नाम का रकार कहा हे -

मोर बीडिका में बिनार में बाह बीडर में

भारि की बीरि में उरीहं बिर्जि की ।

भूर करन में बरी में बुडु बीटिका में

मुली में निठि री मुर बुधा -रहे ॥टेका॥

बीबीकार में प्रेम करि रारि मुर में

बाति की मुर रूप रसिक की बी ॥१॥

बीड बीड की बिह कीनीं तुम स्वाम बाधे

राधे व के नाम की रकार रूप में बी ॥२॥

नित्यबिहार म्हायती में राधाकृष्ण का नित्य बिहार की स्मरसिद्धि के
मन में कहा हे -

१ - नित्यबिहार म्हायती - रूप रसिकीय पृ० ७७-७८ पन् ५६

२ - " " " " " पृ० ७९-८० पन् ६१

गुन्नी का निम्नार्थ साहित्य में स्थान

स्पर्शालय के गुन्नी का निम्नार्थ साहित्य में
का महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट स्थान है। हिन्दी साहित्य के माँ
का के निर्माण सम्प्रदाय में गुन्नी की महत्ता बार्हर्ह है। का का
है कि :-

कालिहारी का गुन्नी की जिन सत्गुरु किनी निहा ।

गुन्नी की का प्रु है कान की कानि बाजा और
की निहाने बाजा है । स्पर्शालय की गुन्नी महत्ता की है स्पर्शालय
की ही स्पर्शालय है । गुन्नी की उपासना हमने निर्माण सम्प्रदाय
के माँ कालिहारी की माँ की की है । हमने काने गुन्नी की महत्ता
है बलवान है " स्पर्शालय स्पर्शालय " गुन्नी की रक्षा की है । उनके
गुन्नी स्पर्शालय की न की है रक्षा है । का कान के माँ-माँ
है । गुन्नी के रक्षा है । कान की रक्षा करने बाँ है । वे कान-
का के माँ की गुन्नी करने बाँ है । वे कान कान है और स्पर्शालय
है :-

का स्पर्शालय की का बाँ । का कान का कानि बाँ ॥ १
का की स्पर्शालय कानि बाँ । का की की कानि बाँ ॥ २
का कानि बाँ का कानि बाँ । का स्पर्शालय कानि बाँ ॥ ३
का की स्पर्शालय कानि बाँ । कानि बाँ की कानि बाँ ॥ ४
का का का कानि बाँ स्पर्शालय । कानि बाँ की कानि बाँ ॥ ५
का स्पर्शालय कानि बाँ । का कानि बाँ के कानि बाँ ॥ ६
का स्पर्शालय का कानि बाँ । कानि बाँ का के का कानि बाँ ॥ ७

एत एवा जगण बाधु ज । श्री हरिश्चात प्रेम जानन्यमन ॥८
 का श्री हरिश्चात रतिर रावेसर । परम उदात्त सकल सुख केसर ॥९
 का हरिश्चात पुनन श्री । हरिश्चन में परवान श्री ॥१०
 का हरिश्चात परिप्रिया रूप
 एवा दीप एव परम ज्युष ।
 का हरिश्चात कुल एव शीघ्र,
 स्वरतिर रतिरन एव शीघ्र ॥

श्री लीला विंशति की चिन्ता नाचरी में स्वरतिर
 देव लिखी है * ऐसे न विदुषा संग्रामय श्री गुरु हैं, विनयी
 नरकार है, इसके परमाण्व में सकल श्री अरु नीत काकानु
 की प्राप्ति काहे श्री श्री गुरु की भाग्य छि, वैदुः कल है कि
 निरा गुरु नमन श्री प्राप्ति नाहीं । पंच संसार के ताता हैं
 श्री गुरु तिन नमान प्रत्युपकार करि श्री विनीची नाचि ॥

हरिश्चात कुलाधु के गजी है श्री राधा श्रीपाद मिथी
 है र हरिश्चात कुलाधु है श्री राधा श्रीपाद के परणों की उरण
 मिथी है :-

श्री श्री हरिश्चात कुलाधु । धर्म भित राधा श्रीपाद ॥१
 श्री श्री हरिश्चात कुलाधु । रतिर मति श्रीपाद उरण ॥२
 श्री श्री हरिश्चात कुलाधु । नरुणा राजर नेम विहात ॥३
 श्री श्री हरिश्चात कुलाधु । परण उरण श्री अरु निहात ॥४

-
- १ - हरिश्चात कुलाधु - स्वरतिरनेव पुस्तक पृष्ठ १ के १२
 २ - लीला विंशति चिन्ता नाचरी स्वरतिरनेव पृष्ठ ४२
 ३ - हरिश्चात कुलाधु स्वरतिरनेव पृष्ठ ६६ - १ के ५

गणेश की हरिश्चात उत्तार । अट भु परचैत्तर अकार ॥

हरिश्चात के चरणों का मज कर किन्हीं महा-
बाणी का प्रकाश किया है । किन्हीं जाये नाम है ही एक
पाप नष्ट हो जाये है -

किन्हीं जाये नाम गायी, सप्त पाप है नाश ।
ही चरण हरिश्चात गति, महाबाणी । ॥ प्रकाश ॥

इन हरिश्चात हरिश्चात को स्मरण करने की
मंगल करते हैं :-

मम काम अभिराम गति करि एकर एकराति ।
उप हरिश्चात रत के अति, हरिश्चात हरिश्चात ॥

गुरु की दृष्टि दिला मुन्हा निमित्तपिछाव नहीं
मिलता । है ही प्रकाश पत्नी के हिलोर है, उन्हीं की आज्ञा
प्रकाश करी साहिब -

पिछी दृष्टि दिला नहीं पाये, काम मुन्हाविपिन पिछाव ।
नरत की हिलोर एकराति, उन्हा पत्नी के पत्नी दिलाव ॥

हरिश्चातमेव है ही नाति प्रकाश लीकी है । उन्हीं
मम दिला स्मरण है दुख नहीं मिले-न मिली ।

१ - हरिश्चात काका इन हरिश्चात ५० ६०

२ - " " " ५० ६०-७

३ - " " " ५० ६०-८

गर्जनी हरिश्चन्द्र परम पुरुष की ।

जब जपिनाही तबिक राति दम्पति सेव पुरन्धर की ॥

पूरा प्रपति पैरि तिसरी नी दीनी गति विस्तार की ।

नी हरिश्चन्द्र मकर निर्गुण किन किन्ही न कम्य वरण कर की ॥

अपराधिन्नेव हरिश्चन्द्र की नी नमन करने की कहे

हैं किन्ही कारण संसार के महादुखार मम नी पुर हो जाते हैं -

नगी नगी हरिश्चन्द्र पुनीत । किन्ही कर्मानाम दुर्गति

मिष्टि मकर दुखार मम नीत ।

वर्ण शरण किन्ही किन किन्ही किन्ही न मग

मोहि नीत ॥

नी हरिश्चन्द्रसेव तीन बाधों के लगे जाते हैं ।

हरिश्चन्द्र के अतिरिक्त दुर्गति कुल होने जाते हैं -

गर्जनी हरिश्चन्द्र वरण कर जाता ।

नीन मम्य मम विन्दु कारकर तीन बाध हरि जप विनाश ।

या संसार अकार कार गति कुल जागार कारकिर्त जाता ॥

नी का ताति दुख हरिश्चन्द्रहिं किन हरिश्चन्द्रहिं मम कुल जाता ॥

नी हरिश्चन्द्र के वर्णों के संसार का पारन कर जाते हैं ।

संसार का ताग दोदुख शत्रु कल्पे कल्पन करना जाहिनी -

गर्जनी नी हरिश्चन्द्र के वरण करव नम पाथ ।

रहिनी शत्रु हों नी जपिनी न नी ताग ॥

१ - हरिश्चन्द्र महात्मा अपराधिन्नेव पृष्ठ ७२

२ - " " " " ७३-१

३ - " " " " ७६-१

४ - " " " " ८०

हरिव्यास का जाया नाम समस्त पापों का नाश
करता है । बार वर्ष पूर्ण करने पर जाह पित्तल प्राप्ति होता है :-

जई नाम हरिव्यास की कर सकल अथ नाश ।

बार वर्ष पूरी की पापे जाह पितास ॥

जौनी, जैन, 'ज', दिव सन्ध्याही शिख जादि
का वैद्य किता
समी, हरिव्यास के मन्त्र के व्यर्थ है । हरिव्यास के वर्णों की शरण
के किता जौनी, जैन, 'ज' दिव, सन्ध्याही शिख जादि सब आद
वर्ण जानये हो भी व्यर्थ है -

जौनी जैन वे न दिव सन्ध्याही पुनि शैभ ।

किता मन्त्र हरिव्यास के हनि के कूठौ शैभ ॥

जौनी जैन 'ज' दिव, सन्ध्याही शिख जादि ।

किता शरण हरिव्यास मन्त्र, अद वर्ण सब पादि ॥

स्परसिद्धेव हरिव्यास को मन्त्रों की बात करी है ।
उनके किता मन्त्रों की वृत्ता नहीं करती । उनका जाया नाम -
उच्चारण करी है ही समस्त पापों का नाश हो जाता है । स्परसिद्ध
देव सिद्धी है :-

भौ मन्त्र मन्त्र है भी हरिव्यास ।

होय मन्त्र विन विन हनि वैरी दुरि मन्त्र की प्राप्ति ॥

विन हरिव्यास होय सब पांही सब ही जाह पितास ।

सब सुख राख दास भी मष्ट पद दासक विपिन पितास ॥

जई नाम किता उचरवी होय सकल अथ नाश ।

सुख प्रद्वीत शैभ निजिवासर वर्ण कर सकल मन्त्र जाह ॥

१ - हरिव्यास यज्ञपूत - स्परसिद्धेव पुष्क ६०-२५

२ - " " " " ६२-६-६

३ - " " " " ६७-२

इस प्रकार गुरु की मति का गुणवान करने हम-
रचित्तों ने निर्गुण सम्प्रदाय की परिपाटी का परिपालन ही नहीं
किया, बल्कि उसे और बुरा करने की चेष्टा की है।

शरिण्यालोक की निम्नार्थ सम्प्रदाय के विद्वान् वाचार्थ
कहे हैं उन्होंने महाभाष्य में निम्नार्थ सम्प्रदाय के विद्वान् की प्रशंसा
प्रकार करते निम्नार्थ सम्प्रदाय की और बुरा कर भारवर्ण में उनकी
प्रतिष्ठा की है। जो किसी भी जीव ने हम-रचित्तों की वाचार्थ का
हम माना है जो निम्न निर्गुण के एक शाखा की पुण्य नहीं हो सकती।
निम्नार्थ सम्प्रदाय में उत्तम मनीषियों का बड़ा महत्व है। बुद्धुत्तम
मणिमात में कल्प लीला का निम्न पर के उत्तम मनीषियों का
मनीषा बड़ा वर्णन है। ब्रह्म निर्गुण उत्तमों का हममें कियुक्त वर्णन
है इसलिए निम्नार्थ सम्प्रदाय सम्प्रदाय साहित्य में उनकी ऊँची वि-
शाला है और इस गुरु का विशेष महत्व है। निम्नार्थ सम्प्रदाय
सम्प्रदाय साहित्य में इसलिए बहुत महत्वपूर्ण माना है।

इस जीवों के समान जीव नहीं है। जलने की दो जन
में परम्पु भन एक है। देखिये :-

करो किन लीटि कल की जीव ।
या जीवों के मध्य की जीव, है न व हुओं न जीव ॥
हम रंग रूपका जान न, कल्प मात्र उन जीव ।
जानने हैं उनकी लीटि कल यह, कल्पक कल जीव ॥

सुखी के निहाकर राम सागर रूप धारण कर छेले
हैं । उपरिखीय के मुखा किन्हें भेद, भवि भवि और जगम कही हैं
यह छाछा गुप के घर में पिताई की है -

भवि भवि भेद कही जगम उबारि कहे,
लेखं किं है कही भेद नाहिं छेपिये ।
सिख हू कर्मावि के बरावि के न छावि कहे,
बावि ही ज्ञावि सिख छावि कहीछिये ॥
रखि कस विष बीबनिबद्ध यह,
कुल सुरूप निजाप कां पेचिये ।
काव है कावि कर भाछा छे छे रमावाछा,
छोई छाछा गुप न मूछ देखिये ॥

“ छीछा विंछावि ” स्तोत्राचना नानुक्त चण्डी के छिर
कही उपसीनी है । स्तोत्री, पत्नी कसा चण्डी विण्डी की संख्या
के अनुसार रमावी का नामकरण किया जाता था । चण्डी चण्डी
विण्डी की संख्या बीसहें छतिर कसा नामकरण “ छीछा विंछावि ”
हुवा । ये मंदरी, विंछाव मापुरी और कुल पार नागी में विना-
रिवा है :-

पांच मंदरी पांच विंछाव ।
मापुरी पांच पांच छत पाछ ॥

या पुनर विंशति सुवदाहं ,
निम्न निम्न पुनः कुरु सुवदाहं ॥^१

इसके नव विंशति में भी हरिव्यास के चरणों
में पित नवाकर वंशवि के नव विंशति वाक्य की बात नहीं है --

भी हरिव्यास चरन विंशति वाक्य ।

भी हरिव्यास चरन विंशति वाक्य ॥

भी हरिव्यास चरन विंशति वाक्य ।

नव विंशति वंशवि की वाक्य ॥^२

भी राधा नित्य विंशतिनी, मेव निवादिनी और
वीरानि प्राण है ---

भी राधा नित्य विंशतिनी विंशति सुवदाहनी वीर ।

नागरि मेव निवादिनी, पुन पुनविनि वीर ॥

सुवदाह वीरानि प्राण वन, सुवदाह वीर सुवदाह ।

भी विंशतिनी वाक्य, भी वीर वीर वीर ॥

नव हन हरिव्यास विंशति के चरणों की चरण
वाक्य की बात नहीं है, और जगता नहीं है कि उन पर अनुप
करने की पुनः करें -

१ - भी वीर विंशति हरिव्यास पुनः २१२

२ - " " " " २०१११

३ - " " " " २११२४

बसो प्रिया नो पर डरी, करो अनुप राव ।
निजिदिन रहे सुख पवन की, करन परी नो देख ॥

यही कामना है कि वह नम वीर किन्तु मैं ही नौं रहें
वीर उन्ही श्रद्धा की रहे ---

किन्तु बाहें किन्तु हो नौं, किन्तु बाहें किन्तु नौं ।
वन बाहें वन श्रद्धा, मन बाहें नम बाहें ॥
पक्ष बाहें पक्ष हो नौं, किन्तु बाहें किन्तु नौं ।
यही छाछा रहे नौं, रक्त नम वीर नौं ॥

नित्य विचार पताकी धार्मिक दृष्टि है उन्कीटि
की श्रद्धा है । वह राम रामनौं है नौं है । स्मरतिनीय यही
बाहें है कि नम उन्की है नौं रहे, नम उन्की है नम में नौं रहे ।
नौं की में नमारे रहे ---

नमो की नम नौं नम नमो ।
नमो की नम नौं नम नमो ॥ टेन ॥
नमो की नम नौं नम नमो ।
नम रक्ति नम नम नमो ॥

१ - की कीटि विचार - स्मरतिनीय पृष्ठ ५५

२ - " " " " " ५५-५६

३ - " " " " " ५६-५७

दीनीं सुख के समुद्र में, गुणों के झुल है । दीनीं में
प्रेम की लहरें उदोचित हो रही हैं । लोक भक्त का उनके समुद्र का पान
करी है ———

सकल दीन सुख के सिंधु बरीर ।
स्वाभा स्वाभ स्वाभ सकल सकल नगर मुन कीर ॥६॥
कन कन उदय वरुण सवि जगन भव नव नीर ।
स्वरचित का कल्या है निधि सुख सुखा की नीर ॥

नित्यविकार व्यापकी में राजा कृष्ण के नित्य
विकार का वर्णन है । इस प्रकार हम यह समझें कि स्वरचित
के काव्य का निष्कारण सम्प्रदाय के काव्य में ही नहीं बल्कि कृष्ण
भक्ति काव्य में एक महत्वपूर्ण स्थान है । इनके काव्य के कृष्ण भक्ति
काव्य की भीमति हुई है ।

१- नित्य विकार व्यापकी - स्वरचितकेन पृष्ठ ६१ पद १९

तृतीय अध्याय

रूप रसिक देव के साहित्य की पृष्ठ भूमि एवं परिस्थितियाँ

भारतवर्ष के इतिहास की मुख्य भूमि एवं परिस्थितियाँ

मॉड कान्डीशन :-

भारतवर्ष के इतिहास में मध्ययुग के नाम से जो कुछ वर्णित किया गया है वह एक प्रकार से पार्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विच्छन्न का काल क्या या समझा जा सकता है। मध्ययुग के पतन के पश्चात् भारतवर्ष का राजनीतिक शिथिल काल शुरू हो गया था। भारतवर्षी साम्राज्य उस पीढ़े बहुत परिवर्तन के साथ साक्षात्करण प्राप्त कर चुका था। मुसलमानों के आक्रमण के पश्चात् साम्राज्यिक व्यवस्था का पुनः प्रारम्भ हुआ और साम्राज्यों के ही पक्षी जातीय पूर्ण साम्राज्यिक, पार्थिक और सामाजिक परम्पराओं का संघर्ष एक कान्डीशन के रूप में एक काल हुआ। भारत के इतिहास में साक्षात्करण उत्तर की वजहों अधिक साम्राज्य या स्वच्छिन्न का कान्डीशन का बीजनीय इतिहास से हुआ और बीरे बीरे वह देख-सुझायी हो गया। विशिष्ट परिस्थितियों के कारण नवी के और संस्कृति के मानविक कर्म। उत्तर का बीजनीय विमुक्तिपरक होने के कारण सामाजिक प्रगति के लिए कौमारी या विद्वत् हो रहा था। बीरानामुक्तकर्म का विशिष्टांश पूर्ण रूप से मानव की सेवाओं का समायोजन न कर सका। इस प्रकार देवताप जाति और बीजनीयों की भी वृद्धि थी। केवल दलित पर न बाद लक्ष्मी पूर्ण मानवता की वृद्ध करने में व्यर्थ थे। बीजनीय विमुक्ति की परम्पराओं की पूर्ण पुनः था। भाषों में उस विमुक्ति में पुनः का प्रयास किया पर वह भी सामाजिकता के उत्तर पर न पहुँच सका। स्व परम्पराओं की उत्तर करने वाले बीजनीय पौराणिक के रूप निर्धक हो चुके थे। निरीय और निराश्रित काल के पुनरावृत्ति के अधिकृत उनका और बीजनीय लक्ष्मी न रह गया था। मुसलमानों —

के साथ जाने वाले बूझने वालों ने प्रेम की आधार स्थापना -
 व्यवस्था से लाभ उठाया । चारों ओर में एक एक ओर
 मन्त्रीयों के संघ उठ कर और उन्होंने अपनी संकुलितता में
 डाटफटकार के साथ एक संघ नाम निकालने का प्रयास किया,
 पर वे संघ अधिक छोटे छोटे नहीं थे और न ही उनके मार्ग थे पीछे
 कोई न व्यवस्था नहीं था । केवल अनुष्ठान के बल पर ही वे
 चल रहे थे । सभी क्यों और सम्प्रदायों की पुरी बातों की
 उन्होंने निन्दित की और भी के बीच में तथा समाज के बीच
 में एक प्रान्ति का बीजारीयण किया पर धार्मिक परम्पराओं
 और व्यवस्था नहीं के साथ में उनके विचारों व्यापक न हो
 सके । नाकि वास्तविकता की इनसे कुछ बल व्यक्त नहीं ।
 वास्तव में नाकि के ऐसे स्वयं की वास्तविकता नहीं रही जो
 मानव मान के लिए कल्याणकारी हो सके । उपासना की
 निर्गुण प्रकृति में उस स्वयं की सम्मानना नहीं हो सकती थी ।
 मन्त्रीय के अनुष्ठान रूप की सभी वाले सम्प्रदायों में भी मन्त्रीय के
 आधार के रूप की ही महत्व मित्रता रहा था । यद्यपि इन -
 सम्प्रदायों में अन्तः-वाद पर विचार किया जाता था फिर
 भी मन्त्रीय की अन्तः प्रेम और काँ फल की अन्तः कृपा-फल
 की पीछे और संवत्स काल के लिए अधिक उपासना और वास्तव-
 प्रद विचार हो सकते थे । इसीलिए मन्त्रीय के अन्तः कृपा में
 इन दोनों मार्गों की अन्तः अन्तः मार्गों में ही । अन्तः निम्नान्त
 में कृपा-नाकि का अनुष्ठान उतर चारों में किया । कृपा की
 अन्तःस्वयं स्वयं परम केवल नामा का और राक्षस की उपरी
 अन्तःस्वयं नाकि । इस प्रकार राक्षस और कृपा की सीमा केरि
 की नाकि में स्थान मित्र । इस मार्ग की उपासना सर्व रूपों में
 धार्मिक सम्प्रदायों में प्रचलित थी ही । बीज क्यों में जो स्थान प्रजा
 व उपासना का था अन्तः प्रेम का में बीज और नाकि का था वही
 कृपा नाकि अन्तः में कृपा और राक्षस का हुआ । परम्पराओं और

प्रार्थना के साथ में ही रही। केवल नाम परिवर्तन ही न
 गया। बाबायों ने राधा और कृष्ण की मूर्ति की शास्त्रीय रूप
 देना प्रारम्भ किया और प्रत्यावर्त्ति की ध्यानात्मक कला को ही
 करनी प्रारम्भ कर दी। श्रीमद्भागवत पुराण ने कल्प-वृक्षा का कार्य
 किया, जिससे मूर्ति शाला की कड़ा प्रौद्योगिक मूर्ति और कवर और
 कवर ही गयी। शास्त्र और बाबायों दोनों ही पक्षों की ठेकर का
 सम्प्रदाय की तब मूल में राधा और कृष्ण के चरित्रों का विवेक ही
 रहा। श्रीमद्गीता का अर्थ है ठेकर सम्प्रदाय का अर्थ है। एक कृष्णमूर्ति
 का धारण भारत में कड़ा प्रचार हुआ और उसके माध्यम से भारतीय
 भाषाओं के साहित्यों की रूप रचना हुई। हिन्दी में भी कड़ी
 प्रभावमान और ललितशाली साहित्य की रचना हुई। राधा और
 कृष्ण के स्वयं विवेक और उपासना निष्पन्न में एक स्वयंसेवक भव
 भी रहे। परन्तु एक रूप प्राप्त: रखा ही रहा। मध्य-युग का सम्प्रदाय
 द्वारा साहित्य एक प्रकार से कृष्ण मूर्ति साहित्य कहा जा सकता
 है। राम मूर्ति साहित्य की भाँसा कीदायुग रूप ही रही।

राधा और कृष्ण की ऐतिहासिकता की ठेकर
 भारतीय और पश्चात्य विद्वानों द्वारा बहुत कुछ किया कहा गया है
 पर मूर्ति के क्षेत्र में उपास्य ऐतिहासिक न होकर आध्यात्मिक ही माने हैं
 राधा और कृष्ण का उत्कृष्ट भारतीय सांस्कृतिक में कड़ा पुराणा है पर
 उनका ही रूप रूप युग में स्वीकार किया गया सम्प्रदाय: यह पक्ष किसी
 युग में नहीं था। हमें जीवित ही नहीं कि राधा-कृष्ण के मध्य काहीन
 स्वरूपों के पीछे आध्यात्मिकों की परम्परा ही निहित है। राधा और कृष्ण
 दोनों ही के रूप-विवेक के ही पक्ष रहे हैं भारतीय पक्ष और बाबायों
 पक्ष। मूर्ति भाषा में शास्त्रीय पक्ष की कीदायुग बाबायों पक्ष ललित
 महत्त्व का होता है। शास्त्रीय पक्ष की-व किसी काल का दली प्रत्युक्त
 करता है जो कि बुद्धिमान का काम है। बाबायों पक्ष व्यवहार की ठेका
 है, जो कृष्ण काल की वस्तु है। सम्प्रदायों के बाबायों ने शास्त्रीय पक्ष

हिन्दु समाज चार कों में विभाजित था - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। ब्राह्मण उपवर्ग का माना जाता था परन्तु इसमें वैयक्तिक पारिवारिक जीवन शामिल है। यह निम्न वर्ग का संरक्षण कर रहा था। प्रत्येक वर्ग पर कुछ एवं कर्तव्य च्युत हो चुका था। सब का हित चारों में सुलभ है। हिन्दुत्व में भुवि पुत्र का प्रभाव था। देवी की मान्यता की वीर पूजा एवं कुष्ठानों में दम्भ विस्थापन का प्रभाव था साहसिकदम्भ व्यापक है। कुष्ठानों का राज्या था वीर हिन्दुत्व कल्याणार्थ का विरोध भी करते थे परन्तु फिर भी मानने कल्याणार्थ किये जा रहे थे। समाज में मान्यता की वीर विरोधों की वृत्ति चोपनीय थी। जो केवल जीव की सम्पत्ति सम्पन्न करता था। पर्यंत तथा बाल-विवाह की प्रथा थी। स्वच्छिन्न कर्मियों ने शत्रुओं को जीतने की प्रेरणा दी। कर्म एवं कर्म में सामर्थ्य स्थापित किया। जल की राज-पुत्रता की वीर कला का ध्यान वाक्यनिष्ठ किया। सुधार कर्म की सामर्थ्यता थी। सम्पूर्ण ने जीव सुधारों की वीर कला की प्रेरणा किया। हिन्दु समाज कुष्ठानों को संकुचित बाधावरण से बाहर निकालकर एकता का राग बताया।

राजनीतिक स्थिति :-

कर्मियों के साम्य पर उत्काशीन राजनीतिक, शत्रुत्व एवं वाक्य परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा है। राजनीतिक परिस्थितियों का प्रभाव वैयक्तिक परिवर्तन लाता है। वैयक्तिक स्थिति है ब्रह्मराज्य स्थिति वह जीव शत्रुता एवं कर्मियों का प्रभाव हुआ किन्हीं वीर नाक, सुन्दरदास - मन्त्रदास का जीवन शक्ति वृत्तावाक्य परिवर्तन परन्तु प्रभाव है। वृत्तावाक्य शक्ति एवं राजनीति शक्ति के भी जीव उत्काशीन के शक्ति है। इन कर्मियों की रचनाओं में पांच ही कर्मों की - परिस्थितियों का प्रभाव श्रुतिगीतर लाता है। कर्मों ने वैयक्तिक स्थिति के पूर्व का भारत पर जीव वाक्यनिष्ठ किया। वृत्तावाक्य कर्म में 424-30 में

बम्बई के पाद मुहम्मद बिकराचिन ने ७१२ ई० में तथा सुबुखजीन सन् ६७६ ई० के समय बकानानस्थान की सीमा पर बाकुमण किया तथा कपाठ के और संबंध किया। तुर्कों को इन बाकुमणों से निश्चित हो गया कि भारत सम्बन्धाली है और यह जगह में इतना कुल नहीं है। सुबुखजीन के भेटे मल्लुद मजबूती ने भारत पर सब बाकुमण लिये। उसने हिन्दू संस्कृति को विनिष्ट करने का पूर्ण प्रयास किया। बन्धन सीमा पर हुए बाकुमण में जी बहुत राशि मिली। मुहम्मद गौरी ने सन् ११७५ में मुल्तान एवं गुजरात पर। सन् ११८३ तथा ११६९ ई० में पंजाब। सिंध तथा सर-हिन्द बादि प्रदेशों पर बाकुमण लिये। सन् ११८३ एवं ११८४ ई० में उत्तरी पुष्पीराज एवं कपाठ पराजित हुए। सुबुखजीन ने सन् १२०६ से १२१० ई० तक राज्य किया। सैन्य शांति ने भी मुल्तानवंश के राज्य काष्ठ में विनाशकारी बाकुमण लिये। बन्धन शासक बन्धन खोद पा।

विजयीवंश का शासक बन्धनखोजीन सन् बहुत दूर पलायित था। हिन्दुओं का उसने बहुत विनाश किया। उसने मुल्तान - बाकुमण की कों को और कुल कर दिया। उसने सन् १२६६ ई० में पंजाब-गिरी और सीताबाद पर बाकुमण किया और उन्हें हटा। मुल्तान सरकार स्वायत्त ने सन् १२६८ ई० में दिल्ली पर बाकुमण किया। विजयीवंश के बन्धन भारतवर्ष पर मुल्तानवंश का राज्य था। फिरीखास तुगलक के उपराज्य को बन्धन शासक इस क्षेत्र में नहीं और इस क्षेत्र के बन्धन शासक केमुल्तान ने भारत पर बाकुमण करके इस्लाम की का प्रचार किया, मुल्तानों का बन्धन किया। दिल्ली तक उसने मंगर उत्पादक लिये और अन्य हिन्दुओं की मृत्यु का मुल्तान बनाया। बकीर हज्जाजों ने कुल किर्तों राकावी पर अधिकार कर लिया। उसके बाद बन्धनखोजी बन्धन के हाथ में आगल। बन्धनखोजी बन्धनखोजी नदी पर बैठा। यह भी बहुत मुल्तान तथा हिन्दुओं का मिरीवी था। उसने भी भोंदरी को पलायित कराया। बन्धन खोजी हन्धी के उपराज्य में। उसने भी हिन्दुओं पर मंगर उत्पादक लिये। इस क्षेत्र के बन्धन शासक हज्जाजों कीर्तों का बाबर से पानीपत का युद्ध हुआ और यहां मुल्तानवंश में आगली। बाबर ने भी हिन्दुओं पर कई उत्पादक लिये। बाबर के बाद मुल्तान शासक बन गया। धरताज घुरी मुल्तान की

परास्य कर रूस भारत का शासक बन गया। इसके राज्यकाठ में बीड़ी
 जालि रही। बाकडी ने "काका" इनके राज्यकाठ में रहा। अरसाह
 के उपराधिकारी बोम्ब नहीं थे इसलिए पुनः हुमाऊ शासक बन गया। हुमाऊ
 के बाद कन्नर शासक हुआ जिने हिन्दुओं को राज्य पर लिये और राबूरा
 हिन्दुओं के साथ विवाद लिये। कन्नर के बाद कर्नार बादशाह हुआ जो
 मुसलमानों का धोखा बहुत कर कर कर रहा था। जो मुसलमान ही बाबा
 को अधिक सम्मान देता था। सन् १६२६ ई० में आइबर्ग गई पर फटा वह
 भी हुमाऊ का पदासीनी था। उसने हिन्दुओं पर अधिक कर लगा लिये
 और राज्य पर केवल मुसलमानों को लिये। यह देखकर मुसलमान दरबारियों
 ने भी हिन्दुओं पर कत्ताघार करने प्रारम्भ कर लिये। उसकी धार्मिक नीति
 संकुचित एवं कुंवार की। औरंगजेब ने आइबर्ग को भ्रष्ट करके शासन की
 कामकीर करने वाली में ले ली। उसने हिन्दुओं पर कत्ताघार कर उनका हिन्दु
 और अरबों मान्यताओं को नष्ट करवाया। हिन्दुओं के राज्य पर हीन लिये।
 हिन्दुओं के मुसलमान कत्ताघार, फौजदारी नष्ट की और उनका जीवन
 विह्वलता बन गया। औरंगजेब के उपरान्त शाहजहाँ और फिर मुहम्मद
 शाह बादशाह हुआ। सन् १७२६ ई० में नादिरशाह का भारत पर आक्रमण
 हुआ। नादिरशाह ने भारतवर्ष में बिहार, बंगाल, ओधिसा, उत्पीछन
 तथा छुटमार की इस प्रकार वह भारतवर्ष का कंठों बर्षों का इतिहास
 और कर्तान्व एवं अनिर्णय परिस्थितियों का इतिहास था। इन कत्ताघारों
 की परिस्थितियों का वन्द कर्तों पर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा, वे इस
 कर्ताघार के व्यक्ति को भी, कर्तोंने बताया जो प्रेम, क्षति तथा विश्व
 संयुक्त का उद्देश्य किया। उन्होंने हिन्दु मुस्लिम एक का चिराग बताया
 तथा अनुशासनात्मक है किन्तु निर्णयीतावना को देख बताया क्योंकि कर्तों
 के कारण परस्पर का वैमनस्य बनारस होकर जीवन सुखी एवं मंगल्य हो
 गया था। उन्होंने हिन्दु-मुसलमान दोनों में पाये जाने वाले दोषों की
 परीक्षा की और दोनों के धार्मिक दोषों का परिवार के कले समाप्त
 पुनार की जाना की। राम नरसिंह परब काव्य ने जोड़ मंथ की जाना

की और साधना की पराजयी योग्य एवं प्रकट रूप के नाश के माध्यम से
 हिन्दुओं में सुस्थिर राज्य के विनाश की प्रेरणा की जो कृष्ण की मूर्ति
 में प्रकट कला की कर्म मार्ग में प्रेरित कर मानवी प्रगति बाधे, नारियाँ
 पर भी अत्याचार करने बाधे औरों की निन्दित होता हुआ दिखाकर
 संदेश दिया कि कृष्ण की नीतियों के द्वारा हिन्दू कला वास्तुकार्यों
 का विनाश करने में समर्थ है। मक की मकान कठ, पैर एवं विश्वास
 के समर्थ हैं जो मूर्ति के स्थान मक वास्तु एवं मानव से परिष्कारित
 ही एक कर्म शक्ति प्राप्त करता है। इस प्रकार मक कर्मों की माध्यम
 प्रकट कला की एक और कर्मों की सत्ता की सत्ता शक्ति प्राप्त करता
 या जो कुरी और दुर्दिनी में सत्ता कर्म-रव रव माने सम्मिलित होने
 के लिए प्रेरित था। इस प्रकार हिन्दू कला की नहीं बल्कि प्रेरक
 मानवीय वाचार्थों की स्थापना में सहाय्य रखने के लिए मूर्ति मक कला
 प्रेरक चित्र पुनः परम्परागत में भी प्रकट हिन्दू कला की स्थापना कीक
 कार्य मिले। इस रचित के ने भी स्वी प्रणालि हिन्दू कला की स्थापना
 कीक कार्य मिले -

प्राथमिक स्थिति :-

समाज, धर्म और साहित्य का परस्पर सम्बन्ध है । एक की शक्ति का दूसरे पर प्रभाव पड़ता है । तैरहनी है चौदहवीं शताब्दी तक पारलम्बन पर मुसलमानों के निरन्तर आक्रमण होते रहे और हिन्दुओं की नारकीय संज्ञा मिलती रही । शासकों ने लोक प्रचार के हिन्दुओं को पब बलिष्ठ किया और उन्हें पीड़ा दी । उस समय शीशना, उत्पीड़न और दमन का प्रचलन था । समाज प्रत्येक प्रकार के दुःखी और पीड़ित था । कबीर ने देश की विपुल परिस्थितियों का रूप कलशिका किया । अन्तः प्रलय के वर्ष में गिर रही थी सब मानव मानव का रहा था । पन्नाही काही शक्ति शक्ति की उपासना में समाज का बलका रहा था । धर्म में सर्वत्र - भूमिगत दुष्टियों पर रही थी । पवित्र धर्म के पवित्र रूप पर आकाश पड़ा हुआ था और आकाश एवं संविधानों का का पड़ा था । नरबलि और पशु-बलि में अन्तः उदार मानने लगी थी, कबीर ने सबकी मत्तिका की । मुक्त की बलकारी है तथा योगी की योग में आसक्त है । वास्तविक धर्म का रूप विह्वल हो गया था । निम्ना उक्त एवं आचार ने धर्म का रूप प्रलय कर दिया था । हिन्दू पत्नियों की पुत्र में लगे थे तथा मुसलमान पी-बोलीयों के मरु है । साधु पूर्व एवं पाठशाली है । किताब एवं केस का सर्वत्र राव था धर्म के नाम पर लोक अत्याचार हो रहे थे । कबीर ने अन्तः विरोध किया । कबीर ने मुक्ति पुत्र, नन्दा, योग शक्ति सबकी आह्वान कहा । कबीर ने धर्म के नाम पर होने वाले आह्वानों को बटकर विरोध किया । उनकी दृष्टि में राम-रहीन में कोई शक्ति नहीं था । सामाजिक अस्पृश्यता बराबर ही रह गई थी । अन्तः का व पाठशाली में लगी हुई थी । योगी की पशुपति की भी है । धर्म का रूप बड़ा बूढ़ और विकल हो रहा गया था । पंक्ति मुक्ति के निम्ना आचारों में लगे थे । समाज में लोक विस्थापन परा हुआ था और वह उपासना के धर्म में पड़ा था ।

धार्मिक धर्म के विभिन्न सम्प्रदाय

संन्यास - का वैदिकवाद

वैदिक धर्म के वैदिकवाद का प्रसार भारत में प्राचीन काल से ही था परन्तु संन्यासवाद ने इसे ज्ञान और परिष्कार का दिया। उन्होंने वैदिक धर्म के जड़ रूप का नाश किया और उत्पत्ति कादि धार्मिकों द्वारा वैदिक धर्मों की कल्पना का के संन्यास का वास्तविकता कराया। उनके अनुसार भक्ति कर्म विचारों में ही ही विरोध न होकर उनकी व्याख्या में अन्तर था। उन्होंने ज्ञान और कर्म का ही दो विधान कराये। भारतवर्ष में स्थान स्थान पर उन्होंने यह कहा कि और धार्मिक धर्म का पुनरुत्थान किया। उन्होंने जड़ स्वयं का स्मरण करना ही धर्म कहाया। उनके अनुसार धर्मपूर्ण प्रेम दुष्टा और दुष्ट की ही मार्गों में विद्यमान किया जा सकता है। वैदिकवाद के अनुसार एक वास्तविक धर्मिकानन्द का ही अनुभव करता, ज्ञान और धर्म में उत्पत्ति करता, वास्तविक है। यज्ञ, मन और निदिध्यासन से ज्ञान प्राप्त होता है। माया कादि और स्वानात्मिक है। जीव परिष्कार और उत्पत्ति है। ईश्वर अविद्या से उत्पन्न है। जीव उत्पन्न है। जड़ उत्पन्न है, जड़ विपत्ति है। जीव जड़ से विपन्न नहीं है।

रामानुजाचार्य का भी सम्प्रदाय

रामानुज सम्प्रदाय

मल्लिकार्जुन के प्रसार के लिए कुछ आधार रामानुज -
 चार्य ने रखा किया। रामानुज के विविष्टांश भाव का प्रकटन कर
 अपनी तथा विष्णु और उनके अवतारों की पुनः पुनः कथा सुनकर
 स्वयं से उपासना की प्रविष्टा की। श्री राम में उनकी विशेष आस्था
 की। रामानुज ने संसार के माया, निष्कारण चीजों की कूटा दृष्टि
 कर बताया कि बीज काव और ईश्वर दोनों किन्तु किन्तु वस्तु होते
 हुए भी बीज बीज और काव दोनों एक ही ईश्वर के स्वरूप हैं।
 रामानुज का पूरा जीवन मुक्तों से मुक्त करते विज्ञान्य मोक्ष मोक्ष
 प्रेक्षारं व मत्वा सर्व प्रीति विविध रूप रस पर आधारित है।
 उन्होंने पूरा ही स्वयं अद्वितीय व मानकर किन्तु आत्मा तथा
 एक प्रतीति से विविष्ट मानी है। ये स्वरूप, आत्मा और ईश्वर
 दोनों की दृष्टि मानते हैं क्योंकि ईश्वर की वस्तु मानते हैं कि
 मल्लिकार्जुन के और के कठ की अनित्यता के सम्बन्ध में ज्ञान है यही
 पूरा विज्ञान का अधिकारी है। श्री कृष्णाराधन रामानुज -
 सम्प्रदाय में परम उपास्य हैं, पूरा समुदाय विविध हैं। वह सर्व गुण
 सम्पन्न, अनुपम, अद्वितीय, अनोखे महान, सर्व कठ प्रसादा,
 सर्वधार, सर्वता स्थायी, विश्वात्मा स्वरूप और पुरुषोत्तम हैं।
 ईश्वर के पाँच रूप माने हैं - परब्रह्म, विमल, कर्मा या मूर्ति
 और कल्पादि। फल से प्रेम और प्रसाद ही फल हैं। प्रेम

के प्रथम और अन्त्य में दो भेद हैं । प्रमाण पदार्थ प्रत्यक्षा , अनुमान
 और उद्भव तीन प्रकार का होता है । प्रकृति जीवन का उत्पादन और
 निमित्त कारण प्रकृति है । जीव कणु संछिन्न, कार्य और दास है । जीव
 स्वर्ग मीमांसा उद्गिरा और उद्गिर है । जीव के तीन भेद हैं —
 कृत्, मुक्त और नित्य । कृत् के दो वर्ग हैं - मीमांसु , मुक्तु ।
 मुक्त के पांच प्रकार हैं । जीवन, उत्पादन कृत्, स्वाध्याय और
 योग । वस्तु जीव जीविका जाति निम्नो के पाएन दास ही उपमाय,
 सीधे, दान यज्ञादि निष्काय माय है करने चाहिये । जीव, कृत्,
 उत्तम और कृत् है । प्रकृति, ईश, उत्तम और प्रकृति है । जीव को हिन्दु
 और मुनि नारायण के परमात्मा में आत्म-समर्पण करने से आत्म
 मिलती है । रामानुज व्यास के कर्म पतापाती है ।

सप्तमः अध्यायः

पुनार है हैं । परमेत्पर की सत्य है उसका कार्य विभाग साठ पुनार का है :- १ दृष्टि , २ - स्थिति , ३ - संसार , ४ - नियम , ५ - आवरण , ६ - जीव , ७ - वंश , ८ - बीजा । अन्धियाँ नित्य और अनित्य दो पुनार की हैं । अन्धियाँ की दृष्टि संव सुर्वी के बाद होती है इसके बार में हैं —

- १ - बीजाश्वादिना
- २ - परमाश्वादिना
- ३ - उच्छा
- ४ - माथा

देवशब्द में पदार्थों के हैं वर में हैं ।

देवशब्द में कर्तु का कर्तु के साथ में मायिक नहीं सत्य है । जीव का प्रयोग दुःख है निवृत्ति और वाक्य की प्राप्ति है । मूर्ति के बार में हैं - क्रीडाव , उत्पत्तिव्यव , कथितादि मार्ग वया भीव । मूर्ति भीव के बार में हैं :-

- १ - छातीव्य
- २ - छातीव्य
- ३ - छातीव्य
- ४ - छातीव्य

विष्णु स्वामी सम्प्रदाय

विष्णु स्वामी नाम के श्री बल्लभाचार्य से पूर्व कई आचार्य हुए थे, बल्लभ सम्प्रदाय के मुख्य 'सम्प्रदाय प्रतीप' लिखित प्रकरण में बल्लभ का है एक पूर्व आचार्य विष्णु स्वामी का सुशान्त निवृत्ता है - उसमें लिखा है 'सुषिम्बर राज्य काठ के पश्चात् एक राजा राजा प्रायिक देश में राज्य करता था, उसका एक ब्राह्मण पत्नी था। उसी ब्राह्मण पत्नी का एक पुत्रिमान, जिसकी कथा मन्त्रमुक्ति परायण पुत्र विष्णु स्वामी था, जिसने भैरव, उपनिषद्, स्मृति, वेदान्त योग आदि समस्त ज्ञान साहित्य का अध्ययन करने के बाद आचार्य की पदवी प्राप्त की। काश्यान के शास्त्राचार्य से उसे ज्ञान के स्वल्प का ज्ञान तथा भक्ति मार्ग की कुंजी मिली'। इस ग्रन्थ में मन्त्र प्रवीण रूप में लिखे हुए विष्णु स्वामी के वास्तविक विद्वान् बल्लभाचार्य के पुत्राद्वय के समान ही है। इस ग्रन्थ में लिखा है -

'विष्णु स्वामी ने बहुत समय तक भक्ति मार्ग का प्रचार किया और भक्ति की भुक्ति से भी अधिक महत्ता दी। उन्होंने भैरव सम्प्रदाय - विद्वान् वेदान्त शास्त्र योग कर्मादिन आदि सम्पूर्ण ज्ञान्य भक्ति के ही साफल्य किये हैं। इसके बाद इस मार्ग के सात ही आचार्य हुए। आठान्तर में है इसी सम्प्रदाय के एक आचार्य विष्णु मंत्र की कुर की प्रायिक प्रतीप थे। बल्लभभाचार्य के समय में भी भक्ति का बहुत प्रचार हुआ जो समय की संस्थाओं तथा भी कुमारिक मन्त्राचार्य की कुंजी किन्हीं विष्णु नामों का अकल्पित किया। बल्लभभाचार्य के बाद भी रामानुजाचार्य आदि आरम्भ भक्ति मार्ग के आचार्य हुए,

विनिर्गुण विष्णु स्वामी तथा विलम्बिताचार्य के मान की भी -
 बलमाचार्य ने प्रशंसा किया। तीर जहाँ का परिष्कार कर जसा
 मत्त कहावा^१।

‘गौड़िय बल्ल सण्ड’^२ के छेद में भी मति
 सिद्धान्त सरस्वती महाराज का कथन है ‘एक देवसनु विष्णुस्वामी
 १० सन् से ३०० वर्ष पछी ह्वे भी मयुरा में रहते थे। इनके पिता
 का नाम वैश्वर मद्र था। इन विष्णु स्वामी के ७०० देव्याय
 निदण्डी सम्पादी इनके मत्त का प्रचार करते थे। ७५ मत्त के सको
 शान्ति सम्पादी भी व्यासेश्वर थे। दूसरे एक तीर विष्णु स्वामी
 का नाम राजीपाठ विष्णु स्वामी था। इनका कथन सन् ८३० में
 हुआ। यह काञ्ची नगर में रहते थे। काञ्ची में उन्नीसवीं बी. राज-
 मीपाठ देव की कथा की वरदाय की मूर्ति की स्थापना की थी।
 भी सरस्वती महाराज ने विलम्बिताचार्य की हन्नी का उद्घाटन बताया
 है। तीर एक तीर विष्णु स्वामी हुए थे। भी बलमाचार्य जी के
 पूर्व पुस्तक हन्नी तीर विष्णु स्वामी के मुख्य उद्घाटन थे।

रायबहादुर जी कलाम राम जी जाम्बहार
 का लिखी ‘हन्टीट्युट देवत’ में एक छेद है, किमें कहा गया है कि
 बलमाचार्य तथा बालाचार्य के पुत्र भी विनाहंर थे तीर विनाहंर

१ - सम्प्रदाय प्रतीप पुष्क १४ - ३०

२ - गौड़िय बल्ल सण्ड पुष्क ६२४ - ६२६

३ - " " " "

का ही दूसरा नाम विष्णु स्वामी था ।^१

यह पता लगना कि 'विष्णु स्वामी सम्प्रदाय' के प्रथम वाचार्थ विष्णु स्वामी की स्थिति कब और कहाँ थी, कठिन है। बल्लभ सम्प्रदायी गुरुजी तथा किंवदन्तियों से विदित होता है कि श्री बल्लभाचार्य जी विष्णु स्वामी सम्प्रदाय की उत्पत्ति नहीं पर भी और उन्होंने इसी सम्प्रदाय के सिद्धान्तों के आधार पर अपने सिद्धान्तों की निर्धारित किया। ऐसी ही कल्पना है कि महाराष्ट्र के सम्यक् ज्ञानदेव नामदेव, फैसल, त्रिभोज, हीराहाड और श्रीराम विष्णु स्वामी महा-पुरुषी थे। महाराष्ट्र में प्रचलित मान्यता थी, जो पीछे 'वारकरी' सम्प्रदाय कहाया वह विष्णु स्वामी महा का ही अवतार है। इसके अनुयायी ज्ञानदेव तथा नामदेव आदि कहें जायें।



जगन्गुरु निम्बार्काचार्य

निष्कार - सम्प्रदाय

निष्काराचार्य ने ज्ञानेश का प्रकार किया। इसमें अक्षर और शब्द दोनों का समान महत्व है। निष्कार के मतानुसार कि, अक्षर और अक्षर हीन परम सत्य है किन्हीं भी शब्दों, शीघ्र और किमंता की कहा गया है। शीघ्र और जग की कोई स्थिति सदा नहीं है। ये अक्षर के अक्षर हैं। कृष्ण के साथ राधा की महानता का सम्प्रदाय की विशेषता है। राधा कृष्ण के साथ व स्वर्गों के भी शीघ्र में निवास करती है। कृष्ण परब्रह्म हैं उन्हीं के राधा और मोक्षार्थी का वास्तविक पुत्र है। इस प्रकार राधाकृष्ण की उपासना ही प्रधान है। परमात्मा कान्त, सच्चिदानन्द स्वरूप सर्व निष्कार, सर्व व्यापक, निर्गुण, समुद्र अक्षर अक्षर और अक्षर हैं अविनाशिक हैं। कृष्ण ऐश्वर्य का मातृ के अक्षर हैं। उनके ऐश्वर्य का ही अविनाशिकी, रमा, उत्तरी का मु अक्षर के और प्रेम व मातृ का ही अविनाशिकी शीघ्र और राधा हैं। इस शीघ्र और "अ" के शीघ्र अक्षर और का है। शीघ्र निम्न भी हैं, अक्षर भी। अक्षर अक्षर है शीघ्र अक्षर और का है। शीघ्र हीन प्रकार के हैं :-

- १ - यह शीघ्र
- २ - मुक्त शीघ्र
- ३ - नित्य मुक्त शीघ्र।

मुक्ति के दो प्रकार हैं - का मुक्ति का दुर्भीमुक्ति।

वशिष्ठ धर्म के तीन भेद हैं :-

- १ - प्राकृत
- २ - अग्राकृत
- ३ - वात

ऋ के चार रूप हैं :-

पर कृत , अर कृत , अर कृत और परकृत । मन्वान की प्राप्ति का भक्ति ही उत्तम उपाय है, जो ही प्रकार की है - वापन रूप और पराकृत । कृष्ण ही उपाय है । राधा कृष्ण की - छाविनी तथा प्राणोत्थरी है, जिसकी शक्ति से मोक्षार्थी, भक्तिजन्यो उत्पन्न तथा हजारों शक्तियाँ उत्पन्न होकर उनकी सेवा करती हैं ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

कलम - सम्प्रदाय

कलमाचार्य श्री के अनुसार मुख्य पुष्टिमान भगवान के अनुसार ही राज्य है, पुष्टि मानों नृदेवतायः । कलम सम्प्रदाय में श्री कृष्ण की पूर्ण वाग्व्यवस्था पुरुषोत्तम परब्रह्म माना गया है । इस प्रकारों नित्य गुणों के मुख्य है, यह सनादीय, विश्ववीर्य और स्वयं के रहित है । इस के जन्म समय है, सर्वत्र व्याप्त रहने हुए भी जगती स्थिति है, उसके जन्म रूप हैं । यह शक्तिशाली और ज्ञाति है । परब्रह्म के तीन मुख्य रूप हैं - सत् चित् और वाग्व्यवस्था । वाः यह शक्तिशाली जन्म समान्य की कलावा है । इस कर्म के कर्म और भगवान के भगवान थे। जन्म भूति हीने हुए भी एक ही व्यापक है । जन्म सनादीय है । इस के तीन स्वरूप हैं :-

- १ - शक्तिशाली परब्रह्म
- २ - शक्तिशाली ज्ञाति ब्रह्म
- ३ - शक्तिशाली ज्ञाति ब्रह्म

कर्म भाव्य में वाग्व्यवस्था की है इस श्री स्व ज्ञाति का निमित्त और उपादान कारण माना है । इस ज्ञाति शक्तिशाली शक्ति द्वारा सत् का संचित् द्वारा चित् का सना पूजाविनी द्वारा वाग्व्यवस्था करता है । भुविर्वा के परब्रह्म की कलमाचार्य में पुरुषोत्तम पुरुषोत्तम माना है । श्रीकृष्ण की पूर्ण वाग्व्यवस्था, पूर्ण - पुरुषोत्तम, परब्रह्म माना गया है । ज्ञाति पुरुषोत्तम वाग्व्यवस्था ही का

करते हैं। इन अनेक शक्तियों के विविध रूप गुण और नाप होते हैं।
ये ही नी, स्वामिनी, कन पन्थावती, राधा और यमुना आदि हैं।
बीज शक्ति दो प्रकार की है - १ देवी शक्ति - २ बाधुरी शक्ति।
शक्ति शक्ति के चार प्रकार के हैं :-

- १ - कुल शक्ति
- २ - पृथ्वी शक्ति
- ३ - माता शक्ति
- ४ - प्रवाही शक्ति

बाधुरी बीज शक्ति दो प्रकार की है -

- १ - पुत्री , २ - वर । सुखादि विद्वान् के अनुसार यह शक्ति
जन्तु जन्तु रूप है इसलिये जन्तु के समान रहती है। जन्तु ही इस जन्तु का
निमित्त और उपादान कारण है। जन्तु ईश्वर जन्तु और जन्तु बीज
जन्तु है। माता परब्रह्म की सर्व मयन सर्वा अति शक्ति है जो परब्रह्म
के आधार है। शक्ति अनेकाने पाँच प्रकार की है - शरीर ,
शरीर , शरीर , शरीर और शरीर अनुपान्ति । शरीर
का उपादान है शरीर सम्बन्ध की शक्ति अनेकाने है।

सत्यमेव जयते

कैलास सम्प्रदाय

यह एक कुल्लु वैष्णव सम्प्रदाय है। महात्मा श्री -
कैलास प्रभु ने इस सम्प्रदाय की स्थापना की। कैलास सम्प्रदाय प्रभु उच्च-
दाय है अत्यन्त निष्ठ का सम्बन्ध रखता है। कैलास ने राधा की
प्रभुत्व स्थापना किया। कैलास ने राधा के अतिरिक्त अन्य, अन्य -
वात्सल्य और मधुर भाव की भी स्थापना किया है। कैलास की राधा-
पूज्या की मुख्य शक्ति, नाम और हीठा कीर्तन का उनके बीच में
ही प्रसार हो गया था। श्री कैलास महाप्रभु के बाद श्री स्व गौस्वामी-
जी ने शक्ति और स्व एवं स्व और सम्बन्धी अन्य मुख्य शक्ति, किन्हीं
की प्रभु हैं -

- १ - शक्ति स्थापना शिष्ट
- २ - उच्चतम नीतिशक्ति
- ३ - उच्च भाववतामृत ।

स्व गौस्वामी के कई मार्ग श्री उपाध्वन गौस्वामी ने
भी प्रभुत्व मुख्य शक्ति - श्रीमद्भागवत वल्लभ स्वरूप की टीका तथा प्रभु
भाववतामृत । कैलास सम्प्रदाय अतिरिक्त वैष्णववादी सम्प्रदाय कहलाता
है। इसी अनुसार परम तत्त्व एक ही है श्री शक्तिमानंद स्वतंत्र जन्म
शक्ति है उच्चतम तथा आदि है और उपाध्वन पैर है वल्लभ वल्लभ प्रभु
है अत्यन्त हीरा है। परम तत्त्व की अत्यन्त शक्ति अतिरिक्त होने के -
कारण यह स्वतंत्र, प्रकृत्य और अत्यन्त कारण का स्वतंत्र है। श्री
पूज्या में अत्यन्त मुक्त हैं। वे अत्यन्त अत्यन्त, मुक्तशक्ति अतिरिक्त

शक्ति है विशिष्ट है और पूर्णानन्द का का उक्त विग्रह है ।
 परब्रह्म के तीन रूप माने हैं - स्वयं रूप क्षेत्रात्मक रूप और लक्ष्य
 रूप । परब्रह्म स्वयं रूप की दृष्टि से जिसका रूप किसी की लक्ष्य
 करके प्राप्त नहीं होता । ये तब कारणों के कारण और अकारणः
 विशिष्ट हैं । की दृष्टि का पञ्चाकारिका रूप है जो पूर्ण है, सुखा
 स्वरा रूप है जो पूर्णतर है और तीव्रता गुणधन - प्रकीर्ण-रूप
 है जो पूर्णतम है । लक्षण के तीन प्रकार के अकार - गुणधनकार
 , गुणधनकार और तीव्रता कार है । परब्रह्म की दृष्टि का यदि
 अकार गुणधन है जो वाचस्पति की प्रकृति है । श्री कश्यप ने तीन
 कल्प माने हैं - ईश्वर, बीज, प्रकृति, काठ तथा कर्म । जन्म
 शक्ति सम्पूर्ण की दृष्टि की तीन प्रकार की शक्तियाँ हैं । अकारणा
 शक्ति उनकी स्वयं शक्ति है, अकारणा शक्ति माया या क शक्ति
 है और अकारणा शक्ति बीज शक्ति है बीज कर्म, भक्त्य और नित्य
 है । ईश्वर गुणधन और देवी है, बीज गुणधन और देव है । अकारण
 और अनीमृण की सम्पूर्ण की प्रकृति है । काठ नित्य और ईश्वर
 के लक्ष्य है । कर्म अकारण और नित्य कर्म फल है । ज्ञान और
 वैराग्य अकारणा हाथ तथा भक्ति की मुख्य लक्षण है । शक्ति माने
 की तीन लक्षणार्थ हैं - हाथ, माय और प्रेम । शक्ति की प्रकार
 की है -- मंत्री और राजाकुमार। शक्ति प्रेम और ज्ञान की
 शक्ति स्वरूप है और महा माय स्वरूप है ।

राधावल्लभ - सम्प्रदाय

कम्प्राप कर्मियों के समय में ही सुवर्ण कपाटना का राधावल्लभ सम्प्रदाय प्रचलित था, जिसके प्रवर्तक स्वामी चित्तरिमंज थे। चित्तरिमंज के यहाँ राधा कृष्ण केहि की संवादी तथा परि-
 वर्ण करने का ही लक्ष्य था। सम्प्रदाय के सम्प्रदाय में सुविज्ञान मान-
 सिक वृत्तियों के परिष्कार का ही लक्ष्य बताया है। इस सम्प्रदाय में
 राधा कृष्ण की प्रेम हीला के मन के आनन्द को परम सौ भावुरी
 भाव कहा है और श्रीकृष्ण की लीला की शक्ति की विशेष महत्त्व
 दिया है। राधावल्लभ सम्प्रदाय का प्रचार राधा प्रेम है। इस
 सम्प्रदाय में स्वीकारना का विधान है। इसी राधा की आराधना
 के बिना कृष्ण की आराधना का निषेध है। राधा स्वयं सर्वोच्च
 अधिष्ठात्री है। उनकी सेवा स्वीकृति परकीया के रूप में न होकर
 स्वयं रूप में है। शीघ्र ही राधा स्वीकृति होने पर ही रा-
 धा कृष्ण के नित्य विचार स्थिति में स्वीकृति परकीया भाव नि-
 र्दिष्ट नहीं है। इस सम्प्रदाय में राधा ही सब कुछ है। राधा
 ही हृदय, आराधनीय या उपास्य है। कृष्ण राधा के अनुयाय
 हैं, राधा के कृपा उपास्य हैं जो सभी को उपास कर रहे हैं।
 चन्दरी या चली ऊपर बीच के निचले रूप की परमाधिक स्थिति का
 नाम है। श्रीकृष्ण के परिमित और परिकर रूप और पर के फल से
 रहते हैं। वे यदा एक राधा की नित्य विचार हीला में मग्न रहते हैं।
 प्रेमाका कल्याण द्वारा विभिन्न रूप कल्याण न होकर भीतिक कल्याण
 है। इस सम्प्रदाय में राधा की मूर्ति स्थापित न होकर मूर्दी देवा है।

हरिदासी - सम्प्रदाय

स्वामी हरिदास जी सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। यह सम्प्रदाय वैदिक के ज्ञान का एक अलग ही वैदिक विद्वान् का प्रचारक न होकर नरक का एक साधक माने है। हरिदासी सम्प्रदाय सभी सम्प्रदाय की कथा कहता है। हरिदासी सम्प्रदाय के स्वामी विद्वान् हैं परन्तु यह निम्नलिखित सम्प्रदाय में ही प्रभावित होता है। स्वामी हरिदास जी भूतार्थों के समस्त सम्पूर्ण रूप से निर्धारण में ही मानते हैं। यह सम्प्रदाय वास्तव में वैदिक मुक्तता के दूर है और अपने स्वीकारना की प्रथाओं की कमी है। स्वामी स्वामी के प्रेम में एक सदा और नवीनता है। स्वामी विद्वान् के ही हरिदासी उपासना शुरू की वास्तविकता कहा जा सकता है। स्वामी विद्वान् के ही विद्वान् की ही नित्य विचार शुरू है। विद्वान् विद्वान् की ही नित्य विद्वान् के ही और अधिक है। विद्वान् विद्वान् की ही विचार विचार कहा जाता है। यह सम्प्रदाय का स्वामी हरिदास जी के समस्त का ही कथा शुरू विद्वान् की ही नित्य विद्वान् प्रवर्तक है। विद्वान् में स्वामी की ही सम्प्रदाय की नवीनता है।

निम्बार्क सम्प्रदाय सम्प्रदायी साहित्य एवं रुक्-रहितत्व

देवनाग धर्म के कुछ प्रसिद्ध धर्म प्राचीन चार साधारण माने जाते हैं। उन्हीं के नाम हैं श्री जैनारामण (चक्र) श्री (कर्म), रुद्र और इस चार सम्प्रदाय प्रसिद्ध हैं। ये हैं श्री श्री निम्बार्क, श्री रामानुज, श्री विष्णु स्वामी, श्री नन्द इन सम्प्रदायों के प्रचारक हैं। वर्तमान में हमें प्रचारकों के नाम पर देवनाग सम्प्रदायों के नाम हैं। निम्बार्क सम्प्रदाय के विस्तार की तीन भागों में बांटा जा सकता है। पूर्व युग, मध्य युग, एवं उत्तर युग कहा जा सकता है। पूर्व युग में निम्बार्कसाधारण एवं उनके तीन शिष्य श्री निवासाधारण, श्री बाहुम्वराधारण, श्री रा मुवाधारण जाते हैं। मध्य युग में श्री निम्बार्कसाधारण की तीसरी पीढ़ी से लेकर अष्टादश महात्मा का समय है। उत्तर युग की मद्र की के पुरु श्री केवल कर्मीरी मद्राधारण के प्रारम्भ होता है और उत्तरीतर इसका विकास होता है। श्री मद्र की के पूर्व के श्री साधारण रुक्-रहिततात्म के परम्परा श्री मद्र की उत्तर के मद्र प्रारम्भ है। श्री मद्र की का समय रामानन्द की है लगभग ५० वर्ष पीछे होता था। श्री मद्र की के " श्रीगुप्ता स्वीय " संस्कृत में लिखा है। उनकी प्रसन्न रक्षा " सुख अक्ष " है श्री प्रकाशा की सर्व प्रथम प्रविष्टि होने के कारण " सावि मायि " कहा है। श्री मद्र की के शिष्य श्री हरिश्चन्द्र के विवेक प्रभावशाली हैं। उनके शिष्यों द्वारा निम्बार्क सम्प्रदाय की सर्वोन्मुखी उन्नति हुई।

निम्बार्क सम्प्रदाय के सर्व प्रथम प्रसिद्ध संत कावाम
माने जाते हैं। निम्बार्क स्वामी वाङ्मय में श्रीवाधरी के उत्कर्ष

भक्तपूजन नामक स्थान में उन्मत्त हुए । निम्बाई की कृतियों के नाम इस प्रकार हैं -

१ - वैदाम्ब कारिकावली २ - वैदाम्ब कान्ति ,
३ - मन्त्र रक्त्य णीळी , ४ - प्रसन्न कल्पदली , ५ - प्रसन्न चिन्ता
मणि , ६ - गीता वाक्यार्थ , ७ - लक्ष्मी प्रकाश , ८ - श्रीकृष्ण -
प्रायःस्मृति आदि निम्बाईपादों ने भारत के विभिन्न स्थानों तक
की परन्तु उनका मुख्य निवास श्रीकृष्ण नामक था । निम्बाईपादों के
मुख्य शिष्य श्री निम्बाईपादों ने इस दुर्ग पर " वैदाम्ब कान्ति " नामक
पादों की रचना की । उनकी एक और रचना " भक्तपूजन स्तोत्र " है ।
उनकी एक और कृति " वैदाम्ब कारिकावली " कहाई गई है ।
निम्बाईपादों के दूसरे शिष्य श्रीकृष्णपादों की आते हैं । वे अपना
दुर्ग स्तोत्र रचाने लगे थे । इनके मुख्य हैं -

१ - श्रीकृष्ण - संख्या २ - निम्बाई स्तोत्र, इस
पञ्चक तथा निम्बाई पिटोति । निम्बाईपादों के तीसरे शिष्य श्री -
कृष्णपादों ने वैदाम्बारम्भ में रचना की और वह कृतियों का प्रसिद्ध
रस का गया । उनकी एक पात्र रचना " कृतियों पर कृति " प्रसिद्ध
है ।

निम्बाई और उनके शिष्यों के बाद सम्प्रदाय का
मन्त्र पुनः प्रारम्भ होता है । इस काल की परम्परा में विश्वापादों से
केवल ११ आचार्य और आचार्य में से १० मर चुके हैं ।

विश्वपादों निम्बाईपादों के शिष्य थे । उन्होंने
निम्बाई रचित " प्रसन्न चिन्तामणि " की टीका लिखी । विश्वपादों

ने " देवपारी खोत्र " नाम के बौद्ध के शैलीगत स्तुति लिखी ।
 विश्वाचार्य के लिखे विश्वाचार्य की है । इसका जन्म स्थान केतुना
 प्रदेश था । मुत्तभोत्तमाचार्य की ने निम्बार्क द्वारा रचित " देवान्त -
 कामेनु " या इस शैली की " देवान्तरत्न - मूं मंजुणा " पर एक
 मन्त्र टिका लिखी । एक पुस्तक ग्रन्थ " विद्वान्तरत्न परिराज्ये "
 की भी हन्वीने रखा की । देवाचार्य कवचान विष्णु के कण्ठ का
 कवच " कवाचकार " नाम से प्रसिद्ध है । देवाचार्य की की रकार्य
 " विद्वान्तरत्न कान्दवी " नामक कृत्य - धृति के देवाचार्य की धृति
 " विद्वान्तरत्न कान्दवी " पर टिका की । निम्बार्क कृत " मंत्र रत्न-
 शोभनी " की पुस्तक आख्या की थीं कन्धार्य - रत्न " नाम से
 प्रसिद्ध हैं ।

उत्तर पुन वाचार्क के नाम काश्मीरी के प्रारम्भ कीतर
 वर्तमान नाम का नामा काचित । केतु काश्मीरी चौदहवीं शती में
 हुए । केतु काश्मीरी पालिका है । केतु काश्मीरी ने नीलारत्न
 प्रसाज्जा, कीर्तुम प्रसा, मुम्बकोपनिषद नाम की मन्त्रानवत
 " देवस्तुति, टिका तथा उन कीपिता ग्रन्थ लिखे । केतु काश्मीरी
 की के लिखे कीमदु और उनके लिखे हरिश्वास के की हुए ।
 निम्बार्क मन्त्रानवत का उनके द्वारा लिखे नामास मुक्त ।

हरिश्चातदेव की वे लोक शिष्य श्री परन्तुलकी हाथ शिष्य
मुक्त थे। इनके नाम पर बारह द्वारे क्योर् बारह शिष्य हाथार्थ
प्रतिष्ठित हुए। श्री गुरु की के एक गुरु माई संजयदेव
थे। इनकी भेष्यावर्ग की 'गुरु' - 'मंकी' - 'गुरु' की रक्षा थी।

हरिश्चातदेव ने सन्त्रास का व्यापक विस्तार
किया, इनके प्रधान बारह निम्न शिष्य थे -

स्वमुरादेव, वीरदेव, मन्त्रीपाठ देव,
उदय कण्ठदेव, वासुदेव, परशुरामदेव, गोपाठदेव, वृषभदेव,
माधवदेव, भैरवदेव, उग्रासीपाठदेव, वीर मुकुन्द देव। हाथार्थ
की 'हाथार्थ' एवं कौं की जाति अन्य शिष्यों की भी प्रतिष्ठित
थे। हरिश्चातदेव के बारह शिष्यों में थे स्वमुरादेव एवं परशुराम
देव की की हाथार्थ का विशेष विस्तार मिलता है। हरिश्चातदेव की
के बारह शिष्यों में थे श्री स्वमुरादेव की का बहुत ऊंचा स्थान है।
उनके कौंथ उपदेशार्थों का नाम 'स्वमुरादेव' दिया है।
स्वमुरादेव की के शिष्य कन्ध देवाचार्य की भी नामों के प्रतिष्ठित
है। कन्धदेव की के सभी शिष्य श्री परमानन्द देवाचार्य थे।
द्वारे शिष्य गुरु देवाचार्य थे। वीर शिष्य श्री गारायण देवाचार्य
थे। वीर शिष्य श्री रासीपाठ देवाचार्य थे। पवन शिष्य की कर्ण -
देवाचार्य थे।

वीरवी आठवी के प्रारम्भ में १० रामकन्द गीत
 कहे ठेक हूँ किन्हीं पुष्पों में नु कल्पवृक्ष शीरम १ स्वकादिक-
 वीर १ नायकी निवृत्ति १ जादि अन्य छिने । हरिष्ठासके
 की के वारह शिष्यों में परशुरामके वीर १ संख्या बटवी है ।
 जानन्द का, रसिकीकिन्द पुन्नावनके, नागरदास जादि कई
 मस्तकपूर्ण कवि हय साक्षा में हूँ । शारित्यक दृष्टि से भी यह
 साक्षा जगत्परी रही । परशुरामके की के द्वारा हय द्वारे का
 प्रारम्भ हुआ । सहेमावाद के प्रकल्पविज्ञानी की विद्योनी -
 विलेखर ने परशुराम सागर के वीरों का संकल्प प्रकाशित किया ।
 किन्तु कल्पित में उनके द्वारा रचित कवि गुरुओं का उल्लेख है
 परन्तु साम्प्रदायिकों में केवल परशुराम सागर ही प्रसिद्ध हैं ।
 परशुराम सागर में ही पाँचों गुरुओं का समावेश है । परशुराम
 सागर एक विज्ञात ग्रन्थ है । यह उनकी समस्त वाणिज्यों का
 संग्रह है । जैसे विज्ञातग्रन्थके नीति, अनुपम, उत्तम, सन्ध
 स्वल्प निरूपण, नायक का त्याग, प्रकल्प कर्म, फलसु उद्योगाति
 सन्धास, कल्पित, दास नायक, ज्ञान, कर्म गुरु देवा जादि लोक
 धार्मिक विषयों पर रत्नाहं हैं । परशुराम सागर का प्रकाशन
 डा० रामप्रसाद झा के चार भागों में कीर हैं किया है ।
 डा० द्वारकाप्रसाद मिश्र ने भी परशुराम सागर का सम्पादन
 किया है, परन्तु यह सुप्रसिद्ध नहीं है । डा० रामप्रसाद झा का
 कल्प है कि परशुराम सागर के केवल पद बीरकर बना कवि -
 परशुराम सागर की वीरों का निर्माण किया गया । उस प्रकार
 जाय १ परशुराम सागर के नाम से परशुरामके वृक्ष ३० गुरुओं का
 संग्रह उपलब्ध होता है, किसी कभी कभी रत्नाहं के आधार
 पर निम्न चार कण्डों में विभक्त किया है -

१ - परशुराम सागर १० डा० रामप्रसाद झा

- (१७) बाण्टी सही संज्ञा मुद्रा २२२५ दोहों का एक मुद्रा
 (१८) कविता, धर्मोपनिषद् में राखि मुद्रा हन्द, कविता है प्रकाश
 धर्मोपनिषद् १५ मुद्रा
 (१९) धर्मोपनिषद् हन्द बाण्टी हीठाऊ है विष्णुकीसी हीठा मुद्रा
 धर्मोपनिषद् १२ मुद्रा
 (२०) धर्म पदावली ६३० धर्म पदावली का एक मुद्रा है ।

परशुराम धामर का परिष्कार धर्मोपनिषद् का ० राय-
 प्रकाश धामर में लिखा है " परशुरामके द्वारा विरचित उन मुद्राओं
 का मुद्रा संज्ञा परशुराम धामर के नाम से लिखा है किन्नाह है किन्नाह सही
 प्रकाश धामर का निर्माण किन्नाह नामा द्वारा " परशुराम
 धामर के नाम से सं० १६०० वि० में किया गया था तथा किन्नाह
 धर्मोपनिषद् मुद्राओं का संज्ञा किया गया था :- १ बाण्टी
 सही मुद्रा की समान २२२५ दोहों की मुद्रा रखा है । २- हन्द
 कविता धर्मोपनिषद् हन्दों में राखि मुद्रा मुद्रा १, २ - प्रकाश हन्द ,
 ४ - धर्मोपनिषद्, ५ - धर्मोपनिषद् धर्मोपनिषद्, ६ - धर्मोपनिषद् धर्मोपनिषद्,
 ७ - धर्मोपनिषद् की धर्मोपनिषद्, ८ धर्मोपनिषद् धर्मोपनिषद्, ९ -धर्म बाण्टी की
 धर्मोपनिषद् १० मुद्रा, ११ धर्मोपनिषद् धर्मोपनिषद्, १२ - धर्म धर्मोपनिषद्, १३-
 धर्म धर्मोपनिषद्, १४ - धर्मोपनिषद्, १५ - धर्मोपनिषद्, १६ प्रकाश धर्मोपनिषद् ,
 १७ - धर्म बाण्टी हीठा, १८ - धर्म धर्मोपनिषद् हीठा, १९ धर्मोपनिषद्
 धर्मोपनिषद् , २० - धर्म, २१ - धर्मोपनिषद्, २२ - धर्म, २३- धर्मोपनिषद्
 २४- धर्मोपनिषद्, २५ - धर्मोपनिषद् हीठा, २६- धर्म हीठा, २७ -
 हीठा, २८- धर्मोपनिषद् हीठा २९ - धर्मोपनिषद् हीठा ।

का० रायप्रकाश धामर का कथन है कि परशुराम
 धामर का धर्मोपनिषद् धर्मोपनिषद् धर्मोपनिषद् सं० १६३० वि० में धर्मोपनिषद्

ज्यास
मन्ताराम द्वारा किया गया था। मन्ताराम ज्यास ने परशुराम
बाणी में परशुरामके कृत ६३० गेय पदों को और चौक किया
और इस प्रकार परशुराम बाणर के नाम से परशुरामके कृत सभी
शक्तियों की छिपि बढ़ कर दिया गया। विप्रमूर्ति जी का मुख्य
की पुष्पिका के ऊपर में परशुराम बाणी का छिपि काष्ठ सं० १६००
तब बंका किया गया है, यहाँ छिपि कहां का नामोष्ठ नहीं हुआ
है। परशुराम बाणर के निर्माण की वास्तव्यता के सम्बन्ध में
डॉ० रामप्रसाद झा का विचार है कि सं० १८२५ वि० में बुरखानर
की सर्वप्रथम पीपी केसर की मयी और वैष्णव मंदिरों में इसके
मजि के पदों के जीवन की प्रथम व्यापक हो रही थी कि ऐसी ही
परिस्थितियों में बुरखानर के मकान पर परशुराम बाणर का निर्माण
हुआ किमें परशुराम बाणी के अतिरिक्त परशुरामके ६३ गेय और
रागवद्ध जीवन पदों को और चौक किया गया।

यह भी कहा जाता है कि सं० १६०० वि० के
परशुव और संवत् १८३० वि० के पूर्व की किसी काल नामा -
परशुराम बाणर की मूल पीपी का निर्माण कर दिया गया था
तथा इसके आधार पर संवत् १८३० वि० में मन्ताराम ज्यास ने
कमी बलि कोषा के प्रथि एक और प्रविष्टिपि बढ़ की क्योंकि
मुख्य की अंतिम पंक्तियाँ इस समूह की और भी संवेद करती है।

-
- १ - परशुराम बाणी पु० १६२० डॉ० रामप्रसाद झा ।
 - २ - इति श्री श्री श्रीपरशुरामके कृत मुख्य रागबानर सम्पूर्ण
सं० १८३० वि० के अष्ट पदी ६ गुणाधरी, छिपि कृत
ज्यास मन्ताराम पञ्चाशे बाई कोषा ।

पर वह मूल पीपी क्राय है ।

परशुराम की के द्वारा रचित केवल एक पुस्तक
मुख्य परशुराम धारण की है । डा० नारायणदास जहाँ मूल रूप से
इसके तीन खण्ड करने के फल में हैं । १ - धात्री , २ - धात्री
कथा परिचय - ३ पद ।

धात्री -

परशुराम के की के अनुसार धात्री की सेवा कर्म
के विषयमें ईश्वर विन्यस्त धर्म के कथा ईश्वर विन्यस्त में प्रमुख व
कर्म की कथा धात्री के धात्री में विभिन्न उपायों पर ईश्वर
स्मरण, धात्री की आराधना, निष्कल धर्म, धात्री स्मरण
परमेश्वरी प्राण, विवेक, धर्म कथा, विवेक, धर्म धर्म, निष्कली
राजकुमार, धर्म धात्री, कथा, धर्म धर्म धर्म धर्म धर्म धर्म
की प्रतिपादन हुआ है । परशुराम धारण में २५० विविध कीड़े
धात्रियों के वर्णन संश्लेष हैं । इनमें से प्रत्येक कीड़े में दो तीन
से लेकर लगभग ५० तक धात्रियाँ उपादिष्ट हैं । कुल धात्रियों की
संख्या २२०५ है ।

-
- १ - परशुराम धारण पुस्तक डा० रामकृष्णदास जहाँ
२ - निष्कली धर्मधाय और धर्मधाय धर्मधाय धर्मधाय पुस्तक २०५
डा० नारायणदास जहाँ ।
३ - परशुराम धारण धर्मधायधर्मधाय धर्मधाय पुस्तक १२१ पद १२१

छोटा कवचा परित्र वर्णन ३

इन तीर्थों के वर्णन प्रविष्ट
 वाक्की न ही छोटा ही नहीं जो चक्री है और न परित्र ही ।
 परन्तु परहुरानेन ही के कवच में वाक्की कर्म कवचा सामान्य वाक्का
 परक विषयों के वर्णन की जगह ही छोटा कवचा परित्र कवच
 ही वर्णन किया है । डॉ० नारायणदास उपाध्याय ने अपनी संस्था
 २६ बताया है । 'कवच छोटा', कूटन कवचा किंकीरीत्यन, ज्ञान-
 विज्ञान और कर्म विषय की कोशा वाक्की ही मुक्ति का साधन
 सही नाम, कुंभार के संयोग और विनोद कला, विद्या, देव्य,
 सत्कर्म जाति विविध विषयों पर लिखा गया है । वाक्की परित्र
 एवं छोटाओं की रचनाओं से उनकी रचना अत्यन्त सरल और
 प्रामाणिक है । विविध प्रकार के फलों की विशेषता मात्र में
 रचना उनके संयोग ज्ञान पर अधिकार की नीति है । उनके फल
 फलों का माया का सम्बन्ध है दूर और सुखी के सम्बन्ध है ।
 उनके फलों का योग डॉ० नारायणदास उपाध्याय ने ६२० बताया है ।

श्री परहुरानेन के विषय भी परित्र -
 देवाचार्य के संस्कृत में है जो समीप उपलब्ध है । श्री नारायण
 देवाचार्य परित्र देवाचार्य के परमात्मा परहुरान पुत्री की कृती पर
 वाक्कीन हुए । इनकी संस्कृत में वाक्का परित्र लिखा है । श्री
 नारायणदेवाचार्य के विषयों में श्री मुन्नाकदेव परम प्रामी
 एवं कवि का के प्रामाणिकी महापुरुष है । उनके नाम का संस्कृत

१ - निम्नार्क सम्प्रदाय और उनके पुष्पा पत्र हिन्दी कवि

पुष्प ३०० डॉ० नारायणदास उपाध्याय ।

१७२५ से १७२७ तक उत्पन्न मित्रता है।^१ मुन्दाकवि ने गीतागुप्त गंगा
 की दास कंत एवं कुल परिवार चन्द्रिका की रचना की। गीतागुप्त
 गंगा एक बाणी ग्रन्थ है जिसमें कवियों ने विविध विषयों पर
 लिखा है। उसमें काव्य द्वारा मन्दाकिनी की नाँव काकावि
 है बहती है जो कवि ने दोबह बाटी में बाँकी का प्रकाश किया
 है।^२ गीतागुप्त गंगा, भाषा, भाव काव्य, शीर्ष, छेदी, रस-
 प्रकाश की पुष्टियों से प्रीट रखा है जो कवि बीक की-मस
 परिवर्तन दासता एवं कृपुति का प्रतिकृत है। साम्प्रदायिक
 कर्मादानुसार इस ग्रन्थ में भी राधाकृष्ण की वाच्यता छेदी का
 प्रतिपादन है। बाह्य योग्य एवं केहीर छेदीकी का भी रचन
 हुआ है। कवि ने राधा की के-मकीका भाव पर विशेष क
 किया है। परकीका वाच्यता की कृती, कार्य मान, विरह, संकीन
 वर्णन आदि विषयों का भी समावेश है। परन्तु विशेषता -
 स्वकीका भाव की की मानी गयी है। कवि के अनुसार सन्निधानं
 मवान की रस स्वल्प है। भीरावा छेदी का की काकुताकिनी छेदी
 है जो रसकी न रकर प्रत्येक समय उनके साथ रमन करती है।
 मवान मानी मुविमान भुंगार की है जो रस कीषक छेदी के साथ
 प्रम में विहार करते हैं। भीकृष्ण की नाँव भी कृष्णानु सुहारी
 का कन्तीरुप, उनकी कन्त नाँव एवं बाह्य पाह की स्थियों का
 उनके दली के छिप जाना सुन्दर रूप का वर्णन हुआ है। रावकुमारी

१ - गीता गुप्त गंगा मुद्रिका भाग पृष्ठ सं० १५५ सं० भीकृष्णकृत

२ - गीतागुप्त गंगा की मुद्रिका पृ० १५५ सम्पादक " " "

सुख और विद्वान्म सुख का कदा मूल्य है। सत्सरी भाषावन्त
 सामान्य ही निर्याविकारी परम उत्तम भीरावाकृष्ण के देवा सुख
 का वास्तविक कर सकता है। महाबाणी में सामान्य विद्वान्म
 का कदा गम्भीरता है वर्णन हुआ है। उपास्य उत्तम मानवत्वं और
 सत्ता उत्तम निरूपण में महाबाणी, कार की प्रति रहीं है। श्री
 राधाकृष्ण, सत्ता मुन्दावन उत्तम किन्तु में श्री हरिश्चातदेव ने
 निम्नार्थ के देवादि मय का कथरण किया है। ज्ञान, बीज, ज्ञान
 कादि के विवेक में श्री हरिश्चात देव ने परम्परागत स्वाभाविक
 देवादि ज्ञान मैदानेद सम्पन्न की जनाया है। मायुषी मक्ति रस
 का यह कथन मुख्य है। स्वर्ग संस्कृत - सत्तन - महाबाणी सुख प्रक-
 भाणा का साहित्य वर्णीय है।

श्री परशुरामदेव की रक्षाओं का संकट ही परशु-
 राम रामर नाम से दिखता है। परशुराम राम में निम्नार्थ के
 देवादि मय का प्रकट ज्ञान है। ज्ञान मय का वैशिष्ट्य प्रतिपादन
 बीजवाद, स्वरवाद, सत्त्ववाद, महात्वावाद ज्ञान कथनवाद
 का निरूपण हुआ है। यह मुख्य में ज्ञान कथनवाद का प्रति प्रति
 की निरूपण है। इसमें कथन विज्ञान एवं सत्त्ववाद की भाव-भाषि
 केने की निरूपण है। ज्ञान, बीज, ज्ञान, माया मक्ति कादि के
 विवेक में स्पष्ट, गम्भीर एवं समन्वित ज्ञान ज्ञान है।
 ज्ञान, ज्ञान और मक्ति का विवेक विवेक हुआ है। परशुरामदेव
 ने देवादि मय के प्रतिपादन में सटीक कथरण किया है।

श्री गोविन्दहरण देवाचार्य की बाणी, गोविन्द-
 हरणदेव की बाणी के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें संवत्सरिक -

हरणागति, कर्मात्मिका, उच्छ्रयान देवा विमान, राधाकृष्ण
स्वयम् वर्णन नित्य विहार उत्पन्न विन्मन तथा वाम्पुत्राधिक
मार्त सिद्धान्त का निरूपण हुआ है ।

भक्तिपाठ की स्वामी हरिदास की प्रणति
है । यह एक पर्व की रचना है । जहाँ एक सिद्धान्त के पद हैं ।
सिद्धान्त के पर्वों में मार्त, क्षम, वैराग्य आदि का वर्णन विवक्षित
हुआ है । भक्तिपाठ रक्षा का उद्देश्य मार्त एक सिद्धान्त का प्रति-
पादन है । जहाँ निम्नार्थीय रक्षापद्धति प्रदर्शित हुई है । जहाँ
हरी माधोपद्धति का वर्णन है आचार्यों की वाणी में निम्नार्थ
सम्प्रदाय की विस्तृत हरिदासी परम्परा के श्री दीक्षविपुल्लभ,
श्री विद्याविनोद, श्री गान्धीदेव, श्री परमदेव, श्री गान्धीदेव,
श्री रघुदेव, श्री श्रीरामदेव, श्री श्रीरामदेव इन आठ आचार्यों
की आत्मिक पाणिनीय संगृहीत हैं । हरिदासी परम्परा के जहाँ
आचार्यों की स्वामी रघुदेव देव " रघुदेव की की वाणी है ।
निम्नार्थीय मार्त एक ही सिद्धान्त का निवेदन नहीं बल्कि एक ही
प्रांशु वाणी में हुआ है । श्रीरामदेव देव के दिव्य भित्री वाणी
की है " निम्नार्थ सिद्धान्त " की रचना की है । जहाँ एक पद का
हामी निम्नार्थ सिद्धान्त के भारी वर्णन में हुआ है । श्री रघु -
गोविन्द की है " श्री कृष्ण एक वाणी " की रचना की है ।
मुनक एक वाणी में श्रीराम देव, हरी, मुन्दाका, उत्तमविन्दन
के भाव नीचे विस्तार देवों की गिरी हैं । श्रीराम देव वाणी का
कृष्ण मुन्दाका का वाणी उत्तम के रूप में वर्णन है । श्रीरामदेव
मित्र में श्रीराम देव मुन्दाका का वर्णन किया है । जहाँ यह
जहाँ श्रीराम देव देवों के ४१ मुन्दाका का संग्रह है । श्रीराम

दुःखावली में संक्षिप्त प्रेम चरित्र, दुर्वाचारा, चरित्रकाव्य अनुभव
चन्द्रिका, रंग कर्ण, प्रेम पदवि, विचार-सार, माया प्रकाश,
दुःख कीमुदी, नाम कलकार, श्रिया-प्रभाव, दुःखाका मुद्रा,
प्रमत्तक, फीस मंगरी आदि रत्नाली में निम्नाकीय मणि सह
एवं विद्वान् का कर्ण सह विवेक है।

जीवद्वार दुःखावाच ने 'मायुष उदरी' का
प्रकाश किया। इसमें निम्नाकीय बीरावाकुष्ण के छिछा वर्णन
की मध्य माली है। इसमें प्रभाव भावों मुणों के युक्त प्रमत्त
देखने की शिष्टी है। इसमें निम्नाकी प्रकाशित स्थापानिक देवादेव
परी का प्रकाशित युवा है। निम्न विचार सह कर्ण में कर्ण की
शुद्धि निम्नाकीय सह-विद्वान् के वाचर मर की उदर माली है।

जीवद्वार की ने 'निम्न चार' की रत्ना की है
सह प्रमत्त में देवादेव वर्णन का संक्षिप्त एवं सा लपित विवेक है।
चरित्रका का विवेक की सह प्रमत्त का मुख्य प्रतिपाद है। देवादेव
वर्णन का चार इसमें निम्नाकीय सह कर्ण में दम्पति स्थापित एवं
'मणि स्तोत्र' प्रमत्त कर्णित की म द्वारा प्रकाशित है। इसमें मणि
ज्ञान, वेदाङ्ग, दम्पति-रत्नाकर का दम्पति और उपासनावत्तादि का
निर्माण निम्नाकीय विद्वान्द्वारा किया गया है। निम्न दम्पति
राजाकुष्ण का विवेक, कर्ण, मरत्तन के रूप में विवेक किया
गया है।

बी. मायुषी की 'बी. मायुषी' में निम्न
प्रमत्त मायुषी निम्न मणि मायुषी तथा चरित्रावर्णन मायुषी की

रचना की । हममें प्रेम माधुरी केहि माधुरी और स्व माधुरी का
उत्तर वर्णन है । लड़ी माधुरी की ने लड़ी और मुन्दाका जन्म
किन्तुन में स्वाभाविक देवादेव जन्मा भेदा-भेदादी दृष्टि बसाध
है । हममें माध माधुरी तथा प्रेम माधुरी का काव्य योन्मय -
दृष्टय्य है ।

[illegible]

पुनर्जागरण -

क्रयूत्र, उपनिषद् और गीता दोनों को प्रधान-
 ज्ञान की संज्ञा दी गयी है । क्रयूत्र पर भी निम्बार्कचार्य, श्री नि-
 बाधचार्य की संस्कृत में मुक्ति-वाक्य और टीकाओं का विशेष महत्व
 है । क्रयूत्र का वाक्य उपनिषद् है । निम्बार्कचि आचार्यों ने कहीं
 सिद्धान्त विशेष के अन्वय में उपनिषद् सूत्रों का वास्तव प्रयोग किया
 है । निम्बार्कचि आचार्यों ने श्रीकृष्णचर्च गीता पर विस्तृत भाष्य
 लिखे हैं । उन्वदि श्रीमद्वेद गीता पर विस्तृत भाष्य लिखे हैं ।
 परमार्थ आचार्यों के प्रधानज्ञान के भाष्यों में उनके उद्घरण यही की
 गयी है । वेदादि का जो उन्वर्ण केवल प्रधानज्ञान के वाक्य पर

निर्मित है। निम्नार्थ सम्प्रदाय में प्रस्थानार्थी का विशेष महत्व है। देवादिवादी निम्नार्थी वाचार्थों में श्रीमद्भागवत, प्रमोद पुराण, क्रमपुराण, पद्मपुराण, नारदीय आदि पुराणों को विशेष महत्व दिया है। जिन पदों के प्रतिपादक में उनकी प्रशंसा का आवश्यकानुसार प्रयोग किया है।

स्परधित्वेन मे हरिभ्यास यशस्तु की रक्षा की
विधिं हरिभ्यासैव के यश का वर्णन है। "हरिभ्यास यशस्तु" की
प्रातिपदक पंक्तियाँ निम्न प्रकार हैं :-

श्री हरिभ्यासहरिप्रिया रूप दिवसी तुया भ्रातृ ।
श्री हरिभ्यास देव यशस्तु धामर शिखी भ्रातृ ॥
जगत् कल्प, क्रन्द नामा भिषि ली कहरि यशस्तु ।
युक्त रत्न दाई यशस्तु स्परधित्वेन यशस्तु ॥

"युक्तुत्तम भणित्वा" में यशस्तु, नाम तुम्हा ५ पैकरी,
श्री कृष्ण भणित्वा दावली, नाम श्री तुम्हा १२ तुम्हा के भगवान के
हस्तों के यश नामा रामराज्यार्थों में वर्णित हैं। जहाँ २२५४, श्री
हजार श्री श्री श्रीराज्य भणित्व हैं।

देवता भरण तुम्हा, श्री श्री श्रीराज्य भणित्व ।
युक्तुत्तम भणित्वा श्री संख्या रत्नी भणित्व ॥

जहाँ जहाँ के श्री श्री श्री निम्न प्रकार हैं :-

१ - हरिभ्यास यशस्तु स्परधित्वेन यशस्तु १

प्रथम धुमिरि की गुरु धरणा, करन सकल जगज्जल ।
 ताहुं कृपा कर कल्य ही, पुण्डुसुख पाणिनाथ ॥
 करि करम कान्त ते, बिंका डावडी बाळं ।
 कपरसिक या नाम को, हो वन धत्य कडाळं ॥

“ छीठा विंकावि ” में बीस छीठाजी का दर्शन है ।
 बीस छीठाजी के नाम हैं । — १ - का सिद्धा मंजरी,
 २ - सा मंजरी, ३ - रसिक मंजरी, ४ - सा मंजरी, ५ - प्रेम-
 मंजरी, ६ - का विजय, ७ - नित्य विजय, ८ - रविविजय
 ९ - रवि विजय, १० - कूट विजय, ११ - नाम माधुरी,
 १२ - वाक्पूर्य माधुरी, १३ - गुन्वाका माधुरी, १४ - सिद्धान्त
 माधुरी, १५ - करि भाऊ माधुरी, १६ - सा रसुख, १७ - वनेष
 सुख, १८ - स्वयम् सुख, १९ - सुखान सुख, २० - लोरी सुख ।

“ नित्य विहार पदावली ” अपनी सुन्दर रचना
 साहित्यिक दृष्टि से इसमें जगज्जोति की साहित्यिक प्रतिभा परि-
 कल्पित होती है । इसमें १२० पद हैं । यह भीड़ रसता है । इसकी
 भाषा सरसार्थ है और इसमें भाव भावी है । इसी कारण इसे
 रंगीत कीट सभी घर में ली ली है देखी :-

राज्य रंगीत कीट रंग पल्ल रसनी ।
 सु सु सुखान नरा-वीर न रनाय म ।
 बाव कतराव बाव बाव पुनन में गी ॥ टेक ॥

१ - पुण्डुसुख पाणिनाथ कपरसिकेन पुण्ड १

लोढ़े पर एक लोढ़े गरि निभंक के निभट ,
 मानहु सुख -सखर में छे मुख मयंक छे ।
 रूप रसिक नम निभोर केसर नीर खान नीर
 कलु उरवि नीर बौ निभोर करवति रहे ॥

एक सुवरा उदाहरण देखिये :-

नीर बंटिका में निभरा में बाखीधर में
 निभरि की लोरी में उरीर निभरि छे ।
 के पूर कास में नरी में लुड बंटिका में
 मुरही में निभरि रहे कुर लुवा लो ॥१॥
 पादांबर में प्रियत करि ररि नुरा में
 बरिबी कुर रूप रसिक की की ॥
 नीर नीर के लुवि लो लुन लुनाय लुभि
 रामे लु के नाय नी रकार लु में की ॥

वास्तविक दृष्टि से इनकी समानता उच्च-गोटि
 की है ।

१ - निभरि निभरि पदावली - रूप रसिकीय पृष्ठ ८७६

२ - " " " " " " " " ८८-८९-९०

चतुर्थ अध्याय

रूप रसिक देव के दार्शनिक सिद्धान्त

आचार्य निम्बार्क के दार्शनिक सिद्धान्त

निष्कारण के मतानुसार की कृष्ण की परब्रह्म है। ये शीघ्र ही
हीन कल्याणानुष्ठान की शक्ति, अथवा समुद्र में डूबीयमा पर है। हरिश्चन्द्र के
की दश लौकी के माध्य में जल की बीच बसाये हुए की कृष्ण की शक्ति
अथवा वीर कल्याण तथा वीर वंशीज के व्याप्त बसाये है। अथवा
उपनिषद् के नहीं है। यह बीच बात के निरूपण के अथवा है नहीं है।
कृष्ण की शक्ति विकल्प तथा कल्प है। ये ऐश्वर्य तथा मातृव शीघ्र के
काय है। उनकी "रमा" लक्ष्मी तथा "मु" शक्ति उनके ऐश्वर्य रूप की

१ -	विज्यावित्त पत्र लोकी	परिष्कार के -	पृ० २०
२ -	"	"	लोकी ४
३ -	"	"	पृ० २

वशिष्ठाजी है । गोपी और राधा उनके प्रेम और नाचों की वशिष्ठाजी है । मनवान मुक्त, गन्ध, गोपी, ज्येष्ठ, कृष्णार्जुन तथा स्वयम्भुव सत्तावान है । श्री वशिष्ठाजी के का जन्म है , " उनका वशिष्ठाजी-व्यात्मक विग्रह है कृष्णार्जुन में नित्य स्थित है । कृष्ण में वे दिगुन्मत्त रूप हैं और आराधित में कर्तुन्मत्त हैं । वे सर्वज्ञ, सर्व हेतुर्ग्य पूर्ण, सर्व कारणत्व, सर्वज्ञ रित्य - श्रीहार्द, मुक्तता, करुणा आदि गुणों के रत्नाकर तथा महामहत्तव्य है । निम्नार्क सम्प्रदाय के उपास्यवैव कृष्णार्जुन हैं श्री वशिष्ठाजी प्रेम और नाचों की वशिष्ठाजी और राधा तथा अन्य आत्मादिनी गोपी - स्वरूप अर्चयों से परिनिष्ठित रहती हैं ।

- १ - निष्पादितस्य श्लोकी - हरिव्यास देव पृ० ३८
 २ - पुष्पमानुषादिजिह्वं पुष्पात्सत्स्वर्गं शरीराद्यदीयं नितरां ह्यन्य
 नाथेन यवणादिभिरनुज्जीय नित्यम् : ।
 निष्पादितस्य २ वरश्लोकी , हरिव्यासदेव पृ० ३२

जीव

जीव कणु परिमाण है और स्वा है। प्रत्येक शरीर में जीव भिन्न भिन्न हैं तथा प्रत्येक जीवन कल्प और मोक्ष की योग्यता से युक्त है। जीव सर्वदा मनवान के अधीन है। अंतर प्रेरक है तथा जीव प्रेरमान है। जीव अनन्त हैं।^१ ज्ञा संज्ञी और जीव वेद है। जीव सर्वदा मनवान के अधीन रहते हैं।^२ जीव ज्ञादि पाया है मुक्ति है। निम्नांक दश श्लोकी में जीव दो प्रकार के कहे गये हैं - एक मुक्त जीव तथा दूसरे बद्ध जीव। हरिव्यासदेव ने कभी कल्प पात्र में मुक्त जीव दो प्रकार के कहे हैं, नित्य मुक्त और धातु मुक्त। निम्नांक पात्र में दश प्रकार जीव तीन प्रकार के हैं - बद्धजीव, मुक्त जीव और नित्य मुक्त जीव।

बद्ध जीव -

ज्ञादि की शक्ति का विना है बद्ध जीव वात्सा तथा वात्सीय वस्तु का देव मनुष्यादि देव में तथा उसी सम्बन्धित वस्तु में का अधिमान करता है ही उसे बद्ध जीव कही है। बद्धजीवों की कल्पना में वारवन्ध है। संसार मोक्षान्ति के विनाश होने पर मुक्ति होती है। वस्तुतः के काले मार्ग का अनुसरण करने पर ज्ञान में मनवान की वस्तुतः पुनः कल्पा प्रदान प्राप्त होता है। मनवान की पुनः के कुछ स्वरूप बद्ध जीव मुक्ति पाता है। निम्नादित्य दशश्लोकी की पात्र में हरिव्यासदेव ने मुक्ति दो प्रकार की बताई है ज्ञान - मुक्ति तथा सम्बन्धमुक्ति।

१ - निम्नादित्य दशश्लोकी हरिव्यास श्लोक १

२ -	॥	॥	॥	श्लो ५
३ -	॥	॥	॥	श्लोक २
४ -	॥	॥	॥	श्लो १५
५ -	॥	॥	॥	श्लो १२

जो निष्काय करे तथा विविध पुण्य कर्मादि करके स्वर्गादि लोकों के आनन्द लेवे हुए सदाकाठीन में स्थित होते हैं और प्रथम-प्राप्ति पर ज्ञान में सामान्य ज्ञान करते हैं वे पुन मुक्ति पाते हैं। भवणादि भक्ति है जिसका संसार बंधन टूट गया है और जो मनवान की कृपा के भागी हो गये हैं वे सप्तमुक्ति में हरिण या कुम्भा लोक में जाते हैं। निष्काय - सम्प्रदाय में मनवद् देवा भक्ति तथा उनकी कृपा द्वारा प्राप्ति मुक्ति की वदकृत कहा है। हरिणाद्यदेव में परब्रह्म मनवान, श्रीकुम्भा के दो रक्षकों के अनुसार मनवान के लोकादि प्राप्ति की मुक्ति की दो प्रकार का भावा है एक ऐश्वर्यानिन्द्य प्रमान दूसरी हेमानन्द प्रमान। जो बीच निष्काम भाव है मनवान की देवा तथा उनकी प्रेम करते हैं मनवान कीदेवा के आनन्द की मुक्ति मिलती है। जो बीच सजान भक्ति करते हैं उनको मनवान के लोक में ऐश्वर्यादि का आनन्द मिलता है।

मनवान

मनवद् सामान्य ज्ञान करने है मुक्त बीच के कृपा भी मनवान के समान हो जाते हैं। बीवात्मा को नित्य है, उसका विग्रह भी नहीं ही नित्य है। कर्मादि कर्मों की अवस्था में बीच की नित्य देव वापुत रखती है। जब बीच को मनवान के प्रवाद है उनका सामान्य प्राप्ति हो जाता है जो वह प्रकृति के कर्मों है मुक्त होकर अपने नित्य चिद देव की प्राप्ति करता है। मनवद् प्रवाद द्वारा प्राप्ति देव निर्दिष्टार तथा मनवान की देवा के योग्य होती है।

नित्य चिद बीच तथा संसार दुःख है मुक्त मनवद् स्वरूप पुणादि का सर्वत्र अनुभव करने जाते होते हैं। वदकृत-वदकादि नित्य चिद कर्मा नित्य मुक्ति बीच है। सनाधिनिष्ठ मोक्षियों की उक्त प्रकार का अनुभव मिलता है परन्तु उनका नित्य चिद बीवों के कृत्य सदाकाठीन तथा स्वाभाविक नहीं होता।

प्राकृत

तीन गुणों का वाक्य तत्त्व प्रकृत है। यह अपने कारण रूप में नित्य तथा कार्य रूप में अनित्य है। कारण अवस्था में यह तत्त्व माया प्रमाण कथा कथक कलावा है। नक्ष्त्र तत्त्व है और ब्रह्माण्ड तक कला रूप प्राकृत का कार्य रूप है। तीनों प्रकार के वस्तु की सदा मनमान की कहेता रखती है। उनकी स्वभाव सदा नहीं है। प्रकृति नित्य काकावीन तथा परिणाम आदि के विचार को भी बाकी है। सत्, रत्न तथा तत्त्व इन तीन गुणों के द्वारा प्रकृति, वात्सा की देव, देविक्रिय तथा न , बुद्धि आदि रूप में परिणत होकर जीव का कथन करती है। प्राकृत का यह कार्य जीव की मोक्ष का प्रविवक्षक है। यह त्रिगुणात्मिका है।

क्याकृत

वस्तु तत्त्व का कथन क्याकृत है किन्तु तत्त्व है। यह प्रकृति तथा काल में कथन तथा प्रकृति राज्य के बाहर स्थित है। यह तत्त्व पूर्व के सपान उल्लेख है। इसी क्याकृत तत्त्व के नित्यप्रकृति विष्णुपद , परम आत्म, परम पद, ब्रह्मकीर्ति कुरी नाम है। यह मनमान के संकल्प मात्र है जीव रूप भी बाकी है। मनमान और उनके आन्तरिक नित्य तथा मुक्त जीवों के मोक्ष का उपकरण तथा उनके विचार स्थान के रूप में जीव रूप इस तत्त्व के भीति है। कालक प्रमाण है कथन जीवों के कारण यह परिणाम आदि विचार है भी रहित है।

काठ

काठ सर्वदा मनवान के लीन है । यह वस्तु नित्य तथा किम् है वीर मृत, भविष्य तथा वर्तमान वादि व्यवहार का हेतु है । काठ कृत्य का सहायी तथा प्राकृत पदार्थों का निवाहक है ।

मुक्ति छान

मक्त मनवान की उपासना जिस माय से करता है मनवान मक्त है उसी माय से मिलते हैं । वे अपनी अव्यक्त शक्ति से सब में मक्त के कष्ट दूर करने चाहते हैं । निम्बार्कशिर्ष का दहाड़ोकी में क्लम है कि कृपा, शिवादि से यन्त्रिक कृष्ण के कारण विन्द की होकर अन्य भाव अनुभव की नहीं है । श्री हरिश्चायके का क्लम है कि फल कृष्ण ही - उपास्यके हैं । निम्बार्क मत में हंस्वर कृपा का कदा महत्व है । निम्बार्कशिर्ष ने दहाड़ोकी में कहा है कि मनवान की कृपा से ही प्रेम-स्नान-मक्ति देव्यादि माय उत्पन्न होती है । मनवान की कृपा से ही प्रेम रूपा शक्ति मिलती है । अन्य मक्त तथा महात्मा द्वारा की जाने वाली शक्ति की प्रशंसा की जाती है । सात्वत रूपा तथा मदा रूपा । मनवान की कृपा का फल मनवान की शरण कल्याण उनके प्रति प्रेम-प्राप्ति काया है । प्रभु की कृपा का फल प्रभु की शरण प्राप्ति छान करना है । मनवान की शरण मिलने के बाद मक्त शक्ति स्व का आस्वादन करता है । मक्ता शक्ति के जन्मास से मनवान के प्रति प्रेम कल्याण रति मिलती है । इस सम्प्रदाय में शक्ति पाँच भागों से पूर्ण है - ज्ञान, वास्तव, सत्य, वास्तव्य तथा उज्ज्वल ।

ज्ञान का के उदाहरण मक्त कामीनादि हैं । वास्तव के रक्त का पक्क, उज्ज्वल वादि हैं । सत्य के भीदामा, धुदामा, जल हैं । वास्तव्य माय के महीमा मन्दादि हैं । उज्ज्वल स्व के मक्त गोपी वीर राधा है । निम्बार्क सम्प्रदाय में उज्ज्वल कल्याण मनु स्व की उत्कृष्टता ही है ।

श्री निम्बाकविचर्य ने ' वल्ल लोकी ' में सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाली श्री कृष्ण के वापांग में विराजित तथा सखी छलियाँ से शेषित श्रीराधा देवी की स्तुति श्री कृष्ण की स्तुति के साथ की है ।
हमारे प्रतीत होता है कि श्री निम्बाकविचर्य ने कृष्ण उपासना के साथ मन-
वान की मार्ग तथा प्रेम छलित स्वरूप राधा की उपासना पर विशेष
कृत किया है । वे राधा की वल्ल कामनाओं को पूर्ण करा सखी हैं ।

निम्बाई नम है वल्ल श्री राधा-कृष्ण की महिमा देवा
के साथ साथ - निम्बा कवि कृत प्राप्ति के ३२ धिरीवी जगदीश की
जगता कवि और उनके वल्ल शशि ।

१ - वल्ल तु वामे कृष्णामुखं मुदा, विराज माना मकुर्य लीलातु ।

सखी सखी, पारिवीक्षां तथा स्त्रीय देवीं सखीष्ट कावरातु ।

निम्बादित्य वल्ल लोकी, हरिध्यालये लोकी ५

२ - निम्बादित्य वल्ल लोकी, हरिध्यालये पु० ३६

कुछ ठीकाओं का वाच्यार्थिक मूल

कमल ठीका में ही कि उल्लेख का प्रमुख
 होता है । ठीका ही प्रकार की वाच्यार्थिक , प्राविशिकी और
 व्यावहारिकी । वाच्यार्थिक ठीका का एक प्रकार का व्यावहारिक -
 एक है । हाथ का कल्याण, कल्याण और हाथ में निरन्तर
 की कल्याण में ही कुन्दाय की निरन्तर ठीका का वाच्यार्थिक
 करने में लगे होता है । भीषण के निरन्तर कुन्दाय में हीने वाली
 ठीकाओं का ही प्राविशिकी प्रमुख होती है उन्हें ही प्राविशिकी
 ठीका कहा जाता है । प्रमुख में व्यावहारिक रूप में हीने वाली
 ठीकाओं व्यावहारिकी अन्तर्गत हैं । अन्तर्गत द्वारा विस्तार में हीने
 वाली ठीका व्यावहारिकी है । भी कि वाच्यार्थिक और वाच्यार्थिक
 के रूप में अन्तर्गत हीने वाली ठीकाओं "यह सब ठीका है । प्रमुख
 में हीने वाली ठीका कहा है । निरन्तर भीषण में हीने वाली
 ठीका पार और कहा है अन्तर्गत अन्तर्गत निरन्तर ठीका है । निरन्तर
 प्राविशिकी मात्र प्रमुख की वाच्यार्थिकी ठीका में किताब का कहा है ।
 वाच्यार्थिकी ठीका का प्रमुख रूप ही व्यावहारिक ठीका है । प्रमुख
 की निरन्तरार्थिकी की में प्रमुख के वाच्यार्थिक में ही ही प्राविशिकी
 मानकर प्रमुख के अन्तर्गत प्राविशिकी में निरन्तर कुन्दाय की निरन्तर
 ठीका के प्राविशिकी के रूप में वाच्यार्थिकी ठीका की ही कहा जाता
 विस्तार्य कहा है । यही प्रमुख प्रमुख में ही कि वाच्यार्थिक का विस्तार्य
 है ।

योग दर्शन के अनुसार शरीर में ७२ ह्वार
 नाडियाँ हैं जिनमें दुज्जा नाडी शरीर के मध्य में स्थित है जहाँ
 वात वृद्ध है । यह ह्वार के नीचे कुक्षार वृद्ध, लिं के ह्वार स्वा-
 विष्ठा वृद्ध, नाडि में मणिवार वृद्ध, पुण्य में कलाव वृद्ध, शंठ
 में विशुद्ध वृद्ध, नु मध्य में बाह्य वृद्ध और पूर रंघ में सल्लार वृद्ध
 है । नाडि के मणिवार वृद्ध में पराशक्ति की स्थिति बताती है,
 जिसकी तीन अवस्थाएँ हैं । पराशंती, मज्जमा और पर वरी ।
 हमें के ह्वार ज्ञान और ज्ञिया कही हैं । इस ज्ञान, ह्वार और
 ज्ञिया वृद्ध, पित्त और वायु के ह्वार हैं । समाधि में प्रकृत वृद्ध -
 पित्त और वायु की अनुभूति होती है । निरंतर समाधि की
 अवस्था में पराशक्ति है परित्यक्त्य ह्यध्वानंद की समस्त स्थिति
 ही होती है । इस स्थिति में सब भिन्न शक्ति की समस्त और
 समस्त शक्ति की भिन्न हैं । यही भीमवर्तन का वैशेषिक वृद्ध
 है । योग दर्शन में मणिवार वृद्ध में वृद्ध की स्थिति कही है ।
 जो वृद्ध की कलाव वृद्ध पित्त वृद्ध में ह्वार पर भी है जो वृद्ध
 रंघ कारण होता है जो वायु वृद्ध वृद्ध कही हैं । कलाव वायु-
 वृद्ध की ही एक मात्र अवस्था अनुभूति कही है ।" मेधाविवादी
 ह्यध्वानंद वृद्ध की प्रमाणवृद्ध मानते हैं । इनके अनुसार वृद्ध की वृद्ध
 मिलने है जो वायु वृद्ध प्रमाणवृद्ध कही है जो वृद्ध पर वृद्ध की -
 ह्यध्वानंद की वृद्ध है । । वृद्ध की वृद्ध वृद्ध वृद्ध प्रमाण
 कराने वाली ज्ञिया की वृद्ध प्रमाणवृद्ध करना की वृद्ध योग
 है ।

१ - श्री विद्याकाश मेधाविवादी पुण्ड १८ वाक्य वृद्धवृद्ध -
 भीमवर्तन ।

[illegible]

भी राधा की वाङ्मयिनी शक्ति है जो पुकारात्मक है। उन्हीं के
 स्व-की संयोग है उत्कृष्ट का मूलम भुंजार एवं प्रकाशित होता है।
 उन्हीं के स्व की वरम विज्ञापित है। नायिका वाङ्मयार मनु [की
 कि राधा का बखाना नाम है। है यदि पुष्पुम्मा की धारा की
 उन्हीं नायिका की वरम ज्ञापित है है वरम उन्हीं संयुक्त वरम की वरम
 उत्कृष्ट शक्ति एवं का वरम होता है। पुष्पुम्मा की वाङ्मयिनी वाली
 भी राधा है। वरमरी वाङ्मयिनी उन्हीं एकीकी शक्ति वाङ्मयिनी है।
 वरमरी वरमरी रूप है ज्ञापित मनु रूप शक्ति पुष्पुम्मा में ज्ञापित वरम
 उत्कृष्ट है जो वरम शक्ति वरम का प्रकृत होता है वरम प्रकृतपुष्पि
 है। वरम शक्ति पुष्पुम्मा में वरम वरम वरमरी की प्राविशक्ति
 होता है वरमरी है। वाङ्मयिनी वाङ्मयिनी वाङ्मयिनी का वरम है
 की निम्नाङ्गिका की वरमरी राधा की है। पुष्पुम्मा का वरम
 मनु की पुष्पुम्मा का वरम है। वरमरी वरमरी है पुष्पुम्मा वरमरी है वरम
 मनु का वरमरी होता है, वरमरी वाङ्मयिनी की का वरमरी वरमरी
 वरमरी है पुष्पुम्मा की वरमरी वरमरी है। वरमरी वरमरी
 में वाङ्मयिनी की पुष्पुम्मा है वरमरी। पुष्पुम्मा का वरमरी का
 वरमरी होता है। वाङ्मयिनी पुष्पुम्मा की वरमरी पुष्पुम्मा उत्कृष्ट
 है। वरमरी वाङ्मयिनी पुष्पुम्मा की वरमरी वरमरी का प्रकृत वरम
 वरम है, वरमरी वरमरी वरमरी का है वरमरी वरमरी वरमरी है
 वरमरी वरमरी वाङ्मयिनी वरमरी वरमरी है। वरमरी वरमरी वरमरी वरमरी

१ - वरमरी वरमरी वरमरी वरमरी वरमरी ।

उत्कृष्ट वाङ्मयिनी पुष्पुम्मा वरमरी वरमरी वरमरी ॥ वरमरी

राम रसिकदेव का वास्तविक फल

राम रसिक देव ने जूझ ली कल, लालच और अभिरुचि कहा है ।
भीकृष्ण ही साक्षात् परब्रह्म, परमेश्वर, हरि हैं, जो ब्रह्मात्मन् धारण
कर भूतल पर अवतीर्ण होते हैं । वास्तव उनकी आत्मभूति है । कार्यभारण
मेव है वास्तव रूप में वे ही वास्तव हो रहे हैं । यद्यपि उनकी लक्ष्मी अभिरुचि
वीर्यात्मा है, जो उनके चिह्न है उत्पन्न हुई है । देव की संस्कार है
मिन्न नहीं कहा जा सकता । वास्तव और उनकी भुक्ति के समान ही ज्ञान
है लक्ष्मी सम्पन्न है । एक और लक्ष्मी का, देव और देवी का तथा वेद
और देवी का जो पारस्परिक सम्बन्ध है वही वास्तव और भुक्ति है ।
जुझ और वास्तव में वह भेदादि सम्बन्ध ही मान्य है ।

वास्तव ज्ञान नामक भीकृष्ण ही एक ही परापर
विश्व के रूप में प्रकट है । ज्ञान नाम है । किन्तु रूप में वह देवदारी की

-
- १ - लक्ष्मी भिन्न हरिभूति प्रकट रूप परमेश - हीतादिर्गत्त पृ० ४६।४
 - २ - हीटि भुक्ताका में कहा ज्ञानात्त निष्ठ मोर । .. ४६।५
 - ३ - वास्तव में ज्यों पुरी, य वहु न्यारी नांवि । .. ५६।३०
 - ४ - लक्ष्मी भिन्न देव्य ही, देवक नामधि धारि ।

मिन्न नहींकर मिन्न है, एवं दिष्टां विचार ।। वही पृ० ४६।२६

- ५ - लक्ष्मी वह मिन्न है, ज्यों ज्ञान ज्ञाना पुन ।

देवा लक्ष्मी न्यारी है, वे एक ही स्वरूप ।। वही पृ० ४६।३१

- ६ - वास्तव लीटि ज्ञान में व्यापक वस्तु पुन ही ।

वही पृ० ४६।३

यही है। जीवात्मा उसके इस स्वरूप में छान होकर ही परमानन्द की अनुभूति करता है। जीव परमात्मा की कृपा से ही उसके स्वरूप की प्राप्ति होकर विद्यानन्द का कल्याण है। विद्यानन्द उस ही चिद् चिद् रूप में प्रकट है। यह इस रूप और नियन्त्रा है, जीव नियन्त्र है। यही विवेक है। ज्ञान और ज्ञात की भाँति जीवात्मा परमात्मा से भिन्न रहने की भाँति है। कारण उस और जीव का यह निरालम्ब सम्बन्ध ही मान्य है।

अतः, ज्ञान वस्तु इस होकर भी अनेक प्रकार से छिटा दिखाव कला है। यह सब है जो और जो है ज्ञान में परिणत हो जाता है। सर्वकारियों उनकी दृष्ट्यागति स्था - जीवात्माएं हैं। जीव की कृपा की काम लोकर दृष्ट्यागति छिटाएं बनतुल्य करती रहती है। "विष्णु मातुर्गत्त" के ज्ञान में उस ही प्रकाश हो रहा है। ज्ञान, विष्णु, श्रीगोविंद जी ज्ञान है शैशव्य से ही छिटा रहते हैं और उन्हें भी यह विष्णु मातुर्गत्त विद्यानन्द रहित है। श्रीगोविंद पुरुष, ज्ञान विष्णु के छिटा -

१ - बादि सबेरी चुरवा, छिटा ज्ञान प्रकार ।

विष्णु पुरुष स्वयं है, जीव है सुखार ॥ छिटा विवेक पृष्ठ ६६

२ - विद्यानन्द का नाम निज, विद्यानन्द का छिटा

विद्यानन्द का लक्षरी, देखें देखें रूप रसात ॥ यही पृष्ठ ७८:३२

३ - छे विवेक बादि जो बसो बादि की भाँति । यही पृष्ठ ७८:३०

४ - एक अनेक प्रकार है, देख चुरवा विचार ।

सर्वकार दृष्ट्या छिटा की, बाँधकर यही ज्ञान ॥ छिटा विवेक पृष्ठ ७

५ - इस मातुर्गत्त प्रकाश, ज्ञानाचरु पद । " " " २४:२

६ - श्रीगोविंद शैशव्य के, सब में रहे उपाय ।

जब निजो पावे ज्ञान, बाँधे बसु जन्मराय ॥ यही पृष्ठ ३

नारायण हैं, ये भी वह नित्य विहारी पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के अंत
 होकर विद्यमान हैं । श्रीकृष्ण अवतारी हैं नारायण तादि उनकी
 विविध अवतार हैं । परावर विश्व परब्रह्म परमात्मा श्री कृष्ण
 हैं प्रकट होकर उनकी में बना जाता है । प्रकट और चिद्रूप का यही
 भेदानंद सम्बन्ध है । एक कण कण सत्य की जीटि जीटि प्रकट हो
 ऐश्वर्यमयी लीला का विस्तार करता हुआ वह विश्व के सुख,
 पावन और संसारता के रूप में नाशित हो रहा है । पूर्ण प्रकट
 परब्रह्म श्रीकृष्णाक्षी हैं, नारायण तादि अवतार उनकी ही हैं ।
 ये एक हीकर भी प्रकट और प्रकट रूप से लीला दिखाते हैं ।
 उदा उदासन एक रस, उदासनन्द स्वयं परमात्मा श्रीकृष्ण की
 कर्तृता कर्म कागोचित परिपूर्ण होकर परावर विश्व में व्याप्त
 है । उदासन विश्व इन परात्मा प्रकट की संकीर्ति है ही व्याप्त
 रहा है । श्रीकृष्ण उनकी उदासन शक्ति के अनुसार ही आनंदिक
 जीवन के लक्ष्य-लक्ष्य-लक्ष्य है । आनंदीय होने से जल का

१ - तादि पुरुष काही श्रीकृष्ण विश्व की जग ।

नारमन्ध किसी कभी बिनि, नारायण है नाम ॥ यही २४१२

२ - कंत रसा अवतार है, परि परि शरण कीन ।

हव इनही है प्रकट है, उन इनहीं में हीन ॥ यही २४

३ - नर लीला ऐश्वर्य की, जीटि जीटि प्रकट ।

करकें परकें परत हैं, एक बापें कण्ठ ॥ यही २२ । ६

४ - ही नारायण कैं है, नीर्य कृष्ण भगवान । यही २४१३

५ - है प्रकट करि करत है, प्रकट प्रकट विहार । यही २४१४

६ - उदा उदासन एक रस, उदासनन्द स्वयं ।

कर्म शक्ति पून ही, मुक्त विधि अविद्व ॥ यही २४१५

प्राणत भी मायावी है, जिसमें जीवात्मा ज्ञानात्मका है कारण मुझ
मटना रहता है । यही तब के उपाधि का उक्त है ।^१ श्रीराधाकृष्ण ही
परात्पर ब्रह्म है । उनकी जानकर तुम और जाना हेम नहीं रहता ।
वात्म जानी बिना पुरुष ही इनके रहस्य को समझते हैं^२ । अतः -
प्राणत में परिध्याप्त रहता हैत्यर्थ मायुं ही इनके परात्परत्व की
विविधता कर रहा है ।

स्वरसिन्धु के श्रीकृष्ण ही साक्षात् ब्रह्म और
काशीत है । वे अपनी दत्ता शक्ति से ही संसार में फूट होते हैं ।
परात्पर विश्व उनकी में समाविष्ट है ।^३ वे सर्वथा स्वयं है ।^४ जगत्
उनकी वात्सल्य है ।^५ वे अतः प्राणत के विविधता, यहाँ के छिद्र

१ - दिग्विहारे उचरी येह जी, कामाधि चित्ति और ।

विज भन्दा विस्तार की, नू केह ही और ॥ टीका चित्तित २५।२१

२ - राधाकृष्ण राधाकृष्ण समझिनी होई दुखन ।

याधे पर और तू समझिनी होई दुखन ॥

३ - स्वरसिन्धु का का नामन ॥

नित्यविहार पदावली ५७।२

अतः ब्रह्म रहती पुरि प्राणी ॥ नित्यविहार पदावली ७७।७७

४ - जगमा की दानि जग का नावही । मुकुत्सव मणिमात ५०।१४।५

५ - दाहि कल बौड माकृति है, वाजी परमकिनार ।

स्वरसिन्धु का के विवरन, किनु कीनी विस्तार ॥

मुकुत्सव मणिमात १४० । २२०

जबकि बारण करने वाले, निमामनी के द्वार स्वरूप हैं ।^१ जीव
रसस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति कर प्रपंचात्मक ज्ञान से मुक्तकार या
जाता है । वह कृपाकण्ड है मानिक संसार में रहता हुआ भी माया
मुक्ति नहीं होता ।^२ केव भी उस कृपा को भवि - भवि सदा ज्ञान
जबकि बंधी है । साक्षात् ज्ञान की समाप्ति में भी वह ज्ञान्य है ।^३
वह परम प्रजापति, पूर्ण प्रजापति, सम्पूर्ण जीवों की जीवन देने
वाला निश्चय हीलावी का विस्तार^४ नित्य समाप्त, कर्म और
कर्म है ।^५ वह कारण - कारण निराकार का कारण तथा सृष्टि
के दुःखों का हर्षाकण्ड है ।^६ निमामनित्य माया परमात्मा

१ - ब्रह्म कण्ड ज्ञानिक कवि मणि मान है ।

भक्त कि ज्ञान मणी मन माय है ॥

निमामन की द्वार स्वरूप की कृपा । कृतुत्तम मणिमातृ
२ - निश्चय साधनी ज्ञान कि-है ज्ञान न ही ।
द्वारा १७

जब रात्रि रात्र दया का है की ॥

कृतुत्तम मणिमातृ १७२ १७६

३ - भवि भवि केव ज्ञानी, ज्ञान रसारी रहे ।

निश्चय समाप्ति के समाप्ति केव न ही रहे ॥ बही १७३ ७

४ - परम प्रजा के मान, पूर्ण कण्ड प्रजापति ।

मनु हीला विस्तार, ज्ञान का जीव विस्तार ॥ बही १७४ १७६ ।

१ - ७ - ६

५ - नित्य समाप्त ज्ञान कर्म । की विस्तार १७५ ७

६ - कारण कर्म कर्म सृष्टि के निराकार कारण

कृतुत्तम मणिमातृ कृष्ट १७६ ७

के चरणों की बेसी बनकर रखी है । जीव परमात्मा की कृपा से उसके
 सह रूप को प्राप्त होकर परमानन्द की अनुभूति करता है । संसार बंध
 सुखर है । निज जीव की इस संसार कामर को पार करने में कामकी है ।

इस रहस्य केने राधा कृष्ण, लीला कृष्ण और
 नित्य विहार वर्णन में वेदाभेदवादी दृष्टि करना है । श्रीराधाकृष्ण
 की कृष्ण कृष्ण परात्मा है । लीला जीवात्मा है और नित्य
 कृष्णकृष्ण काव रूप में प्रतिष्ठित है । नित्य विहार सह ही जीव का
 अर्थ है । परमात्मा है एकेश्वर होने का नाम यही सामन है । ज्ञाना-
 त्मा माया है वाच्यता के ब होकर मति है विभक्त रत्ना है ।

१ - माया ज्ञान प्रसूतिका वासु चरण की दास । यही ८२।१

२ - २ प्रनित्यारि प्रीतिमां बन बन बनकी है कीर्ति है ।

बनकी कृपा कृपा है या कृष्ण सह ही पीये है ॥ यही ५० २०

३ - बंधि कुल है संसार यह हृदय लो लो लो लो लो लो लो । यही ५० ३८

४ - राधा हरि हरि व्यास नृ, ऐक्य विपिन विहार ।

निज वानन्द कृष्णद लो, वाच्यो परम निवास ॥

हरिव्यास वशाभूत ५० ३। १८

५ - सदा लम्बा २१ सह युक्त रूप में कृत

६ - नृत्त रूप हरि कृत निज कान्त कृत के दास । यही ८२।२

७ - नित्य स्त्रीर मयुग बंध ही कृष्णकृष्ण दास । यही २२।१०

८ - नव किंचित कृत केति स्त्री, राधा नृपर दास । यही ३।१०

कम स्वीकार की वस्तुओं की ओर झुकाव न होकर एक मात्र
भी राधाकृष्ण युग के जीवन हाथों की ही बलिदान करत हैं।
एक ही जानन्द का कर्म राधा, कृष्ण, परबरी और कृष्णकन
उन बार कभी न ^{विचार} ~~संकेत~~ देता है। उनके जीवन का और निष्ठा का
विषय। १०। अति वे निष्ठा का जीवन होते हैं जो कभी निष्ठा
निष्ठा। नाम की राधा का नाम और भी हाथ की यह जानन्द का
महापद बाधा। फुल्ल सर्वथा मान्य है।

कामान भी कृष्णकन के चरणारविन्दों की सेवा
होकर अन्य कोई उपाय नहीं है। वे कृष्ण, कल्याण, समस्त
पुत्री के हस्त होके पुत्र की कमी प्रकृति माना है प्रकट होते हैं। वे
जानन्द स्वयम् हैं। प्रियता राधा उनकी आकांक्षी शक्ति है। भुक्तियाँ
में कि "हो वे सः" अष्टिदान का एक स्वरूप परबरी का प्रति-
पादन किया है वे भी कृष्ण ही हैं। वैदोपनिषदों में भी कृष्ण के
परम रूप का गुणगान हुआ है। शक्ति नाम है ही वे जाने
जाते हैं।

१ - छात्रों का ही छोटा स्वाकृति की का वीर्य रैन दिया है।

श्री हरिप्रिया सहाय - पृ० १५। १०

विष्णुविं सम्पति सेवत है पुत्र सम्पति के पुत्र की रुत पाते

मई, १९५१

२ - परम अष्टिदान का ही कृष्णकन का नाम।

सम्पति पुत्र सम्पति जहाँ श्री हरिप्रिया पनाम ॥ श्री हरिप्रिया-

३ - पुत्र कृष्ण बलिदान का एक स्वरूप है पुरि। ^{यहाँ} ~~यहाँ~~ - पृ० २५। १०

श्री कृष्णकन का नाम है रक्ति न की वनि पुरि ॥ वही २५। १०

रूप रसिन्देव कृत के नामान्त में लिखते हैं :-

बावि जगार वातामूर्धन्य, बावि जगदि रयवन् ।
देवैर्भूतं वन उद्वारी, निम्न न पाथवि वन् ॥^१

बावि लिखते हैं -

सदा जगत्तन रय रय, वाविजगदि रयवन् ।
जगत्तन पुरन पुर, पुनः विविन पवि पुर ॥^२

यह जोटि कृत में व्याप रखा है । यह जगत्तन है
जगत्तन रूप है -

एवा वायु जगत्तन है, जगत्तन रूप वावि ।
नित्य वाविन के विन जी, सदा विन वाविन ॥^३

रावि जीर कृष्ण जी नाम जीते जी जी रय वायु है व

जी जीर कृष्ण जी नाम, वायु कृष्ण जी नाम ।
रय-रसिन्देव रसिन्देव जी वाविन रय वायु है नाम ॥^४

१ - जीर वाविन - रय-रसिन्देव पुनः २५-२६

२ - " " " " २५-२६

३ - जगत्तन जीर कृत में व्याप रखा है ।

जी जीर वा जीर वा जीर जी, वायु जी जी जी ॥

जीर वाविन पुनः ३६-३७

४ - जीर वाविन रय-रसिन्देव पुनः ३६-३७

५ - पुनः उक्त वाविन रय-रसिन्देव पुनः ३६-३७

उसका जादि है, न कन्ध है न उसमें माया का प्रवेश
है -

जादि कंठ काही नहीं, माया की न प्रवेश ।
प्रष्ट विराज्य क्वनि पर, मुंदाविधिनि पुषेह ॥^१

दे उदा उनात्मन है बीर एक प्राण की देह
है ।^२

वह जग है जग है । उसे निमग्न की नहीं जान पावे ।
वह मल की सुमग्न की प्राप्ति की जग है । उही का स्मरण करना
चाहिये -

जो महा जग हैं, जग जग, निमग्न न जादि ।
जो हैं पाई सुमग्न, जादि न सुगिरि जादि ॥^३

स्म-रासिक देव ने सिद्धान्त मायुरी में कहा है कि
वह सत्य एक ही है । देवा निमित्त जीव रूप बाधाहित होते हैं ।
प्यारी - प्यारी में देव नहीं करना चाहिये । वह प्रकृत पुराण है
परि सच्चिदानन्द स्वरूप है । वे जादि, मया, कथान में एक रूप है -

१ - टीका विहंगि - पुष्प २६-२७

२ - उदा उनात्मन एक रूप, मुन्दावन निव मेह ।

राज्य राजा रैन कंठ, एक प्राण है देह ॥

टीका विहंगि - स्मरविजय ५० २६-२७

३ - टीका विहंगि - पुष्प ३०:३०

४ - सत्य एक ही है, देवा निमित्त जीव रूप बाधाहित है,

मेह न करनी, र प्यारी - प्यारी पु की प्यारी ली है ।

की टीका विहंगि - सिद्धान्त मायुरी ५० २७

पुनर्वि पुरुष तं श्री परंमेश्वरविद्वानंद स्वयां नु ।

आदि मया कथान मे र रपत एक स्व रपा श्री ॥

यह राधा मऊरी के लिये पुनर्वि पर कथार होती है ।

यह राधाकृष्ण की जोड़ी सनावन है -

मऊन छिद्र नु कथारी नित्य धिरोनानि हैम ।

राधाकृष्ण जोरी सदा रूप-रतिक छंद हैम ॥

रूप रतिककी श्री राधा १

जब उनकी इच्छा होती है श्री कृष्ण विस्तार होता है -

विनवि उबरी देख श्री, कामावि बिधि होर ।

निच इच्छा विस्तार श्री कृष्ण की ओर ॥

श्री कृष्ण का कृष्ण मशाल है । मऊ रूपी जानवर
भीषावि नित्य बंधा करते हैं -

श्री कृष्ण मशाल, भयवि हेतु मन पित ।

मऊ रूपी जानि है, भीषावि बंधा निच ॥ ४

श्री कृष्ण मापुरी का मऊन श्री कृष्ण काव । कृष्णान श्री कृष्ण सधरनी
मऊ है कथी हूय पार नहीं पा सखी -

श्री कृष्ण मापुरी, कथी है कथि काव ।

कथी सखी मऊ कथि नहीं, कथी पार न पाव ॥ ५

श्री हरि नु की माया की लिय का जानते हैं । यह माया

जानाया संसार है पार कराती है -

श्री माया संसार हरि की, श्री हरिमाया लिय का नाये ।

श्री माया हरिमाया माया की जायाय न पार कराये ॥ ६

१ - कृष्ण उत्तम मणिमात - रूप रतिकेय पुष्ठ २०

२ - " " " " " २०५

३ - छीछा विंशति रूप-रतिकेय पु० २५-२६-२७

४ - " " " " " पु० २८-२९

५ - " " " " " पु० २८-२९

६ - हरिमाया मशाल - रूपरतिकेय पु० ३५-३६

पंचम अध्याय

रूप रसिक देव का भक्ति पक्ष

‘ मय ’ शेषाशान वातु में किन्तु प्रत्यय लाने से मक्ति
कल्प बनता है जिसका सामान्य स्वरु तब मयवान का शेषा प्रकार है । परम
पैराण्यहीन बनकर दृष्टिसे की उपासना में रह रहता ही शर्मा मक्ति है ।
कार्त्तविक मक्ति पैराण्य की नींव पर स्थित है । मक्ति से ईश्वर ही प्र
दुष्टि ही है और मक्ति की नींव कुछ निश्चिता है । मक्ति स्वयं साध्य एवं
साधन ही है । निष्कण्ट रूप से ईश्वरानुसंधान ही मक्ति यौन है तथा प्रेम
व्यक्त आदि मय्य और अवसान है ।

श्रीमद्भगवद् गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है कि यदि
कोई व्यक्ति पुराणों की जन्म माय है भैराव कहें, भैराव ही
निरन्तर मन्त्र है तो वह वास्तु ही मानने योग्य है क्योंकि वह यथार्थ
निरन्तर मन्त्र है । वह ही ही मन्त्र ही मानने ही जाता है और वह ही
वाही परम शक्ति की प्राप्ति होता है । वह भैराव कहें नष्ट नहीं होता ।
गीता के चारों ओर मन्त्र के लक्षण बताते हैं वह ही मन्त्र ही मानने
है वह मन्त्र ही परम शक्ति की प्राप्ति होता है । शिवानन्द मन्त्र
में ही माय है स्थित हुआ, प्रत्यक्ष चित्त वाही पुरुष न ही किसी
किसी के लिए होकर जाता है और न किसी की आज्ञा ही करता है
हैं वही ही मन्त्र ही मानने हुआ भैराव परम शक्ति की प्राप्ति होता है ।

१ - श्रीमन्मन्त्रालय की सेवा - मीराबाई शिवाजी नगर सं० २००६, ६-१०-७९

२ - " " " " सं २००४, ए-५ ए-५५

श्रीमद्भागवत के अनुसार कि मनुष्यों का निश्चय मानवान
 में उन गया है ऐसे मनुष्यों की वेद विधिगत सभी कर्मा तथा विनयों का
 ज्ञान कराने वाली कर्मो-प्रयत्न दोनों प्रकार की प्रवृत्ति को मानवान की
 वीर्यवती मक्ति कहा है^१। श्रीमद्भागवत में मक्ति यौन के उदात्त के संकेत
 में मानवान का अर्थ है कि कि प्रकार का ज प्रकाश अत्यन्त रूप से अनु
 की और बलवा रक्ता है, उही प्रकार भी मनुष्यों के अर्थ मान है मन
 की मक्ति का वेद वारायत्त विविधता रूप से कुछ सर्वान्वयियों के प्रवि
 ही जाता तथा कुछ पुरुषोत्तम में निष्काम और काम्य प्रेम को ना वह
 निर्गुण मक्ति यौन का उदात्त कहा गया है^२। मक्ति का उदात्त श्रीमद्
 भागवत में इस प्रकार किया गया है -

इ है पुंजां परी कर्मां यही पतिरप्यपि ।

वीर्यवत्प्रविवक्षा का त्वा सम्प्रदीपति ॥ २-२-६२६

क्याकि मनुष्यों के लिए अत्यन्त कर्म यही है, जिससे
 मानवान श्रीमद्भागवत में मक्ति ही मक्ति की होती, जिसमें किसी प्रकार की
 कामना न ही और की निश्चय निश्चय की रहे, ऐसी मक्ति से हृदय
 कामन्द स्वरूप परमात्मा की उपलब्धि करे कुतुहल ही जाता है ।
 मानवान की सेवा की शीघ्रता से नज रिकी जाने पर भी बाणीय,
 वाष्टि बाणीय, धारुण और मायुज्य मोहा एक ही नहीं होते ।
 श्रीमद्भागवत में मक्ति को मुक्ति से अलग बताया है, क्योंकि कि
 प्रकार से अमानस जाने कुछ मन ही जाता है उही प्रकार यह कर्म
 संस्कारों के अन्तर्गत रूप में ही अतिर की अत्यन्त कर्म कर देती है ।

१ - केषावां गुणविमर्शानुविज्जरात् । तस्य ह्यप्यमन्वी कृतिः

स्वानाधिकी व या । - श्रीमद्भागवत ३-२५-२२

२ - श्रीमद्भागवत ३-२६-११, ३-२६-१२

३ - " " स्कन्ध १६, अष्टादश सूक्त २० से २५

भीमशुभानमय है एकाग्र स्वरूप के बीरवर्मा तथाय में भक्ति की योग-
साधन, ज्ञान विद्या, कानिष्ठान, कपाट और तप त्याग से भी
बहुकर माना गया है। उनका कर्म है कि भक्ति बाधित योग है मुक्त
करने वाली है। भक्ति योग के द्वारा वात्स्या कर्म वात्स्याजी है मुक्त
होकर बुद्ध की ही प्राप्त की जाता है, क्योंकि उसमें ही उनका -
वास्तविक स्वरूप है।^१ नवम् स्वरूप में मनवान भीमशान करते हैं कि
यह भक्ति है द्वारा की जाने वाली, नती के यत्न में होती और उन्हें
वात्स्या से है।^२ ज्ञान और भक्ति का सामंजस्य की मनवान ने स्थान
स्थान पर दिया है।^३

छांदित्य भक्ति पुत्र में भक्ति की व्याख्या इस
प्रकार की गयी है - वा परावुराविदरी स्त्री^४ ज्ञातु ईश्वर के प्रति
वस्तुपूर्ण कुरान का नाम भक्ति है, ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान विवेक का
नाम भक्ति नहीं है, क्योंकि योगी कुरुष की भी ज्ञान होता है,
परन्तु उन्हें प्रीति नहीं होती।^५ देव का प्रतिकूल और उस कर्म का
प्रतिपादन होने के कारण भक्ति का नाम ही कुरुषान है। यह
ज्ञान की भांति कुरुषानका है वाचीन नहीं है।^६ छांदित्य भक्ति पुत्र
में भक्ति शब्द वाणी का भक्ति का प्रतिपादन है जो पराभक्ति -
की भीति है। यका और देवा की भीति भक्ति है।^७

१ - भीमशुभानमय	१-२-११	२ - भीमशुभानमय	१-३-१३ है ६
२ - भीमशुभानमय	२-२-१२	४ - छांदित्य भक्ति पुत्र २	
३ - छांदित्य भक्ति पुत्र ४		५ - " " " ६	
४ - " " " ७		६ - " " " १६	

नारद मर्कट सूत्र में विभिन्न वाक्यांशों की मर्कट सम्बन्धी व्याख्या का विवेक हुआ है। उसमें लिखा है कि पाराशर - नम्बन की व्याख्या की है अनुशास्त्रार भगवान की पुत्रा आदि में कुरान होना की मर्कट है। की मर्कटार्य के शास्त्रार भगवान की व्याख्या आदि में कुरान होना की मर्कट है। देवर्षि नारद के मत से कर्मे सब कर्मा की भगवान के कर्मा करना और भगवान का चौड़ा हा की विस्मरण होने में परम व्याकुल होना की मर्कट है। नारद मर्कट सूत्र में मर्कट के उपाय बताये हुए लिखा है कि मर्कट ईश्वर के प्रति परम प्रेम - रूपा है और कृष्ण स्वरूपा भी है। उसको पाकर मनुष्य विह्वल हो कर न रुच्य हो जाता है। उसके प्राप्त होने पर मनुष्य न किसी कष्ट में आसक्त होता है और न उसे विषयों की प्राप्ति में उत्साह रहता है। जो प्राप्त कर ही मनुष्य उन्मत्त हो जाता है, स्वप्न हो जाता है। और आत्माराम बन जाता है। वह कामना-मुक्त न होकर निरीम स्वरूपा है। नारद मर्कट सूत्र में प्रकीर्णित

१ -	नारद	मर्कट	सूत्र	१६
२ -	"	"	"	१७
३ -	"	"	"	१८
४ -	"	"	"	२२
५ -	"	"	"	४
६ -	"	"	"	६
७ -	"	"	"	७

“ कृष्णसंभान , तथा कर्मभूति में प्रतिपादित नित्य भौतिक वादि ”
का वावरण न हो परन्तु कृष्ण के अनुकूल होने वाली प्रकृति की सत्ता
है । उस भक्ति का उक्त ज्ञान के जन्म ही होता है ।

कृष्णदास काविराज ने वैष्णवपरिवाक में भक्ति की
एक दृष्टिकोण और भक्त का धर्म्यत्व बताया है । नरक इत्यादि भगवान
से भक्ति का दरमान मांगता है, क्योंकि उनके कारण ही भक्त का
दृष्टिकोण है मात्र एक नाचा हुआ है ।

१ - कथासिद्धांतिका मुख्य ज्ञानरूपमितातुका ।

नामकृत्येन कृष्णानुबन्धं भक्तिरुत्तमा ॥

श्री हरिभक्ति रत्नाकर त्रिभु १३ भक्तिभाषी

पूर्व विभाग छहरी पृ० ११-१२

२ - (क) भगवान् धर्म्यत्व भक्ति अभिप्रेत ।

प्रेम प्रयोजन वेद विन वस्तुत्व ॥

५, ६ गच्छतिता , पारि ३ पृ० १३३

(ख) एक रसभक्ति पुनः भाषिणी बाधा ।

मानो एक भक्ति कर नाचा ॥

रा. व. ना. व. ३५ पृ० ३५५

(ग) कभी प्रभु भक्ति देख , पाछो पुन नाचा ।

सु. हा. ६३ पृष्ठ ४१

कृष्णदास कविराज के अनुसार कृष्ण प्राप्ति के तीन साधन हैं, एक भक्ति, दूसरा ज्ञान, तीसरा योग । इन साधनों में दृष्टदेव तीन स्वरूपों में मानते हैं । भक्ति से स्वयं भगवान की प्राप्ति होती है । कारण भक्ति कृष्ण प्राप्ति का उपाय व्याप्त साधन है । कुण्डीदास का ज्ञान है कि भक्ति से दृष्टदेव राम ही प्राप्त हो जाते हैं और मत्त पर क्या करते हैं । हरिकृष्ण के बिना कौन दूर नहीं होते और मत्त-मत्त नष्ट नहीं होता । हरि की भक्ति के बिना बुद्ध की प्राप्ति नहीं होती ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

मक्ति का विकास :-

मक्ति के विकास को लेकर प्रायः जादूयाँ में जगहों का प्रतिपादन किया है। मक्ति के विकास का सम्बन्ध समाज की विभिन्न स्थितियों से है। मक्ति का विकास प्रायः भौतिक युग से नीरा-णिक युग और मध्यकाल से आज तक शीघ्र रूपों में दृष्टि नोचर होता है। मक्ति एक सामान्य शब्द है और उसमें किसी व्यक्ति के प्रति मनुष्य का महा भाव रहता है। इस महाभाव के बीच हम उसे भौतिक और संस्कृत मादम में विभक्त हैं। मक्ति के तीन प्रायः सभी साहित्यक साक्षात् है सम्बन्ध होने पाते मनुष्यों में मिलते हैं। मनुष्य मनुष्य का है अपनी मानवी विनम्रता और प्राकृतिक व्यापारों की विशालता में अनिन्द शक्ति से प्रभाव की कल्पना करने लगा रही है उसमें साहित्यक भाव और हरि मक्ति का डोंगा रोपण होने लगा। जब यह सब सम्पन्न होता है उसी परिमित शक्तियों और विश्व की अपरिमित प्रगति शक्तियों का संकाशन एक ही सर्व शक्तिमान है वह साहित्यक भाव नहीं - मक्ति परलोकित हो गया तथा जब उसने उस सर्व शक्ति मान है करने के बली प्रेम कला प्रारम्भ कर दिया उसी दिन से मक्ति वास्तविक विकास प्रारम्भ होता है।

प्राचीन कार्य शक्ति के प्रारम्भ में ही प्रकृति के विभिन्न वस्त्वों की देव रूप में नुबण किया है। हनु, वरुण, रुद्र, महेश आदि देव सर्व-शक्तिमान दृष्टि के साक्षि कारण सम्पत्ति शक्ति है। शक्ति को कर सब देवताओं का समालार के रूप में होता और

परब्रह्म परमात्मा के ही स्वरूप समझें जगें श्री : -

ब्रह्म विष्णु कर्णामणि वासु, रवी विष्णुः स बुधनी महत्मानः ।
रव एभिः ननुवाब्दनिष्कामिनि, तन्नि यमं नावास्मान ननुः १॥

क्याविषय का उपासनीय, भक्तिय, यर्णयि प्रभु एक है पर विष्णु और नागी है पुत्रादि हैं । काः ब्रह्म, यम, वासुना और के-
वली के नाम नहीं हैं, प्रत्यक्ष रूप ही हीनार के और गुण और उचितियों
को प्राप्त करने वाले और नाम है ।

कृष्ण सभी ब्रह्म की उपासना प्रतीक देवी के रूप में
करते हैं । डा० वेणीप्रसाद का कथन है, कृष्ण में मनुष्य और देवताओं का
रूप सम्मिलित है ऐसा माने के हिन्दू धर्मिक में नहीं है । यहाँ देवता मनुष्य
की भाँति है दूर नहीं है । जहाँ का विश्वास है कि देवता उनकी उपासना
करते करते हैं, उनके लक्ष्यों का मार्ग करते हैं । वे मनुष्यों में प्रेम करते हैं
और प्रेम चाहते हैं । भारतीय धर्म सम्प्रदाय का तात्पर्य अतीत कृष्ण
है । यहाँ कुछ मंत्रों में तात्पर्य और देवता के अर्थ में गाई प्रेम और भिन्नता
की कल्पना की गयी है । कुछ विद्वानों ने विष्णु की विष्णु और महत्वा-
कांक्षी माना है ।

मनुष्य धर्म में देव मानता है दो रूप के-4 है ।
काल्य यज्ञ से निकली हुई वास्तवी देवताओं की प्रीति और मुक्ति है जहाँ
न समझ वह मानता थी कि वे पूजा के प्रत्यक्ष ही फलदायक होते हैं और पूजा

१ - ब्रह्मस्तान की पुरानी सम्यक्ता - डा० वेणीप्रसाद पृ० ४२

२ - वेष्णुविष्णु देवित्व मन्दारकर पृ० ३०

न पाने पर अनिष्ट करते हैं। अन्य जातियाँ पूर्व, उत्तर, दक्षिण, पूर्व
जादि प्राकृतिक शक्तियों की उपासना करती थीं, क्योंकि इनका काम न
प्रकार फँसता है, पूर्वी डोखल और का पान्य पूर्ण होती है, शीत
और पश्चिम धुर होती है। अतिवृष्टि कावृष्टि जादि का कारण न
हमें की उत्पत्ति जाता था। पुराण काव्यन का उत्पत्ति प्रमाण करता
था। अथर्व वेद - १ - २० के पंक्ति में लिखा है :-

ता त्वा रम्य न हिंस्रो ररम्या उरम्यव
उरम्यवि त्वा वाक्य वा।

ज्याह में लोह के चामी, लोह के भण्डार, जो पुराण होते के लोह
कता है, जो ही भी जापका उत्पत्ति प्रमाण करता है और में जाता
है कि का का उदय भी चामी की ही रही।

इस प्रकार का वेदों में कि, प्राचीन देव पूजा में देवताओं
के दे ही भी जापका उत्पत्ति प्रमाण करता है।

१ - देवता वेद पूजा पर ही प्रकार करते हैं, न पाने
पर अनिष्ट करते हैं।

२ - देवता ही बराबर उपहार दिया ही करते हैं पर
पूजा पाने पर विशेष उपहार करते हैं। इस पंक्ति में उत्पत्ति प्राचीनका
के मनुष्यों ने देवताओं के प्रति हीन भाव ही करते थे - पशु, हीन और
भुवना।

अथर्व वेद पुराण काव्यन में बंश्वर की भावना पुराण
के रूप में है। अथर्ववेद के विषय में स्पष्ट रूप में देवी में देवी भी

उत्पन्न नहीं है परन्तु उसका प्रारम्भिक रूप भौतिक क्रियाओं की उत्पत्ति था। एण्ड की भाँति कृषि के रूप में शुरू की गयी थी और यकृत की सहायता से ही तब तक गिरा हुआ था कि अत्यन्त ही रही है। विष्णु की ऐश्वर्य रूप धारण करने वाला बताया गया है। विष्णु ने तीन का यह मानव वर्ग की रक्षा के नामी। यह भौतिक रूपों में विष्णु के प्रति आस्था की भावना है जो भौतिक मानव के बीच रूप में है। विष्णु भेदी के अनुसार रक्षा की रक्षा-कारी है। यह के भौतिक भेदी में धारण के अनुसार का भी बताया है। यह प्रसार एवं यह विष्णु पर पहुँचते हैं कि भेदी में भक्ति की धार-मिक रूप में रक्षा व भक्ति की एक साथ उपस्थित है। यद्यपि भौतिक युग में आध्यात्मिक विष्णु नहीं हुआ है। युग के विकास का विष्णु विष्णु का ही रक्षा तथा जीवन रक्षक रूप, अभी तो अभी नवजा भक्ति के संसार भेदी है गलत है।

उपनिषद्समूह के ज्ञान क्षेत्र में अद्वैत विष्णु ज्ञान की रक्षा करने वाले और दूसरे पक्ष उपनिषद् ज्ञान की रक्षा करने वाले की भाँति विस्तार के हैं। बुद्धिमान, कर्माभिलाष, ज्ञान विद्वत्ता परक ज्ञान मार्ग का और रक्षाधाराएँ उपनिषद् रूप परक ज्ञान मार्ग का उपलब्ध रहे हैं। रक्षा के साथ बुद्धि और दूसरे दोनों का योग ही सही है जो परक ज्ञान मार्ग के भक्ति का विकास हुआ। उपनिषद् में कहीं यह उपलब्ध और कहीं निर्गुण रक्षा गया है परन्तु धारणीय भक्ति मार्ग में युग के उपलब्ध रक्षण की कक्षाओं दोनों रूप गिरा और यह है। उपनिषद्समूह में उपलब्ध की भाँति व्यापक ही थी और उपलब्ध ही भक्ति में ही धारणा ही गया।

उत्पत्ति प्रमाण मुन्नी के जल में ज्ञान और
 नाक पीछे पड़ गी । बाकि कुम्हारों की प्रमाणों में और कर्मज
 का विशेषण हुआ । कारणक तथा उपनिषदकार में कर्मज में बाकि
 ज्ञान का एक ही प्रमाणों में । बाकि उपनिषद ही ही में पारम्परिक बड़ा
 मुन्नी में बाकि के केंद्र विस्तार रहे । ज्ञान प्रमाण उपनिषदकार के
 प्रमाणों के बीच है बाकि के पास कूट पड़ो है । ऐसा उपनिषद के
 बीच के बीच है विविध होता है कि मुन्नी बाकि के पास गुरु होता का
 महत्व की प्रमाणों में हुआ । औपनिषद विस्तार में भी होता है कि -
 " केवल तथा उपनिषदकारों ज्ञान मानें है बाकि के ही ज्ञानों ज्ञान
 का कर निर्मित हुए । उपनिषदों में बाकि के विविध ज्ञानों का प्रमाण
 पाया है । बाकि उपनिषदों में उपनिषदों की ज्ञान की मानकर एक
 हन्त्रादि ज्ञानों का उत्पन्न करने वाला भी बताया है । पारम्परिक
 का ज्ञान होने के लिए ज्ञान विस्तार करना आवश्यक है । इस हेतु पारम्परिक
 का धर्म प्रतीक प्रमाण बाकि के पास होता बाकि । ऐसा बाकि का विस्तार
 पुराने उपनिषदों का ज्ञान मानकर उपनिषद प्रतीक प्रमाण ही बाकि मान
 का कारण है । ज्ञान विस्तार प्रमाण का के ज्ञानों की या बाकि की
 ज्ञान ज्ञान कर एक, विष्णु उत्पत्ति वैदिक वैदिक ज्ञानों ज्ञान -
 बाकि विस्तार पारम्परिक ज्ञान प्रतीक की उत्पत्ति प्रमाण बाकि ज्ञान
 में बाकि हेतु ज्ञान प्रमाणों का-मुन्नी मुन्नी बाकि की बाकि प्रमाणों में ।

१ - बाकि रत्न - औपनिषद विस्तार - ५२०

२ - औपनिषद विस्तार ४ - १२ - १३

३ - औपनिषद विस्तार - ४ - २

४ - बाकि रत्न - औपनिषद विस्तार ५० ५२०

देखावी का स्थान निम्न ३३ में, निम्न ३३ का स्थान साधार ३३ में
 दिया गया विष्णु की मरुता समुद्र स्वरूपों में बड़ी थी । प्राण
 काष्ठ में विष्णु की देखाया स्थापित हुई तथा जग्नि की विष्णु से
 गीता स्थान मिला । मैथी उपनिषद् के विष्णु की जगत्प्राप्त वन
 का स्थान कहाया तथा महीपनिषद् के वात्सा की उज्जैनी गति की
 विष्णु के परम्परा की और जाने बाछा पथिक कहा गया ।

जगत्प्राप्त पूर्व की विष्णु का रूप कहाया गया । मरुत
 उपनिषद् में गति माया के सम्बन्ध में इस प्रकार उल्लेख है, प्रभु की प्राप्ति
 परीक्षात्मक वस्तु की उत्पत्ति, प्रकाश, ऐसा तथा बहुत धुनी से नहीं होती ।
 प्रभु कि पर कृपा करते हैं, उही की उनकी प्राप्ति होती है जगत्प्राप्त वस्तु
 स्थान उही के वस्तु होकर रह गयी हैं । इस प्रकार हम देखते हैं कि वही से
 कई रूप वस्तु की प्रकृति की जाने लगी, यही है गति मार्ग का कारण
 है । यह के नाम पर प्रकृति कर्मजगत्प्राप्त निम्न गीता में सर्व स्थानों पर
 की गयी है । विष्णु के इस रूप साक्षात्कार के लिए प्राण ३३ में
 कुछ कर्मों की आवश्यकता बताई । इस स्थान पर ३३ प्रश्नों में बताया है
 कि हेतु की ओर ध्यान की प्राप्ति के लिए पुराण मुक्त द्वारा प्रीत्य वस्तु होना
 या और गति के स्थान पर प्रकृति की जाती थी । यह है देखाया वस्तु में
 किता वस्तु समझी जाने लगी लगी है देखाया वस्तु में किता वस्तु का
 प्राप्ति होना है । यही है वस्तु मुक्त का वाच्य होना है या ।

१ - देखाया प्राण १-१

२ - मैथी उपनिषद् ६-१२

३ - महीपनिषद् ३-६

४ - मरुत उपनिषद् कृतीय मरुत

५ - गीता २-४२, ४४

६ - जगत् प्राण १३-६ - १

७ - देखाया वस्तु का विचार और विचार - मुक्तवस्तु या जगत्प्राप्त वस्तु

जगत्प्राप्त , जगत्प्राप्त वस्तु १६ की ३

यस करने वाले सत्यनुरूप मुनिपुत्र होने के कारण सात्वत नाम से प्रसिद्ध हो गये । ----- इसलिये देवनागरी की जा नाम "सात्वत की" पढ़ गया । इन की विद्वानों से विचार होता है कि उपनिषद् के ये शैविक लोग ही ही प्रमाणवा नहीं थी - अथर्व परीक्षार, क्या, प्रेम शक्ति कादि कृत्य की शक्तियों का भी प्रसार था ।

यन्त्राव नालि विज्ञानों का उत्कर्ष रासायन काठ में
 हुआ । वास्तविक के रास सम्पूर्ण लोगों के वाय, धनायन, नितुने और
 आकाश रूप है । उत्पन्न, मरत और उत्पन्न अवतार पारण करने वाले विष्णु
 के ही बंध और सीता उनकी स्वरूपा है । हम देखते हैं कि अवतार वाय की
 पूर्ण प्रतिष्ठा रासायनकाठ में ही नहीं नितुने का मानव धर्म की रक्षा करने
 के लिए दुष्टों को नष्ट करने के लिए, मरती को प्रान्न करने लिए मनुष्य रूप पारण
 करता था । । समस्त दुष्टि की विधायी, वास्तिका और वहारिणी माया
 लगी रास के आविष्ट है । माया के ठेगाने है हूटने पर मोक्ष की प्राप्ति लीवी
 है । कथःकरण की बुद्धि के लिए माया है हूटने पर नाकि मरती वाकि,
 निवृत्ति मोक्ष की प्राप्ति लीवी है वास्तिका नाकि के हाथन के लिए रासायन
 स्मरण एवं कीर्तन की वैष्णव मानते हैं । नाकि की यह परात्पुर्ण स्थापना की
 लुगना उपनिषद काठ है करने पर विनियत लीवा कि नाकि में कथाय्य मानों है
 अपना पुनः नाय स्थापित कर लिया था । महाभारत के विभिन्न आत्मानों और
 पात्रों है प्रीति लीवा है कि उनमें श्रीकृष्ण की वाकिमरण सुननाविष्णुधन लीवी
 विज्ञानियों का मरत लय धनुष अवतार मानकर उपाधना की गई । वाक्य लुठ
 है वास्तव धर्म की सर्वप्रथम माना । महाभारत में की वासायनति, वास्तव
 वाकि सम्प्रदायों का प्रतिपादन है और विविध प्राप्ति मरती के भी वास्त्यान
 निवृत्ति हैं । महाभारत के वाकिरक जगता में वास्तव धर्म के प्रचार की प्राचीनता
 सम्प्रदायों की प्रमाण उपलब्ध है । हम प्रमाणों के आधार पर हम यह निष्कर्ष

१ - योजनाय वर्ग का विकास और विस्तार - कुलपदव्य भा. स्थापन २५० २०

આચાર્ય અહિરી જલ્લાળ વર્ણ ૨૬ એક ૪

२ - मेळाविकाय शैविज्य मण्डाहूर पु. ४ - ५

पर पृथ्वी है कि ४०५० ७०० वर्ष के लगभग तथा उसके पूर्व भारतवर्ष में वायव्य वर्ष १, मेघनाद वर्ष १, या उसका प्रसार पश्चिमोत्तर चीना प्रान्त तक ही गया था और संकर्षण वायुदेह, कहरान-वायुदेह आदि की युवा संयुक्त रूप में होती थी ।

महाभारत के श्रुति पूर्व में एक पक्ष पर स्व सन्तानियों एवं स्वायम्भुव मनु के बान्सी नारायणी सम्प्रदाय के वत्स पुनादि भी हैं । भारत के स्वतः दीप बाहे प्रान्त में उनकी प्रार्थना है प्रान्त होकर वायुदेह वर्ष की कमान पुनादे हुए कहे हैं कि संकर्षण बीच बीच मात्र के प्रतीक और वायुदेह के ही रूप हैं । यह वायुदेह दृष्टिपूर्वक आत्माओं के आत्मा और परब्रह्म परमात्मा हैं । वेवता मनुष्य तथा अन्य पदार्थ उनकी ही उत्पन्न होकर उनमें ही छिपे हुए होते हैं । अतः में व्यापक में कहा है कि यह सर्वा-त्मिक वर्ष वही बीजा वर्ष है जिसे कृष्ण ने बतुन के कहा था । कमान विभिन्न रूपों में पृथ्वी पर कक्षार होते हैं यह भी माना गया है । कमान वायुदेह वर्ष संसार की में वायु - दन्तों और महा पुरुषों की कमान युव श्रुति का साम्राज्य फैलाते हैं । स्वतः नारायण ही इस वर्ष के प्रतीक हैं ।

महाभारत और गीता के पूर्व की वर्ष प्रदान और ज्ञान प्रदान मार्ग की बारि में उनकी कृष्ण के योग का अधिक महत्त्व नहीं था । परन्तु वास्तविकी और गीते कृष्ण के योग की आवश्यकता प्रतीत होने लगी और उन्होंने इस भेदरूप का किम्बदन्त तथा साधना मार्ग की प्रक्रियाओं का विधान स्मारे श्रुतिारिक व्यवहारों में कर दिया । गीता ने क्रांतिकारी युवा कल्प वर्ष की स्थापना की । जहाँ बताया कि वर्ष वही, वर्ष कल पाये की उम्मीद होड़ देती काव्य । यज्ञ द्वारा यह कालांतरा पुनर्जा है हुए जाती है ।

गीता का मक्ति मार्ग प्रु मक्ति में निरन्तर साधक को फलदायक है दुःखस्व संसार में फल कार्य करना सिखाता है । यह निरुक्ति परायण ज्ञा काण्ड के स्थान पर प्रुति परायण मगधुक्ति की प्रदाता है । गीता में बीजात्मा में भवा, समर्पण और मक्ति की भावना को महत्ता दी गयी है । उसके अनुसार कर्मों का समर्पण ही मक्ति वस्तु है कर्मों का परमार्थान ज्ञान में है और ज्ञान की वंतिन पराकाष्ठा वात्स समर्पण में है ।

गीता में मक्ति का कर्म-ज्ञान- समन्वित व्यापक रूप दृष्टिगोचर होता है । गीता के अनुसार मोक्ष ज्ञान है ही होता है तथा मक्ति द्वारा ज्ञान की प्राप्ति होती है । काः मक्ति ज्ञान का साधन है गीता के अनुसार ज्ञान प्रपाद के बीतर ही मक्ति होती है । हम ईश्वर की मक्ति नहीं कर कर हमारे हैं काँ कर कि हम उसकी जान पाते हैं । गीता में ज्ञानी मक्त की वैश्व कलहाया गया है । गीता में मक्ति ज्ञान का समधि नहीं है । श्रीकृष्ण मन्थान का कर्म है कि मक्ति द्वारा में वस्तुतः जाना जा सकता है । मक्ति के प्रभाव में ही मक्त उस ज्ञान मार्ग में उत्तर होता है किमि मन्थान का स्वरूप प्रत्यक्ष होता है । ज्ञानी मन्थान के स्वरूप का जो ज्ञान प्राप्त करता है उसी वस्तुतः रक्षा है, पर मक्त ज्ञानी उस स्वरूप में कुल है हीन हो जाता है ज्ञान द्वारा मक्ति होती है और मक्ति द्वारा ज्ञान होता है । गीता वात्स समर्पण के भाव है वीर प्रीत है जो मक्त की वंतिन प्रीति है । हमारे वस्तुतः कर्मों वंतिनी वंतिरि और वास्तुतः केन्द्र केन्द्रों का वंतिरि के वंतिनी में समर्पण होता वंतिरि । मन्थान का कर्म है कि महात्मान पुरुष ज्ञान

-
- १ - गीता ५-२
 - २ - गीता १०-६
 - ३ - गीता ४-३३
 - ४ - गीता ५-५५

की प्राप्ति होती है तथा ज्ञान के कारण उसे समस्त प्राप्ति है परम शक्ति मिलती है । शीवादिबी और कालिदा भक्ति की समीक्षा है । नारायणभक्ति और शीवा का मान्यता भी एक ही है ।

ग्रीक प्रभाव के प्रभावित होकर ये समाधिस्थलों ने पोंदरों में कब्रें खोदकरों की नग्न मूर्तियाँ स्थापित की। जगित्तर वादी बीबी ने महायान की स्थापना की, महायान के संस्थापक कल्पवृक्ष के दिव्य माना-जैन थे। महायान, बोधिसत्व सम्प्रदाय आदि सम्प्रदायों ने फिर से मुक्ति कथोक्ति, भक्ति आदि विचारधाराओं की मूर्तियाँ स्थापित की। ये बीबी कुरुक्षेत्र पर बीबी कलारों की प्रतिष्ठा की थी। बीबी में मूर्ति पूजा का प्रारम्भ हुआ।

गीता के विचारित नामक कर्म की व्याख्या करने वाले श्रीमद् नामक, नारद नामक सूत्र और श्रद्धित नामक सब तीन मुख्य ग्रन्थ हैं । इनमें नारद नामक में नंद वंश का भी कुछ उपादेश पर किया गया । सम्भवतः नामक की पूरी व्याख्या में इन सभी की लक्ष्य कुछ वंश नीतिगत नामक कर्म के कुछ विषय हैं । गीता ज्ञान कर्म एवं उपासना दोनों का सम्मिश्रण करती है और नामक नामक का उत्कर्ष स्थापित करती है, शक्ति श्रीमद्नामकग्रन्थ रूप है नामक नामक का ही उद्देश्य देती है । श्रीमद्नामक में ज्ञान और भैरव्य की शक्ति की संज्ञान कहा है । नामक प्रसार और प्रसार नामक ग्रन्थ में ही हुआ । नामक में श्रीकृष्ण भक्ति के मार्ग का तीनों की स्थापना करके कृष्णोपासना के भक्तियोग, प्रणि, महासष्ट, गुणराज, रासुखाना, उग्र विष्णुज्ञान और ज्ञान में स्थापित किया ।

बाराह्य है शानिय्य बाह्य है शक्ति संत्य संत्य है शक्ति
बाह्यत्व और बाह्यत्व है शक्ति रति नाव में रहता है ।

१ - चीन ५-३

२ - श्रीमद्भगवद्गीता - महात्म्य प्रकरण , अध्याय १ श्लोक ३५

३ - भारती काकुमा का हविषास उ, रा, पानोरकर प्रेम ठण्ड

75 100

मानव का सबसे माय रवि माय है । रवि माय की माँ का नाम है सखी मेघ सक्ता जाता है । रवि रवी मकारम प्रदान करने की श्रुति में मान लीता, मीरकण, मकाराह इत्यादि हैं । भीमभुमानव में रवि माय के परिपोषक मकारम की श्रुति का कड़ा मर्क-स्पर्शी वर्णन किया है । भीमभुमानव में यौन की प्रक्रिया है माँ की वीर देवा की पद्धति को प्रकट वीर सतिप्रप बताया है । रवि माय द्वारा ममान की हल श्रुति में परमानन्द प्राप्त होता है । छ सक्ता मीरियों का उद्धार ममान ने प्रेम के ल पर किया ।

भीमभुमानव में माँ की सर्वोपरि स्थान दिया । उसके रकायत रक्म के सक्ता ममान में ममान सक्ता रूप है कही है कि में न यौन के द्वारा न माँ (ममान) के द्वारा, न रकायत रूप सक्ता (ममान) के द्वारा वीर न रमान (ममान) के द्वारा की प्राप्त होता है । मेरी प्राप्ति का सुख सक्ता की माँ है । एक विच्छा है की हुई मेरी माँ सांकात तक की पवित्र कर देती है जो नहु नहु पाणी है प्रक्ति विच्छा की, ली लीता हुआ, ली लीता हुआ ली लीता की लीता नाता हुआ वीर नाता हुआ, मेरी माँ में निरत होता है वह उस निरत विच्छा की पवित्र कर देता है ।

भीमभुमानव का सक्ता के साक्षित्य पर सक्ता प्रमान मका । निरुक्ति के स्थान पर प्रुक्ति परामजता का रिकर है प्राकुताय हुआ । रमानुव ममान निम्बाई, ममान ममान माँ के सन मापाय भीमभुमानव के प्राप्ति हुए । सुखी, वीर माँ की माँ मकी मकी में मकी के निम्बाई का प्राप्ति हुआ ।

१ - भीमभुमानव १-६-६३

२ - भीमभुमानव रकायत रक्म, ममान १३ लीक २० है २६

निम्बार्क सम्प्रदाय की भक्ति भावना

निम्बार्क सम्प्रदाय के अनुसार वेद का उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति है। इसका उपाय श्रवणमति है। प्राणी को मग्नान की श्रवण में जाने से प्रथम गुरु की श्रवण में जाना आवश्यक है। उपरान्त गुरु के द्वारा ऐसे मार्ग का अनुमन करते हुए भक्त मग्नान की ओर अग्रसर होता है। गुरु शिष्य को उपासना के रूप में उपदेश देता है। उपासना मनका प्रेम का साधन है। इस सम्प्रदाय में मग्नान की पूजा के रूप में उपासना प्रारंभ करीय है। निम्बार्कवादी यह शोकी में लिखते हैं -

उपासनीयं निवर्तौ कोः उदा प्रामणीय ज्ञान कपी मुमुक्षुः ।

मानव को मग्नान की उपासना से आनन्दानन्द है भक्ति मिलती है। सांसारिक विषय में उपासना की आवश्यकता बताता है। निम्बार्क-सम्प्रदाय उपासना प्रधान है। निम्बार्कवादी में अनुर उपासना प्रणाली का प्रस्तुत इस सम्प्रदाय में किया। इस सम्प्रदाय में गुरी विधि - विधान का प्रचार है। इस सम्प्रदाय का प्रत्येक भक्तान्त गुरु, देवा, मनका, नाम कामगमगुप्ता की ओर मनका रूप विधान का अनुष्ठान करता है।

उपासना तथा पूजा में सांसारिक तथा साधु भावना का अन्तर है। इस भावना को दो प्रकार से करते हैं - (१) स्वयं एवं उपास्य के स्वरूप का चिन्तन, (२) उपास्यके की सेवा भावना एवं स्वयं चिन्तन भावना का वर्तन प्रकटित है सम्बन्ध है। इसका आधार वैदिक दर्शन है। वेदुतः सर्वज्ञ सर्व शक्तिमान, सर्वव्यापी की सर्वोत्तर श्रुति की ओर अग्रसर भक्ति वाते श्रुति स्वयं कीर्ति का विवेक स्वाभाविक है। निम्बार्क-सम्प्रदाय

मैं यह स्वरूप विन्दन मैदानेद नाचना है किया जाता है क्योंकि उपास्य
 [५७] व्यासक एवं देवी है और उपासक [वीर] व्यास्य एवं देव है । यह
 देवी नाच बुद्धिों में जीव स्वरूपों पर मैदाने की भिन्नता है । नीचा मैं
 लिखा है मैदाने की देवी के बीच मृतः सनातनः भी व्यास की है उहीना
 नाच्य पदोक्त के आधार पर उही सूत्र का प्रतिपादन किया है । अतः
 मैदानेद नाचुधार उपास्य और उपासक के स्वरूप का विन्दन करना ही
 नहीं शास्त्र का अभिप्रायः है । अतः नाच की जाभाय जीव नाचना पर कह
 देते हैं । निम्नार्थ सम्प्रदाय में प्राचीन ज्ञान है मूनामिता की परम्परा
 नहीं जाती है । भी सनातन की है यह उपासना भी नाच की मिति
 और भी नाच में उही मूना मिता का उपदेश भी निम्नार्थमार्थ की मिति
 एवं उपासना का वाक्य वाक्यादि सुद्धि है वाक्यादि नहीं होता ।
 अतः कारण यह है कि मूना सनातन का एक स्वरूप है । जिसे उपासक
 का कर्म ही रहा होता है यह इन वाक्यादि सुद्धि की और व्यास की
 नहीं मैदाने एवं मूनामिता पर है कर्तृ और जीव सुद्धि नहीं है । उही
 उपासना का उपासना, नाचुधार, उपासक एवं उपासना वादि नाचों
 है उपासक उपास्य होता है । अतः उपास्य देव । भी व्यासुन्दर ई
 एवं सन है । उन्हीं एवं सन प्रभु की प्राप्ति होने पर यह जीव वास्तविक
 सुद्धि का कर्म करता है । अतः उपासना के ही कर्ममिति
 नहीं जाता । यह है ज्ञान की भीमक है और उपासना है भी उपास

१ - नीचा ११-७

२ - मूना सूत्र २-३-४२

३ - भी है मूना वास्तविक है ७-२-१

४ - उही मैदाने: एवं मूना में उपासना वास्तविक मिति । है ७-७

जीव जीव है । डॉ० नारायणदास जी ने दाहीनक चिन्तन पद्धति एवं
 स्तोपासना की एक ही वस्तु के दो पक्ष माने हैं । ये माने लिखे हैं -
 बुद्धार्थक उपनिषद् में ब्रह्म की एक स्थान पर परम आनन्द स्वरूप कह-
 कर फिर एकमेवानन्दव्याप्तादि मूल्यानि - भावामुपवीर्यान्ति (५०४-२-२३)
 उनके आनन्द की भाषा है अन्य प्राणी मात्र की उपवीर्य कहा गया है ।
 'ये प्रिय स्त्री देवादिनिष्ठ पुरुष बाहर कीर भीतर कुछ नहीं जानता
 है 'भी ही प्राप्त करता । (१०२२) है आदिनिष्ठ पुरुष की वद ही क्या
 कुछ नहीं जानता । यह बीज का अर्थ काम कीर आनन्दान्न होकर -
 निश्चिन अभाव्य है । १. ५० ५-२२ । स्तोपासना के मूल में ही वही
 चिन्तन भावना काम करती दिखाई देती है । इस रीति से स्वरूप चिन्तन
 के अतिरिक्त अपने उपास्य के ही की भी उपासना के भावना करते हैं
 उसे मानती देवा कहती हैं । पुष्प, पुन, मेघन आदि शान्ति के सागर
 समूह अष्ट स्वरूप के जल की पूजा करते हैं । उपासना भावना चिन्तन
 प्रदान है । जो उपासना में पूजा का काम दिखा जाता है ही दार्शनिक
 भावों की प्रामाण्य होने के कारण यह पूजा को 'देवा' कहती हैं ।
 निम्नार्थ स्त्री में भी प्रसार - मृत्यु, पद, निद्रा और प्रिया भाव
 बताते हैं । परा या रामानुजायति की उपासना का यही मूल आधार
 है । रहस्य निम्न विवरण हरिश्चन्द्रजीदश स्त्रीकी व्याख्या है लिखा

१ - निम्नार्थ चन्द्राय और उनके पुष्पा भाति लिखी कवि पुष्प १२३

डॉ० नारायणदास जी ।

२ - निम्नार्थ चन्द्राय और उनके पुष्पा भाति लिखी कवि पुष्प १२३

डॉ० नारायणदास जी ।

३ - देविनिष्ठ मनुः प्राणिनां विद्या उपासितः ।

मृत्युश्च पुनश्च देवश्च प्रियायन्मित्रवत्तम ॥

रहस्य जीवन्ती २६

है। निम्बार्क में दश स्तुती में राधा कृष्ण के युगल स्वरूप का विवेचन किया है। उक्तस्तुतियों शक्तियों की राक्षसा की सेवा में विमुक्त बताया है। निम्बार्कचार्य ने बहुत संदिग्ध द्वात्रिंश रूप में धाम्पुत्राधिक सिद्धान्तों को कहा है परन्तु वे भी धाम्पुत्र और निश्चित हैं। फेस काश्मीरी के कुम्हारिक ग्रन्थ में उपासना विधि के सम्बन्ध में लिखा है। उन्होंने मनवान के वाक्पिष्टि का प्रतीक कहते हैं। रत्नमयी उपासना की भी बताया है। उपासना के अन्तर्गत पुनः पुनः है। निम्बार्क धाम्पुत्राधिक में उक्तें तीन वेद हैं -

१ - वैदिकी पुनः

२ - वाक्पिष्टी पुनः

३ - कुर्यात्पिष्टी पुनः या सेवा ।

वैदिकी पुनः :-

यह धाम्पुत्राधिक वैदिक शक्तियों का बड़ा वाद है। वे शक्तियाँ मनवान हैं ही सम्बद्ध होने वाक्पिष्टि। पुनः कर्माधिक इतने लिख आवश्यक है। वेद वेदों के अनुसार मनवान की पुनः का प्राधान्य है। इतने लिख शास्त्राग का बहुत मोटाह की प्रविष्टि नहीं प्रस्तुत है। यह धाम्पुत्राधिक का शास्त्राग सेवा पुनः लिख है। प्राचीन वाक्पिष्टि की शक्ति के और भी प्रकार है तथा शास्त्राग की गति वाक्पिष्टि नहीं है। किन्तु एक पर उन्हें वाक्पिष्टि स्थान पर लिख कर वेद छुट्टि करते हैं और फिर शास्त्राग मनवान की पुनः कर लिखी पुनः कार्य में सम्बन्ध होते हैं। वैदिक पुनः लिख में मनवान के भीष्ट (१५) उपकार

निमित्त (३२) उपचार या अष्ट पञ्चारित्र (३३) उपचारों
के मंत्र बोल कर पूजा करते हैं। ये मंत्र, मन्त्र, पाठ, स्मरण और
आदी इसके मंत्र हैं। वेदिकी पूजा में मंत्र निमित्त यह दुष्ट आदि है
निमित्तकाल धर्म - निमित्त कर्मों का नाम है कि "वर्णिक"
कहे हैं। आचार्य या गोपल प्रसाद इसके लिए सुनिश्चित है।

वर्णिकी पूजा :-

वर्णिकी पूजा में गोपल के की आराधना
की जाती है। तन्त्र आदि के अनुसार इन्द्र के नाम का निमित्त
इन्द्र का ऐश्वर्य स्मरण है। ऐश्वर्य की निमित्त ऐश्वर्य की
मंत्र होते हैं। मंत्र का अर्थ विष्णु, ब्रह्म, इन्द्र आदि के
संयोग है कहा है। कम ऐश्वर्य के बीच में पारंगत अर्थ के नाम की
स्थापना होती है और मुख्य अष्ट मंत्र के अन्तर्गत की स्थापना होती
है। उपचार-व अर्थ, अर्थ के अर्थ तकनी पूजा की जाती है।
मंत्र, मंत्र, मंत्र की स्थापना है। निमित्तकी मन्त्रों के निमित्त
द्वारा गोपल के द्वारा पूजा होती है। गोपल वर्णिकी स्थापना
गोपनीय तन्त्र, वर्णिकी तन्त्र आदि मुख्य वर्णिकी पूजा के अन्तर्गत
है। प्रायः वर्णिकी अर्थ की एक स्थापना पर किया रती है वर्णिकी
पूजा होती है, अर्थ का वर्णिकी अर्थ के द्वारा प्रमाणों द्वारा निमित्त
हम निमित्त का महत्त्वपूर्ण रूप है।

मुरावाटिका पुस्तक :-

मन्त्रों के लिए मन्त्रमान भी कृष्ण की परमा देवा की होकर अन्य भी मान्य नहीं है । श्रीकृष्ण की साक्षात् परमा देव है, जिसकी मन्त्रना कृता, जिस जाति देव भी करते हैं । श्री कृष्ण की शक्तियाँ अविनाशिक हैं और उनका प्रभाव भी अविनाशिक है । मन्त्रों के लिए वे भीकर स्वयं वाह्य करते हैं । अतः ही श्रीकृष्ण पुनः की प्राप्ति होती है । यह अति पावन पुस्तक की है - हंस, गान्ध, धर्म वास्तव्य तथा उच्चरत । इनमें सभी उत्कृष्ट अति उच्चरत पावन है अन्तः की जाती है । पुनः मन्त्रों का नाम की उपाकरण है । गारुड - मन्त्र पुनः में श्रीकी नाम की मन्त्र की देवता स्थापित है । निम्नान्त उच्चरत में सभी उच्चरत पावन की मन्त्र की वादर्थ पाता है । मन्त्रों के उपाय की सभी मन्त्रात्म के प्रति उपायिक पुनः - माकल रत्न की उच्चरत का माकल पावन है । यह अति के अन्तः मन्त्र मान्य उच्चरत मन्त्रों की उच्चरत पावन का अन्तः मन्त्र मान्य की मन्त्रात्म देवा में स्थापित है । यह देवा की उच्चरत मन्त्र की उच्चरत मन्त्र में होती है । निम्नान्त - उच्चरत के उपाय मन्त्रों में सभी देवा अन्तः मन्त्र होती है । माकल उपाय के अन्तः मन्त्रों निम्नान्त उच्चरत के अन्तः मन्त्र पावन वाह्य करते हैं और सभी मन्त्र में ही उच्चरत पावन का वाह्य करते हैं ।

१ - देवात्म मान्य - उच्चरत मन्त्रा

२ - निम्नान्त मन्त्रात्म पुनः ही उच्चरत मन्त्र ।

जो वे साम्प्रदायिक वस्त्र धारण में ही प्रवीण होते हैं। शिष्य की कमी पुराणों की बन्दना और उनका कीर्तिमान रही रहस्य मान ले कति हैं। यह सम्प्रदाय के दार्शनिक आधार बीमबुलानम्, कृष्ण-पुराण, परबुराण काति हैं। सम्प्रदाय के कृष्णधर्मों के परम ब्राह्मण विष्णु कात्राही ज्ञान काशन की कृष्ण बन्ध मोहोद विधारी हैं। उनका परम दिव्य लोभ भावों भावना है पूर्ण में लक्ष्मी मोहोद धारण रखेभासना निम्नाह सम्प्रदाय में प्रचलित है।

यह सम्प्रदाय में भावुई धाम की ही प्रकृति है जो मोहोद में ही उच्च लोचन है। धाम का कति लक्ष्मी के अक्षर वास्तव संत्य, भावों काति की लोभार करता है। सम्प्रदाय में यह प्रचलित है कि लक्ष्मी काशन के कृष्ण की निम्नाहाराधन रंगदेव के कक्षार के है। वे राधा की कष्ट लोचन में है एक हैं। यह प्रचार धम फैलते हैं कि निम्नाह सम्प्रदाय में लक्ष्मी काशन प्रारम्भ है ही प्रचलित है। निम्नाहाराधन के कति यह लोचन में कुछ उपासना के लक्ष्मी काशन की भावुई धाम की लोभ की प्रकृति की लोभार किया है। वे लक्ष्मी की भावना की पूर्ण कति लोभ और लक्ष्मी लक्ष्मी काशन की लोभ है। लक्ष्मी काशन काशन में निम्नाहाराधन की - लक्ष्मी काशन की प्रकृति - लक्ष्मी काशन के लोभार की लोभ है। यह लोभ का लक्ष्मी लक्ष्मी काशन के लोभार की लोभ है लक्ष्मी काशन

रूप प्रथम मण्डल में नित्य नृन्वाक्य धाम है । उनकी सत्ता का
 अनुभव भी कृष्ण की कृपा से उनका अन्य मत करता है । मर
 एक मात्र यमुना पुलि वीर बन कुंजी में कृष्ण की छीछाओं का
 दर्शन करना चाहता है । इस निम्न छीछा में श्री राधाकृष्ण की
 सेवा ही कुराण कथा माधुर्य भाव की परिपक्वता व्यक्त है
 इस सेवा का अधिकार पुराण के भाव धिहीन होने के उपरान्त
 सही भाव में ही मिलता है । रूप नारी भाव में ही कुराण
 समर्पण, सेवा के रूप में अपने अनुभाव का व्यक्तित्व की वारा-
 ण्य का करना देना ही सम्भव है । मर प्रथम मण्डल नृन्वाक्य -
 विहारी की वृष्टिमान सेवा करता ही अपना कर्तव्य समझता है ।
 वृष्टिमान सेवा में प्राप्त: उत्थान है केवल रात्रि की रात श्रुति का
 अन्विष्ट है । मर वृष्टिमान की छीछाओं का चिन्तन तथा -
 कीर्ति करता हुआ विविध साधनों से प्रभु की उपासना करता
 है । हरिश्चात देव ने महाराधी ने रक्षोपासना का बड़े सुन्दर
 ढंग से विवेक किया है । जगति महाबाणी के अत्यन्त सुंदर में
 ही नरात्मवत्त्व का ही श्री कृष्ण रूप में उत्थापना, सेवा भव
 है उनकी अज्ञाति शक्ति का उत्तरण, नित्य नित्य नृन्वाक्य
 धाम के नित्य विस्तार में उनकी रक्ति का प्रत्यक्ष विस्तार
 श्रुतिदेव्य सत्तरी रूप की वात्सा कल्याण साधना है वहां
 सांकेतिक रूप से संवित किया गया है ।

~~~~~



परन्तु विद्वान्मनुष्य के अन्तर्गत स्वयं विशद विवेकन है -  
 रक्षावाचना, महाभुक्त, महाभक्त और अत्यन्त गोपनीय  
 रहस्य है पूर्ण है यह कारण महावाणी के देवा सुत और  
 सुरत सुत के हृ की उन्मोचन का अनिवार्य फल अत्यन्त  
 वाक्की को ही कहना पता है ।

वाक्की को प्रभु का अत्यन्त देवा निष्कर्ष  
 होकर पवित्र निर्णय की का परित्याग करके मृत, शून्य,  
 निन्दा और करके फल महाभुक्त पर अत्यन्त रहने हुए  
 बीच मात्र पर क्या नाम रहने कठोर वाक्की का अर्थवा  
 परित्याग करके, वाक्की नाम अत्यन्त होकर एक ही नर के  
 हृ की हृ अत्यन्त की न होकर हृ अत्यन्त का अत्यन्त  
 होना चाहिये । नर अत्यन्त का नाम होकर अत्यन्त अर्थ है  
 अत्यन्त अत्यन्त नाम की देवा अत्यन्त का निश्चित अर्थ है  
 और अर्थ है अत्यन्त अर्थ नाम की अर्थ है ।

ही अत्यन्त देव है वाक्की के अर्थ न  
 अत्यन्त अर्थ है । अत्यन्त अर्थ के अर्थ अर्थ अर्थ का  
 विचार है :-

यही रहने अर्थ को देवे, अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ ।

वाक्की की अत्यन्त अर्थ, वाक्की अर्थ अर्थ अर्थ ।

१ - निम्नार्थ अत्यन्त अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ

प्रभु अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ ।

२ - निम्नार्थ अत्यन्त अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ

प्रभु अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ अर्थ ।

पंचम मय पंचम कुराग, जगदी रूप बधिकता पावे ।

अन्तर्नि प्रेम धिये विरवावे, दष्टम रूप ग्यान नून बावे ॥

अपनी कृपा निरखे बलिबे, जगदी रा की गरिवा बलिबे ।

या लोभम वे वे कुरागी, जे: जे: जगदी निरवरी ॥

ए प्रसार का वावरण करते हुए साधक श्री  
किशोर, किशोरी के नित्य कुन्दासन नाम परिकर में प्रवेश  
कर जाता है । श्री निरंजनशक्ति विहारिणी स्त्री परि-  
कर के लिए नित्य विहार करते हैं ।

### नित्य विहार :-

निम्नार्क सम्प्रदाय के अनु अनु श्रीक कवियों ने  
नित्य विहार का वर्णन किया है । इस सम्प्रदाय की उपासना  
का यह मुख्य उपाय है । श्री भट्ट जी, हरिनाथदेव, त्यागी -  
हरिनाथ, रूप-रसिकदेव और विहारिण देव ने भी नित्य विहार  
का वर्णन किया है । रसिक कोविन्द ने क्रांति स्त-भाषुरी के  
बाद भावबलात् ने 'निरंजन भाषुरी' में क्या रूप-रसिकदेव ने  
'उत्कृष्टावली' के विद्वान् भाषुरी में नित्य विहार और -  
उपासना उपाय का सुन्दर विवेकन किया है । नित्य विहार के  
चार अंग हैं :- १ - परात्पर जल परब्रह्मपद की पूजा -  
२ - उमरी आकृष्टावली शक्ति की राधा, ३ - केशवात्मा रूप  
सहचरी स्त्री, ४ - निरद कुन्दासन नाम । नित्य विहार के चार  
अंग हैं । नित्य विहार में श्री स्वागत स्थान का नित्य किशोर  
रूप ही नुसखा किया गया है । किशोरी की का मुख रूप उनके  
पारम्पर्य नाम का परिदाक न दोहरावही आस्था का परिनाम

---

१ - गतामाणी गृष्ट स्त सरस्वती

४। कुल व्यक्तियों भी मरु की वे सुमल उत्पत्ति है हिन्दी भाषा में विषय विस्तार यहाँ का प्रारम्भ माननी है। अतः भी मरु योनि वस्तु का निवर्तन किया है। और सुमलवर्तनी की वन्दना की है -

सम्यक् । सदा सुख्य क्वचित् कुन्वादिभिर्निविष्टासीति ।  
 नैव नन्दनं कृष्णमानं नन्विषीति वरुणं कान्त्य उपासीति ॥  
 कान्त्य उपायं वसिष्ठः सदा स्मरति, विविधं निर्वृत्य विधासीति ।  
 धेनुं नन्दं कुम्भं चैतानि यत् प्रीतिरिति नन्दः सदा युतः रासीति ॥

नित्य विहार की राधा माधव की कल्पना के  
कोई कौनिक सात्त्विक राशि प्रीति है जो नित्य कृपाजन है अनवरत  
रूप से आवी लयी है। इनमें किसी प्रकार का वाक्य तथा वाक्य-  
रहित कौन नहीं होता। यह प्रत्यक्ष प्रेक्षकों का सीधे सम्पर्क है  
यह सर्वगती लक्ष के अनन्त इत्यादि का साक्ष्य है। अतः ही हम -  
केवलानन्द विवेचनार्थ है जो नित्य विहार का वर्णन करता है।  
उन्हीं कल्याण क्षेत्रों की यह नित्य विहार का आवीजन है यह  
नित्य विहार लक्ष है जो ही दूर अज्ञान प्रेक्षक का परिणाम है।  
वाक्यमय में भी राधा माधव का वादिक आदि, यह ही परम  
स्वरूप के प्रत्यक्ष विद्युत रूप है। वे ही ही परम नित्य विहार  
क्षेत्र प्रत्यक्ष प्रमाण करते हैं। अतः ही परम की उन्हीं परम  
की प्रतीति है। प्रकृत-विकृति के कारण उनमें विभिन्न प्रतीति  
होती है। प्रिया विकृत है अनन्तकाले उदारी का ही प्रत्यक्ष  
क्षेत्र है। यह नित्य विहार निरी सुख लक्षण के लिए नहीं बस  
परात्मा प्रीति के लिए है। कौनिक राशि है वाक्य नाशिल तथा  
सुख साक्ष्य है परम नित्य विहार की स्थिति निम्न है। इस  
राधामाधव के विहार में सर्वगती की ही प्रीति होती है।  
राधा वही साक्षात् प्रतीति है किसी प्रियत्व का सुख पीन ही  
और माधव प्रियत्व की लक्ष्य है फिर उन्हीं प्रीति कक्षाओं में

निमग्न है जो प्रियजन की काकुलाद बंधन होते हैं । इसलिए ज्ञाना-  
 स्थान का प्रेम काष्ठ है । निरवधि है और स्वीकृत है । स्वीकृत  
 प्रेम की परिभाषा विदुष्या में होती है । यह प्रेम स्नेह कृपा की  
 भाता है जहाँ मान, विश्व की कहीं हैलगात्र की स्थान नहीं है ।  
 यह वन्द्य, निमग्न एवं दुःख है । नित्य विचार में रंगदेवी की  
 किरण, लीला, क्षणिकता आदि भूविशेषों की लीला प्रकाशमान है  
 सावित्र्य के प्राण है । वे सभी सभी मातामृत । नित्य विचार  
 सेवा में निरत रहती है । उत्तुली भाव है मेरी राधा माया के  
 ज्ञानन्द में ही अपना ज्ञानन्द स्नान करती है । प्रत्येक रूप में सह-  
 करियों की सर्वज्ञ संस्था होती है और ये भूविशेष के लीला पर सेवा  
 रत रहती है । भूविशेषों की कृपाभावा का आदि मूल्य माना जाता  
 है शक्ति है " कर्मिकर्माणि " कही हैं । परशुरामदेव विन्दाजीवार्थ  
 के परमेश्वर केवल भेष्य उभय काय में निरुत्तिपायता नहीं कृत्यलता  
 होती परमेश्वर का यह लीला एक लक्ष्मी है विन्दाजीव स्वीपायता  
 के कर्मिकर्माणि है । उनके काय में ही सर्वेश्वर का प्रभु के प्रति शक्ति  
 भावता व्यक्त होती है । विन्दाजीव काय में सर्वेश्वर कायान की  
 ही सर्वेश्वर सेवा माना गया है । वे ही विन्दाजीव काय के  
 कृपाभावा के कर्मिकर्माणि है । परशुरामदेव के काय में ही सर्वेश्वर  
 कायान के प्रभु शक्ति भावता कर्मिकर्माणि कही है : -

साधु के लीला मन्त्र, साधु के लीला देव ।

पक्षा पूर करि नेन करि, सर्वेश्वर की सेवा ॥

१ - भूविशेष भूविशेष की पूर

२ - परशुराम काय - राक्षसीता ४१ का० रामश्राव कर्मा



### रूप-रसिकत्व की शक्ति यावना

महर्षि सांख्य में पञ्चानुरागि कर्मात् कर्तृ एवं  
 प्रवृष्ट कुराण की ही शक्ति कही है<sup>१</sup>। मन्वान के श्रुति परम प्रेम  
 की शक्ति है<sup>२</sup>। वह कृष्ण स्वतया भी है<sup>३</sup>। कर्मे समस्त कर्मा की  
 मन्वान की शक्ति करना और उनका चौड़ा हा भी विस्तारण  
 की है पर परम व्याकुल होना की शक्ति है<sup>४</sup>। श्री निम्बार्कपात्र  
 ज्ञान, सांख्य स्वाभाविक स्वभाव - गुण - स्वतयादि है महान  
 रमाकान्त पुरुषोत्तम परब्रह्म - मन्वान श्रीकृष्ण की ही शान्ति  
 की निरन्तर प्रकाश की शक्ति है<sup>५</sup>। रत्नमन्त्र गुण में -  
 गुण और प्रेम के योग का नाम की शक्ति कहा है<sup>६</sup>।

- १ - सा परानुरक्ति वीर्यम् - सांख्यिक्य मक्ति सूत्र २
- २ - सा रसात्मन् परम प्रेम रूपम् - नारदस्य सूत्र १
- ३ - कर्तुं रसात्मन् यः नारदस्य सूत्र ३
- ४ - नारदस्य उपनिषत् लिङ्गा पारितोषिकं लिङ्गवर्णी परम् -  
अष्टाशुद्धीति । नारदस्य सूत्र ३६
- ५ - निष्कारं नाप्य प्रभुम् १ - १ - १
- ६ - चिन्तामणि पक्ता मान सत्त्वमक्ति वीर्यं निष्कम्पं पुण्ड १२

हरि मति बिना जीवन का कल्याण सम्भव है। मति बिना ज्ञान-  
मय का का सम्भव नहीं है। मति के बिना जीवन मुझे फल-  
हीन फल की भाँति साबित है। बिना मति के बिना फल का, ज्ञान-  
ज्ञान, ज्ञान प्रत्यक्ष रूप में है। हरि मति के बिना की निर्णय  
है। मति हीन नर यदि स्वार्थ के कारण किन्तु कलर कुत्सा है,  
तो भी कलर कलर जी प्रसार निहित है, कि प्रसार कलर कलर  
कलर पर मल मान है दूट जाता है। परशुराम ने मति की फल  
के ज्ञान पर ज्ञान, कर्मों की पुष्पादि का स्वयः नष्ट होना बताया है।  
जीव सात्त्विक बुद्धि है परमात्मा का ही बंध है, परन्तु ज्ञान मन  
सांसारिक ज्ञान, विज्ञान साधनाओं के रूप में फलर ज्ञान स्वयं की मूल का  
जाता है। मति ज्ञान ज्ञान है। हरि मति है ही ज्ञान ज्ञान नष्ट  
होता है। यह ज्ञान नाशवान है।

१ - अ ज्ञान हरि बुद्धि नहीं करि ।

सब ज्ञान जीवन ज्ञान कारण मरि मरि दुःख मरि ।

परशुराम पदावली ५० वंश

२ - हरि मति मति हीन नर प्रसार की पैट निज माँह ।

मि जी माँह मति हैं सात्त्विक फल काँह ॥

परशुराम वा० पुन्य हरिकावि १०

३ - परसा फल फल निमति पुन की वन मान ।

फल उपजा है स्वयं ही मरि पुन की त्वान ॥

परशुराम वा० पुन्य ज्ञान कर्मर २६१

४ - का कलर मन हरि मति कलर नहिं दूट ।

नीवर का कलर है कलर न किट्टे ॥ परशुराम पदावली ५० वंश

मति में हीन फटा रहती है - काराण्य, काराक और  
काराणा विधि । इनके कारण मति के बीच पैदापैद भिन्न नष्ट हैं ।  
तानात्म्यः मति के दो भेद हैं - १ - बेदी कथा गौणी मति और  
२ - रागात्मिका कथा अंतुकी मति । बेदी मति में विधि विधान  
व्या अस्त्र म्यादि का पूर्ण निवारण होता है । उपासक, उपास्य  
पुत्र, पुत्र्य, पुत्रा विधि केर आप, बेदी मति के दो भागों की भी नसे  
हैं । कावतु पराणारविन्वी में तानात्मिक प्रेम है जो मति की मत्त में  
प्रगुति होती है और जो रागात्मिका कथा अंतुकी मति होती है ।

बीमक्यामय में काराणा विधि के भेद है मति के  
दो प्रगुत भेद बतलाये हैं । नारद मति पुत्र में प्रेम रूपा मति की  
म्याह वास्तवियों का उत्तेज किया है - गुणमाहात्म्यासति, रूपा-  
सति, पुत्रासति, स्मरणासति, वात्स्यासति, वात्स्यासति,  
गान्धासति, वात्स्यासति, वात्स्यासति, वात्स्यासति और  
वात्स्यासति ।

बेदी मति के कथनीक कथान के नाम का भवण,  
स्मरण, कीर्ति कथा इनके रूप का विविक्त आत्म म्याधिकार पुत्र,  
वकी वाकन किया जाता है । वाकन मति है मति की एतक्या है म  
काधान का विधान बदात्मिक स्मरण, भवण, कीर्ति, काराणा भावत्यक  
होता है । परिमाण का स्मरण ही वह निमित्त पूर्व है निमित्त प्रगुत है

---

१ - कुली पत्नी का० बलिभक्त्याप निम पुत्र ६०

२ - भवण कीर्ति विष्णुः स्मरण वाद देवानु ।

वकी कथन वात्स्यासति वात्स्यासतिनिमित्त ॥- बीमक्यामय ७-५-२३

३ - नारद मति पुत्र ८२

अध्यात्मिक । का नाश हो जाता है । श्री हरि को जन्मे जन्म में  
 धारण कर दो उनका भक्त - स्मरण - कीर्तिन करता है । जो बड़ा  
 भक्त क्या भक्त - याचना का हितार्थ नहीं होता भक्त । फिर वह  
 निमित्त होकर परम सुख प्राप्त करता है । श्री नारायणधारण की मांति  
 हरिनाम भवण का ही कर्मावस्था है । नाम भवण है ही जीवन है -  
 पाप-दोष भुक्त जाती है और जन्म में निमित्त भक्ति का उदय होता है -

भवण सुख हरिनाम राई का स्वयं न छानि ।  
 सुख सिंग की मरव, फल भुक्त ज्यों पावै ॥

परमेश्वर: राम नाम का क्या नाम ही साधक उपासना  
 है । का पर भुक्त ज्ञान सिंग राम नाम रहता माता कला अर्थ है ।  
 नारद भक्ति पुत्र है भुक्त भक्ति के पाव हैक, पुत्र, कर्म और वाक्य  
 इन बार कोई ही भुक्तभक्ति के कर्मों सिंग क्या है । निमित्त सम्पत्ति  
 का ही ही राधाकृष्ण स्वयं ही सर्वेश्वर परमात्म की पूजा जाति का  
 विशेष विधान है । भक्ति साधना में पाव हैक, पुत्र, कर्म और  
 कर्म का पुत्र साध साध भक्त है । इस प्रकार के पुत्र विधान मेंपाव

---

१ - क्या सुखी रहे परमेश्वर की हरि हरि हरि नाम ।

ही पुत्र भक्त भक्त भक्त, साधि भक्त का उपास ॥

भाषा पुत्र परमेश्वर परमेश्वर पुत्र पुत्र ॥

२ - भाषा पुत्र परमेश्वर परमेश्वर पुत्र पुत्र ॥

३ - नारद भक्ति पुत्र ॥

४ - सर्वेश्वर सर्वेश्वर स्वामी । सर्व जीवन की कर्म परमा ॥

परमेश्वर परमा ॥ पुत्र पुत्र



के प्रति उपासक के हृदय में देव्य भाव का प्राधान्य रहता है। यह  
वक्तव्य सर्व है पुरुषा पूर्वक जो भाव प्रकट करता है वही मन्त्र है। इस  
प्रकार के पूजा विधान में ही भावान के किशोर की सेवा के साथ ही  
उनके समस्त कण्ठस्थ, प्रणाम, नामोच्चारण, कीर्तन, ध्यान तथा  
परी कर प्रभावशाली प्रकृतिकृत पूजा की उन्माद आदि आता  
है।

मन्त्र के क्षेत्र में वाच्य, सूक्त एवं जात्य-  
निषेधन का भी महत्वपूर्ण स्थान है। मन्त्र वाच्य भाव है नमस्कार  
के अनारिक्त हेतु एवं अभिष्ट करुणा का गुणवान करता हुआ  
उत्तम कृपा की वाक्ता करता है। भावान में अमृत सामग्री है।  
वे काम्य के संगम और संगम भी काम्य कर सती हैं। उनके मन्त्र  
की अभिष्ट, दीन-हीन और काम्य है। भावान केवल के परम  
आत्म्य हैं। केवल ही उनकी कृपाकृता एवं महत्त्वता पर पूर्ण -  
विश्वास है। प्रभु की मन्त्र कृतकृता, करुणा एवं सर्व समवेता  
का स्वयं वाच्य मन्त्र का वाक्ता का प्रभाव का है। किन्तु कही  
हूँ मन्त्र कही भावान है वह भी विधाना नहीं भावता। वह उनके  
छापी सब कुछ छोड़ कर सब केवा है। उनकी कही उन्माद के लिए वात्स्यानिषेधन-  
१ - कारति प्रभु कथ्य मेन करुण मुक्ति मेरी।

ठाठो बरदार द्वारि करुण कवि मेरी ॥

मोह की छिया बुझारि मेरी छुं छोट मेरी ॥ परब्रह्म पदा०  
१०३२

२ - परब्रह्म पदावली १०० वं २०

३ - जो कम नै सुखु न लोह। मन्त्र करि है राम भू है धीरे।  
परब्रह्म पदावली ० २२

४ - कम है कलाव कलाव कन्ध पुन बीबीन प्राण विधु क्यारी।

कम पुन ही जो सब पाव, क्यारी कारति करि न करी ॥

परब्रह्म पदावली १० वं

१३/१२/४

स्वरचित्तैव मे छीला विहंगि मे हरि मछि-  
 नापुरी <sup>१</sup> की रक्षा की है । यह हरि मछि समस्त कर्मों में  
 तिरमौर है । इसके समान कोई और नहीं है -

जो मारन हरि मछि है, सब कर्मों तिरमौर ।  
 मछि की मध्य कर या सब मछि कीर <sup>२</sup> ॥  
 जहाँ जिनके राव मुनी मुनी सब का समावा है ।

मछि के सम्बन्ध में स्वरचित्तैव लिखते हैं :-  
 परा प्रेम नमोदि र, उला, मध्यम हीनि ।  
 जब हमने कर्मों की, समस्त कर्मों प्रीति ॥ <sup>३</sup>

जो भी प्रेमर के कर्मों का वर्णन निम्न  
 प्रकार है :-

मन की रचन जो स्वरन पुन पुन पद देव ।  
 मदन वाच्य रु सत्यवा, वाचन जनि रच ॥  
 र नमो के लो में, जब रचन पछिवादि ।  
 सबनि पुन पुनियों का मन मछि कीर कनि ॥  
 हरि पुन नावे करति सब, कीरन के जोर ।  
 एक किं बुरादि न मुकरी, सुमितन मछि कीर ॥

१ - छीला विहंगि - स्वरचित्तैव पृष्ठ ४५-४

२ - पुन पुन में जाननि रच्यो जिनके आनी राव ।

जहाँ जो रचन करी, जहाँ भी काव ॥

छीला विहंगि स्वरचित्तैव पृष्ठ ४५-४

३ - छीला विहंगि - स्वरचित्तैव पृष्ठ ४५-४

सभें सभें पैसा सभें, सभें पाँसा धारि ।  
 मोठ सैन प्रकां छी, मुका छी विचारि ॥  
 बल लछाईं फोट दी, का छीर निर जगार ।  
 नम पैसा छी पाँसा है, मुनि नमि छिर नाह ॥  
 पैसा पाँसा मु कछी, पाँसे छी प्रसार ।  
 का छीर का छीर के छी, पैसा बाँसार ॥  
 री काय कर कीरि, की न काका का ।  
 काय पाँसा छी काँसा, मुनि वल्लभ प्रसार ॥  
 काय न किछु सभें री, निर निर जगार ।  
 मुका राखे निरका, काय पाँसा सौ नाँव ॥  
 काय का का मु निरका, काय निर काय वल्लभ ।  
 की सभका छीर निरका, काय काय वल्लभ ॥

परिशिष्ट, मुनि, प्रसार, मुनि, पाँसा, वल्लभ  
 काय काय वल्लभ है । काय, मुनि, पाँसा काय वल्लभ पाँसा  
 है काय वल्लभ है । काय काय वल्लभ है । काय मुनि पाँसा में काय  
 के वल्लभ निरका मुट जाते हैं । काय काय काय काय काय काय है -

- 
- १ - काय निरका - काय निरका मुनि १५, ७ के काय  
 २ - काय निरका - काय निरका मुनि १५-१७ - १५ - १७  
 ३ - काय निरका के काय काय, काय मुनि वल्लभ मुनि ।  
 काय मुनि काय है, मुनि काय काय काय ॥

काय निरका - काय निरका मुनि १७-१८

बोकर :-

उन्मत्त है जिस जिस किरी, बुधि न रहे घर बार ।  
 है उन्मत्त रोगांच है, दुर्गति कौनका घर ॥  
 छोड़ देव की कानि जो क्यू न मो नहिं सं ।  
 मृत प्रेम जड़ का सं, बिना हीन निरंक ॥  
 काका और पुनं नहिं, कांतिन ही न और ।  
 मृत ही और की नहीं, हति रोने की नौर ॥  
 कबहु नदगद कं करि, कानि हीन प्रकाश ।  
 कबहु बुद्धि उन्मत्त है, नांवाच मेरे प्रकाश ॥  
 कबहु नीम नाच है की, मृत्यु को कि कृति ।  
 हनिं विधि प्रेमाशक्त है, जाह सब बुधि प्रुति ॥

बिकले प्रेम में प्रेम नाक प्रुट होती है जो निर-  
 दिन कीद नहीं जाती । उपरिस्कीय उपाकरण के रूप में प्रेम सुंदरियों  
 की कानि है जो नीम मेह से परी रखती थी -

है प्रेम बुद्धि रति, यह प्रेम ही हीन ।  
 है कानि हरिणी नहि, नार नार मेह नदीन ॥

१ - डीठा विमोचि उपरिस्कीय प्रुट १० - १२ से २३

२ - विमोचि कीद न नावही, २ प्रुट संज्ञा कानि ।

विमोच प्रुट कानि, प्रेम नाक छोड़ कानि ॥

डीठा विमोचि प्रुट १० - २४

३ - डीठा विमोचि - उपरिस्कीय प्रुट १०-२४



उत्तम गति हीन, मध्य से परे है जो पदा गति भी  
 नहीं है ।<sup>१</sup> जो हैमक पाद ही कारणकर सत्य का रह पीठा है -  
 रह पीठे गति सेव्य ही, हैमक पादों में गति ।  
 निम्न नहीं वह निम्न है, वहां दिष्टांत विचार ।।  
 जो पिंज गति ही, वरुण गति ही गति ।  
 गतिन में जो मूनी, ए कृष्ण गति गति ।।  
 एक ही वह निम्न है, जो कृष्ण कृष्ण कृष्ण ।  
 हैमक गति गति है, है एक ही हैमक ।।  
 विद्यानंद का नाम गति, विद्यानंद का नाम ।  
 विद्यानंद का नाम गति, हैमक का नाम ।।<sup>२</sup>

स्वरचित्तवैद्य की भावना है कि है प्रिया । तुम मुझ पर  
 खींची जा रही, किसी भी देव विद्यानंद तुम्हारे घरों में पड़ी रहे-  
 रही प्रिया की पर डारी, वही कृष्ण रह ।  
 विद्यानंद रहे कृष्ण वरुण की, वरुण पर ही देव ।।<sup>३</sup>  
 स्वरचित्तवैद्य होने लगे तुम में एक लोभ की भांति करते हैं ।  
 वन-वन की रक्षा, मन मन की रक्षा और विद्यानंद की रक्षा चाह-  
 ते हैं -

विद्यानंद कि हो गति, विद्यानंद कि गति ।  
 वन गति वन रक्षा, मन गति मन गति ।।  
 विद्यानंद कि हो गति, विद्यानंद कि गति ।  
 वही गति रहे वही, वही गति गति ।।

१- जो वरुण के पैर है, मुनई रक्षित गति गति ।

हीन मध्य में परी जी, पाद वरुण वरुण ।।

२- हीन विद्यानंद स्वरचित्तवैद्य पृष्ठ ५०-५१-२०

३- हीन विद्यानंद - लोभ तुम - स्वरचित्तवैद्य पृष्ठ ५१-५२

४- रक्षित विद्यानंद - स्वरचित्तवैद्य पृष्ठ ५१-५२-५३

### निरुद्ध आराधना

स्मरतिक निम्नाकांक्षा है, उनके काव्य में निर्गुण-  
पादना प्रकट नहीं हुई है। परन्तु ऐसा नहीं है कि स्मरतिकवेय के  
काव्य में निम्नाकीय स्वीकारना न मिलती हो। निम्नाकी सम्प्रदाय  
की परम्परा के अनुसार उनके काव्य में भी सर्वेश्वर महाशुभ के प्रति  
हो नहि माया विनाश देवी है। निम्नाकी सम्प्रदाय में सर्वेश्वर  
ममवान की हो सर्वोपरि देवता माना जाता है। क्योंकि ये ही  
निम्नाकी लोगों के दृष्टिकोण हैं। स्मरतिकवेय के काव्य में भी "सर्वेश्वर-  
ममवान" के प्रति नहि माया दृष्टिगोचर होती है :-

काव्य के लोभ मया, काव्य के लोभ देव ।

रतिक वहु कर नैय करि, सर्वेश्वर की देव ॥

स्मरतिक देव के काव्य में अन्य लोक स्थलों पर भी  
सर्वेश्वर नाम भी आया है। यदि सर्वेश्वर की नहि जानती हो फिर  
जानने की कोशिश नहीं रहता क्या उनको जान लिया हो और कुछ  
जानने की नहीं क्या क्योंकि यही सब ठीक विनयान है ---

रतिक जानी क्यों की, ममवान की नहि काव्य ।

की सर्वेश्वर जानती, ही मे कही न काव्य ॥

सर्वेश्वर की रक्षित्व, की ज्ञान की शीर ।  
 जानो है सी जानि है, किंकि तुम एव शीर ॥

निम्नानुसार सम्प्रदाय की विशिष्ट उपासना -

राधाकृष्ण की निरुपेक्ष सेवा है । इस सम्प्रदाय में सर्वप्रथम भक्त  
 वर्तित राधाकृष्ण की निरुपेक्ष सेवा की जाती है । निम्नानुसार  
 है । भक्तिकर्म के पुरुष कर्त्तव्य के नाम में अपने महावाणी श्रुत्य  
 में राधाकृष्ण का वैदिक एवं शांतिमान वर्णन किया है ।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

१ - भक्तिकर्म के नाम में राधाकृष्ण ४१ वा० राधाकृष्ण का

### जनन्यता

स्परशिक के वृष्ण और राम जन्य हैं । ये समुद्र की वृष्ण भी निर्गुण हैं । स्परशिकीय का प्रभु सम्बन्धी इष्टिजीन जति व्यापक है । उन्होंने लोक स्थानों पर काले सर्वव्यापी स्वरूप के दर्शन कराये हैं -

प्रभु व्यापक सब नाति क स्वर्ग पर स्वर्ग दिखावाहिं ।

स्वर्ग नीर बरतेव नाम का नाति समावाहिं ॥

क निर्दल, रिकस निराकार, सब व्यापी सुब सुब और सब में समाया है

सुन ब्रह्म निर्दल निराकार आकार हरि रूप निम रूप तावेद नाथी ।  
नाथी कहा सब व्यापी न सुब सुब सुब जीव जेनादि सब में समायी ॥  
सुन विविष्ट आविष्ट ताविष्ट साक्ष्य सुम नाति पैरी सु भेदावपायी ।  
नीर निस्वार काराणि कृपा विंशु तृती प्रगट परवा प्रभु जाप नाथी ॥

एक प्रभु अधिनत नाथ है कि प्रगट है लच्छ में पावक,  
पुण्य में सुवाह है, तिरु में छे है, पुण्य में प्रभु है, ली प्रगट कारा-  
का कले है हरि प्रगट ही जाता है :-



बलिब नाथ निरंज राधा । बंज बर्म रहे समाधा ।  
 दिष्टि न दीने मुष्टि न बाधे । कष्टि नही सकाँ न गवाधे ।  
 दीति प्रगट सकल करानर । बाधानका न करे दवा निर ॥

ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

बंज नाहि निरंज जाना । औ बाबल काष्ठ पाशना ।  
 कीड़े मयन प्रगट होय बाधे । मंज हीन होय तिही जिय ॥  
 पुण्य नाहि औ बंधे दुखावा । यो सब नाहि ~~कै~~ प्रको पाशा ।  
 औ केह कि में दाखाने । पीका है प्रगट होय बाधे ॥  
 औ पुण्य नाहि पूर रहे समाधा । मयन किया है बाहर बाधा ।  
 बौद्ध प्रगट हरि बारावकी बौद्ध । औ सुनिरे कि नी सुतदाई ॥  
 करि नकिन्त्य हथ्या नी वारी । नाना रूप देख कि पारी ।

हरि के स्वल्प का वर्णन इस प्रकार किया है ---

कनक धवल कल जेने । कंठ्यानी बज्जुत रहे ।  
 कनक करण करण कलावा । त्याद विविध कि दवा सुमावा ॥  
 बंजित पुराण कमात्रा बौद्ध । निराकार आकार न बौद्ध ।  
 परम जलना पुराण मुंसा । हार मल साजनी का बंदा ॥

यह एक है, और सकल का एक सार है ---

---

१ - रूप रसिकद्वय ( उत्तरादे ) इन्द कवि २०६ का० तारिका प्रवाद -  
 किन्तु ।

एक कोठा एक रूख एक माय एक तार ।  
 एका एकी एक ही एक वस्तु एक तार ।  
 इन्द्रः इक्ष्वाकुस्य साहस्य उद्य एक समान ।  
 सत्ता के रजति उस एक एक जाय एक जान ।  
 हय हय कोरि एक ही कदे न न दुख लीया ।  
 उत्पति मयि सकुंज मे अतिथि सीमा ॥

यह कांत, जानन्य रूप, अविनाशी, ज्ञान ज्ञातरी तीर वार है :-

ज्ञानि नाथ कांत ज्ञान जानन्य रूप ।  
 अविनाशी ज्ञान करन अविनाशित कृपा ॥  
 ज्ञान ज्ञातरी ज्ञान निगम ज्ञानन वे न्याता ।  
 ज्ञान्य ज्ञानी ज्ञान ज्ञान उनि ज्ञानता ॥२

यह प्रु निरंजन, निर्विकार, निरिद, निराकार  
 निरीप, निराकार निरिद में निरिद है ---

---

१ - २५ रतिकेस ( उल्लास ) हंद कवि ३२६ का० आरुणाचाराय  
 २ - " " " " ३२० "

नारायण निर्वाण नाम निम्न निर्माह ।  
 निर्नीतिन निरुप निमन विरुद्ध निरुद्धाह ॥  
 निर्ति नाथ निर्जन निर्दिनार नरिन निरुद्ध निर्धि गेह ।  
 निराकार निरुप न मन निमि निर्जेह ॥  
 निराकार निराह्य निरदिनन वरा की निर्प्रेह ।  
 निरुद्ध निम्न निरुद्ध निरुण निर देही ॥<sup>१</sup>

सप्तमः सर्गः

### नाम - जाधार

रूप रहस्यमय की केवल नाम का ही जाधार ।

उनका विस्मय है कि जो कुछ भी करता है सो हरि करता है और  
किसी के करने से कुछ भी नहीं होता ---

जो कुछ करे सो हरि करे और का किया न कोई ।  
और का किया कल्प सत्य हरि करि है सोई ॥  
जब मन जावार हरि की ओं आरामनी ।  
क्षण करण स्मरण मोक्षण तुल्य नामी ॥<sup>१</sup>

दीनों पर क्या कहे पाठे बही दीन कन्पु है ---

हरि दीन कन्पु दीन की क्यात कुपात सो न सोई कृपण पात  
दीनी शिव की संपात सब सब सोई ॥<sup>२</sup>

छोटे, बड़े, पढ़े सबकी हरि नाम का ही धुमिरण करता बाहिर  
क्योंकि एक बही सत्य है ---

१ - उपरलिखित ब्रह्म कवित १७ डॉ० आरकाप्रसाद मिश्र

२ - " " १७ " "



सौंख्यां पैसा बाढवा चुनिरिहै सत्य हरि नाम निष्कम न जानी ।  
फुलट या छानि की चुनवि जानुं संव हरि मख पीपावि पैरी नखानि॥

साहे कृष्ण कही जगदा राम एक ही है । उधी के  
स्मरण है समस्त जगद पुणों की जते हैं । कि प्रकार नी माधे राम-  
नाम की मजा बाधो —

नाम जगिण हरि एक ही, कृष्ण कही या राम ।  
परहराम प्रु है चुनि, चुनिरि हरि सब काम ॥ ३६०  
धर नहीं हरि नाम है, मांकी कसति माय ॥  
परमा माणी की पिरी, कि दाही की जय । ३६१॥

हरि के समता मन्त्रि होना चाहि । हरि का खप करना चाहि ।  
और जो की कृष्ण के नहीं निजलता चाहि -

हरि चन्मुख धरि नाथी, जपौ हरि की नाम ।  
हरि उरति न किनारिहै, परदा प्रेम मिठाव ॥ ३६६ ॥

---

१ - उक्त पृष्ठ ३३ की किमीनी विलेखर

२ - उक्त पृष्ठ ३०६ की किमीनी विलेखर

उपना कर्म है कि कि प्रणर वर्या के बिना कीव  
कुली ही बचा है उही प्रणर पापी नाम के बिना कुली रखा है :-

ज्यों बाला तिले परधरा कीव कुली कुल नाहि ।  
त्यों प्रापी हरि नाम कि, नाहि फिर मरि बालिहरी ॥ १०८६ ॥

की हरि का सुमिरण करा है की निरुद्ध है ---

हरि सुमिरण सुमिर ही निरुद्ध ।  
बाब निरुद्ध की पीये पने क ॥ २

---

१ - उपना पुष्प १०६ श्री कियोनी विश्वेश्वर

२ - श्री अमरसिन्धु - पृष्ठ ८-३६ का० रामप्रसाद झा ।

### वर्णाश्रम - निर्भेदावा

परशुराम देव ने हिन्दु और मुसलमान दोनों को कट-  
कारा है। बाहुबांड्यार एवं बाधरी देव-भुषा में कोई बाधना नहीं  
रखी है, उनके यहाँ समान है। ऐतरेय ब्राह्म, समन्वयात्मकता, एवं  
रक्षयवादी प्रकृति की अनिवार्यता बापके साहित्य में लोक स्थलों पर  
की गई है। इसके इस भाव का बोधक होता है कि हमें बने निर्भेदावा  
की भावना थी। उनके अनुसार उनके वर्णवर्ग एक ही वात्सा है, जो  
परमात्मा का कंत है। इस दृष्टि से व्यापक दृष्टि लीजिए एवं उदार-  
दृष्टि का परिणाम उनके साहित्य के अन्तर्गत है उपलब्ध होता है।  
हम कह सकते हैं कि हमें वर्णाश्रम निर्भेदावा की भावना विद्यमान  
थी।

### वर्णाश्रम निर्भेदावा :-

परशुरामदेव की है अनुसार उत्तम, मध्यम एवं नीच  
दोनों वर्गों के व्यक्तियों का निर्भेदा एक बड़ी तुल्यता है अर्थात्  
उत्तम, मध्यम और नीच व्यक्तियों में फेद करना व्यर्थ है सब समान है -

उत्तम मध्यम नीच को, एक ही धिरका धार।

सब परमा, परशुरा, हरि भव पावे पार ॥

### परमात्मधार

दीक्षा के समय दिव्य के संस्कार जिसे करते हैं, उनके नाम हैं वाप, विष्णु, माता नाम और मन्त्र । गुरु की प्रशंसा के रूप में उनको दीक्षा पर धारण करना पड़ता है, नहीं तब ही वह का मुक्त धारण करना ही काम उलटा है । ओं का धारण के ही प्रकार हैं होठ और ब्रह्मवाच या वय्य मुक्त धारण गुरु - स्थायी ही धारण कर सके हैं । निम्नार्क सम्प्रदाय के अनुसार - गुरुओं को वय्य मुक्त धारण नहीं करनी चाहिये । ध्यान का प्रायः होठ मुक्त का ही प्रकार है । ओं का धारण की वास्तु निर्दिष्ट मुक्त का गोपीनाथ द्वारा मुक्तों में प्रेषित सती का नाम ही मुख्य संस्कार है । ओं का स्तुति का धर्मिष्ठान्तः विष्णु भगवान का ऐक्य होना है । वेदों में भगवान के वय्य मन्त्र दास्यविक्र ओं का धारण करते हैं । इस लोक में सब मुक्तों ही धारण करना वेदों के वाच्य होने का पूर्व रूप है । पूर्व काठ में विष्णु के माध्वेय स्वयं की ओं स्थापना की थी ओं का उसके पुत्र के और विष्णु के राम वृष्ण का जीव उलटाने के लिए उन विन्नों का धारण करना वाच्य है । दीक्षा के निम्न का मैं मंत्र और वास्तु उपकरण में विष्णु नाम का सती का धर्म मन्त्र है । प्रति और प्रभावशाली धारणों के धारण की भी वेद विन्नों में वाच्यता ही जाती थी और दूर दूर है धारित का धारण के लिए उनकी धारण में आते हैं ।



रूप रसिकदेव यद्विधा है स्त्री के लिये भी हरिव्यास देव के पास  
जाये थे । रूप-रसिकदेव ने हरिव्यास यज्ञाभूष में लिखा है ---

नर नर एव ही नर, कभी कभी और ।

रूप रसिक हरिव्यास की, नर रिति कबु और ॥

नर नर और सम्भव विन, सबकी बात ज्ञाप ॥

रूप रसिक हरिव्यास की, बात करे सब बात ॥<sup>१</sup>

पृष्ठ - ५५

बीच कृष्ण का जल है, इसलिए इस जल में ताने का  
 जल मात्र प्राप्त करता है। बीच परमात्मा विवेक है इसलिए ध्वनि  
 दृष्टा। उष्ण दर्शक है और परमात्मा ध्वनि दृष्टा। उष्ण दर्शक  
 है। यह ध्वनि ध्वनि को एक साथ अनुभव करता है। यह ध्वनि -  
 ध्वनि की अनुभूति करता है इसलिए ईश्वर कहा जाता है। इन सब  
 जानने के कारण ईश्वर सर्वत्र और विविध वर्णों का जल होने के  
 कारण बीच विविध है। बीच सर्वत्र नहीं है। इस हेतु कृष्ण के बाकीन  
 है। बीच कृष्ण की विविधता नहीं करता। बीच और जल का  
 रसिका होने के कारण कृष्ण की ईश्वर कहे हैं। ईश्वर कृष्ण बीच  
 कृष्ण और जल कृष्ण के हीनो आधार कृष्ण है ही। प्रतिष्ठित हैं। यह  
 निर्गुण कृष्ण जल का उपादान और निमित्त कारण है जल कृष्ण की  
 निर्गुण कृष्ण है। यह निरुपादान में एक रस निमित्त रखा है। इस  
 साधारण सर्वव्यापी कृष्ण के ध्वनि को प्राप्त करने के लिए बीच ही  
 एक मात्र साधक है। ध्वनि को जल ध्वनि ध्वनि की कृष्ण रूप में विभक्त  
 करता ही नहीं ध्वनि का साधक है। नहीं ध्वनि की उपादान ध्वनि  
 रूपों में पूर्ण होती है। जल की कृष्ण रूप से होती है प्राणीमात्र  
 में ईश्वरीय नाथ रही है उसी हेतु कहा जाता नहीं की अनुभूति उपा-  
 दान है इसी साधक का कर्म:करण पूर्ण रूप है निमित्त ही जाता है।  
 बीच और जल है ध्वनि सर्वत्र सर्वव्यापी ध्वनि नम कृष्ण का -  
 ध्वनि कारण है ध्वनि करना नहीं ध्वनि निर्गुण उपादान है। जल की  
 कृष्ण रूप ध्वनि ध्वनि ध्वनि में लक्ष्य दर्शक करना ध्वनि का पक्षक रूप

है। जीव मात्र ही ब्रह्म का सेंट मानकर उनके प्रति अनुपाका रहना और सेवा करना नाशिक व करारा रूप है। तथा जो ब्रह्म ही मुना खुद की कन्धः करण में हाफा करना नाशिक का सीधरा रूप है। एवं प्रकार नाशिक की दृष्टि में ब्रह्म अनुण और निगुण दोनों हैं। काय और बीज में ज्ञानानुभवि रहना हाफा नाशिक का सीधरा रूप है। का प्रकार फल की दृष्टि में ब्रह्म अनुण और निगुण दोनों हैं। काय और बीज से ज्ञानानुभवि करना हाफा नाशिक की प्राथमिक कात्वा है। इसके हाफा से चित्त निमित्त - सीकर विज्ञात और कन्धरा की प्राप्ति की जाता है एवं फल की - विधीय पराधीनता का प्रेमा नाशिक की कन्धरा फल हाफा के फल और बीजों के प्रति केन्ध कन्धि मैत्री, करणा, मुक्तिता उपेक्षा के भाव है और कन्ध मुना है फल सीधी है।

ब्रह्म की ही ज्ञानकता हैं निगुण और अनुगुण। ब्रह्म कली प्रीति के केन्द्र केन्द्र यत बीज की कन्ध में डालने के लिए निगुण नाशिक का काय प्रवण करता है। अनुगुण से बीज की मुक्ति प्राप्ति सीधी है। निगुणनाशिक बीज के मुणों का विरोधान करती है। काकार के विरोधान से बीज में कन्ध, केन्ध के विरोधान से कन्धि करता है और विधान के विरोधान से कन्ध प्राप्ति सीधी है। इसके बीजकता कन्धों से मुना सीकर परमात्मा की कन्ध प्राप्ति करता है। अनुगुण नाशिक की काय मुना है। अनुगुण नाशिक की स्वयं नाशिक है तथा निगुण नाशिक मुना नाशिक है। परम पुरुष परमात्मा दृष्टि के कारण में कली काकुतादिनी नाशिक की काय कर कली प्रीति। काया। नामक नाशिक की काय कर कली है। प्रीति के उत्प, रय, कन्धीय मुना है। परम पुरुष की दृष्टि, स्थावि और संसार के लिए इन बीज मुनी

के वाचन से ज्ञात, विष्णु और भीम का रूप धारण करते हैं। पर ज्ञातमान कीदृश है। ज्ञातमान कीदृश विज्ञान मात्र रूप कल्प है राक्ष और निर्मित है। वे ही पूर्व कर्तृ तत्त्व विषय ज्ञात रूपों के मध्यस्थी हेतु के ज्ञात हैं उनकी उपायना है ही। पूर्व रूप ज्ञात और कर्तृ रूप ज्ञात, ईश्वर की उपायना प्राप्त कर ज्ञात है ज्ञात रूप का वाचन प्राप्त करता है। ज्ञातमान कीदृश विज्ञान मात्र रूप कल्प है राक्ष और निर्मित है। वे ही वाचनार्थ उपायनात्मक परमेश्वर हैं कल्पी उपायनात्मक रूप प्रकृति के कल्प ज्ञात रूप ज्ञात का कल्पना करने वाले ज्ञात विष्णु और गौतम ईश्वर रूप माने जाते हैं। वे ईश्वर और उनकी राक्षसा विषय के ज्ञातना है निर्मित रूप पर ज्ञात कीदृश और वाचनार्थी उपायना भी राक्ष के ज्ञात है ज्ञात कीदृश है, कीदृश - ईश्वर ज्ञात है।

सत्यमेव जयते



### निम्नांक सम्प्रदाय के मानक सम्प्रदायों का कुछ विवरण

सम्प्रदायों में आचार्य परम्परा और विष्णु  
 कीर्ति का बड़ा महत्त्व है। वे साम्प्रदायिक आचार्य के जन्म को हैं।  
 सभी सम्प्रदायों के कुछ सामान्य धारणा बताये गये हैं — वे हैं तुलसी  
 की, कबीर, जहाँ भगवत् विष्णु, शंकर, मध्व, तथा और भगवत् । तुलसी  
 की, माता जोता के वृत्त कण्ठ में तथा सर्वदा धारण कला जाति ।  
 गुरु की शरण में जाकर जिनका उनसे सम्बन्ध की स्थापना होता है  
 वह उसका गुरुवा बन्ना माना जाता है ।

### देवा

प्रत्येक देवा में भी राधापरण प्रपन्नता का ज्ञान रखा चाहिये । पीप भुंगार आन्धमन आदि सर्व प्रण की प्रिया की का सीना में बाँध कर बाद में भी छान लेता है ।

बुद्धी का दासी का नाम है का: भी भी है परनाई  
 कहाँ जाती है और भी उगाये समय जाननिवाँ में बाँधकर प्रपन्न  
 में छोड़ी जाती है । इसका कारण यह है कि बुद्धी परण देवक  
 है । नाम देवा का जन्मा निय का मन्त्र है । नाम देवा की  
 माननी देवा का ही छानार रूप है । स्वल्प दुःख बाध्य क्या  
 माननी देवा नाम बाध्य है । नाम देवा को काँ दुःख की बा-  
 दस्यकता नहीं है कहाँ माननी देवा में नामी का बाँधर नाम  
 ही जाता है । यदि छरीर स्वल्प नहीं है तो प्रष्ट देवा हीना  
 ज्ञान्य है, ऐसी दशा में नाम देवा द्वारा बाँध जनन्द प्राप्त  
 कर सकता है । परदेश गमन कथा प्रपन्न काठ है समय नाम देवा  
 ही सम्मन है आपत्ति असीन समय में नाम देवा ही सम्मन है ।  
 नाम देवा रक्षित बाँधता का कृपा ही छान उपाय है । बाँध नाम  
 देवा की पर पर कथा स्थान विहीन पर स्थापित कहे स्वल्प  
 देवा की नाँव सम्पादित कर सकता है । भी किन्तु के साथ भी  
 नाम देवा स्थापित की जा सकती है । नाम देवा पवराने की  
 पदवि है कि बुद्धी काष्ठ कथा बुद्धिकला पाञ्चांग पर या  
 बापु पञ्चादि पर " भी राधा " नाम दीक्षित कर दिया जाता है ।  
 बुद्धी काष्ठ पर भी राधा नाम छांट पदा स्थान मुकुट आदि

यदि कौं पर रोहि मावन यदि द्वारा निमित्त कर धारण  
 करना चाहिये । कौं पर नाम धारण के मूल में यह भावना  
 निहित है कि प्रेमानुभूति की चरम स्थिति में आराध्य का नाम  
 हीन हीन में व्याप्त हो गया है । नाम देवा का एक प्रकार  
 का स्मरण और विधि भी है । जो देवा किन्ना किन्ती वाकुल  
 उपक्रम एवं उपादान के द्वारा सम्पादित की जाती है उसे मानवी  
 देवा कहते हैं । इस देवा का कुंहरा नाम " ज्ञान योग " भी है ।  
 श्री रामकृष्ण की सेवा उन के पूर्व एवं परमात्मा की मग्न हीनताओं  
 की मानसिक भावना करनी चाहिये । प्रकट देवा में किन्ना मांदि  
 मग्नता आरती यदि का रूप होता है उही प्रकार मानसिक देवा  
 का भी रूप विन्यास करना चाहिये ।

### समाव

श्री राधाकृष्ण की विभिन्न रूपों की छानों का राग रागिनी एवं वाद्यों के स्वर में गायन की समाव कहते हैं, कि प्रभार वत्त सम्प्रदाय में कीर्तन व्यवस्था के छाने प्रभार निम्नार्थ - सम्प्रदाय में समाव गायन की परम्परा है। समाव गायन का प्रधान गायक मुखिया कहलाता है। प्रथम गायन मुखिया करता है तथा - समावी छाने का अनुकरण करते हैं।

समाव गायन राधा माधव की कान्तिरूप रूप - छानों की वाक्य भाव विन्यस पूर्ण गान है। कन्वरें में प्रिया प्रियजन की छाना करते हैं और वाद्यों का समय जिस भाव का पद गान करते हैं वह रंग समाव में छाने भाव का पद समावी गाते हैं।

साम्प्रदायिक मन्दिरों में समाव गायन के वाद्यों का होते हैं। निम्नार्थ सम्प्रदाय में समाव विशिष्ट नक्शों पर होता है। उत्पत्तियों के अनुसार ही पदों के गान है समाव गान होता है। उत्पत्तियों के अनुसार नित्य विचार के कि प्रेम विन्यास का वर्णन होता है, श्री की का छाने प्रभार प्रभार किया जाता है। समाव के पदों का पद संग्रह वर्णोत्तर कहलाता है। निम्नार्थ सम्प्रदाय में महावाणी के पद भी समाव गायन में प्रयुक्त होते हैं। वास्तव में समाव गायन राधा माधव की कन्वरें छाना का गुणगान है। समाव



की परम्परा कायम है। स्वर और वात का सुयोग नागर राधा-  
 कृष्ण की रस लीला की स्रष्टा है समान नायक तथा बीवा  
 दोनों की रस मग्न होते हैं। समान नायक राधावल्लभ चम्पूदास  
 की रस है जो नायक का प्रायः लीक मरिच चम्पूदासों में प्रचलित  
 हो गया है। निम्बार्क चम्पूदास का समान नायक भी उही है -  
 प्रभावित है।

सुन्दरसुन्दर

### साम्प्रदायिक विधिविधान उत्सव

मनमान की सेवा में उत्कृष्टता और दीक्षा होने के लिये सम्मानानुसार विविध उत्सव मनाये जाते हैं। कान्छ जाति कुंजी के कुम्प और त्योहार मनाये जाते हैं, जो की उत्सवों की हीता मनाई जाती है। उत्सव सामुहिक रूप में होते हैं जिसमें एक समूह वस्त्राहीन उत्सव हीता के अनुसार पूर्वाचार्यों की वाणिज्यों का नाच करवाते हैं। उत्सव के अनुसार ही ठाकुर की का कुंमार एवं सेवा की जाती है। मुंज, चम्परा, छिवार जाति की कन्द-ज्वनि है मुंज कंडों है राम-राजिनी प्रभावित होती रहती है। अंतिमय सुरम्य वातावरण का समावेश जाता है। सम्प्रदाय की एवं विधि का नाम समावेश है। ऐसी समावेश कि किन तक भी बढ़ती रहती है। साम्प्रदायिक दक्षिण महात्मा ज्ञाने मुंज रूप है सम्प्रभावित होती है।

निम्नार्क सम्प्रदाय में परम्पराकार त्योहार की प्रकार के होते हैं :-

- १ - देवताओं के सम्मानित
- २ - महापुरुषों के सम्मानित

निम्नार्क सम्प्रदाय में देवता सम्माननी त्योहारों के उदाहरण हैं जो - कन्याष्टमी, रामनवमी। महापुरुषों एवं गुरु सम्माननी त्योहार की निम्नार्क सम्प्रदाय में मनाये जाते हैं जो- निम्नार्क कान्छी जाति। निम्नार्क सम्प्रदाय में हिन्दू धर्म के सभी त्योहार मनाये जाते हैं।

उत्सव में सम्मेलन हुआ वी रात ही ठा में  
 होती है । पहले कुछ मास बाँटे छोटे बाँटों का युगल रूप में भुंजार  
 कर अपना मुक्ति कीयात्रा की जाती है फिर साधु देवा होती है ।  
 उसमें आमन्त्रित भेजानों का र मजों का प्रवाद है उत्सव किया  
 जाता है । उत्सवों में कान्ठ, लोड़ी, फूलन, सरद आदि मुख्य हैं ।  
 समय समय पर विशेष उत्सव भी होते रहते हैं । अन्य-दिन अपना  
 पारोत्सव विधियों में ही आचार्यों की विधियाँ मनाई जाती हैं ।

निम्नार्क सम्प्रदाय में मासों मास पूर्ण युगल  
 उपासना की मुख्य है । इस विधान में मान्यता है कि कर्मे श्रि -  
 मजों के इस उपासना का प्रसार करने के लिए श्रीकृष्ण अपने अन्त-  
 रंग परिकर की शिवा ली वी कुछ मण्डल में भेजे हैं । शीघ्र रूप  
 में वे ही आचार्य की जाते हैं । इच्छित पुनर्जातों के कर्मोत्सव भी  
 समारोह के माये जाते हैं । इनमें भी समाज - संकीर्तन, नगर परिक्रमा  
 साधु देवा आदि किये जाते हैं ।

कनधारों की कान्ती उत्सव प्रायः हास्वीय  
 द्दम पर होते हैं । इनमें उपवास, पूज आवश्यक होता है । फिर  
 निर्दिष्ट समय पर पंचानुष्ठ है मनवान का अभिषेक कर भुंजार किया  
 जाता है । स्वीत पाठ, फल भाजन और संकीर्तन होता है । यह सम्प्र-  
 दाय बाह्यर आत्म त्यागि है दूर रहकर अपनी मीरम आदिक  
 मायना की मनवान के चरणों में अर्पण करना ही जीवन का पूज

मान्यता है। निम्नांक सम्प्रदाय में निरुपेक्ष निवहारी राधाकृष्ण का सम्प्रदाय विस्तृत शास्त्रात्मक स्वीकृति प्राप्त मान्यता का है। निम्नांक में एक ज्योतिषी की ही उक्त राधानामक रूप में देखते हैं। उक्त वेद की स्मृति के वे उक्त कृत्यायी हैं कि उपासना की मान्यता पूर्णतः कादि के नाम पर भी परकीया मान्यता की उक्त स्थान नहीं देते। उनकी उपास्य वही राधा है जो कृष्ण के नामान्त में शिष्ट परम्परा से देखी जाती है। उक्त सम्प्रदाय में सांसारिक स्वार्थ के प्रति निरुपेक्षा और वास्तव-वादिता स्पष्ट है।

सत्यमेव जयते



### चिह्न

निम्बार्क सम्प्रदाय में प्रत्येक नास्तिक की चिह्न लगाना आवश्यक है। भेषज की ऊर्ध्वपुच्छ की लगाना चाहिये। निम्बार्किय धर्म ग्रन्थों में मंगा यन्त्रा कुम्भीयादि की पवित्र मूर्ति का वा गोपी - वाहन है चिह्न करने की कहा गया है। निम्बार्क मत के कुम्भार का- वाहन के मन्दिर या भरण के वाहन मरु का चिह्न होना चाहिये। मन्दिर में जो मूर्ति होती है वही चिह्न के बीच में बिन्दु लगाया जाता है। कुछ निम्बार्कियों में गुरु परम्परा के स्वाम बिन्दुलगाव का प्रचार है। यह श्रीकृष्ण के स्वाम स्वरूप का प्रथम है, साथ ही निम्बार्क मत की सेवा में बड़ी रूप का भी वाहन है। अन्य सम्प्रदायों की वीणा निम्बार्कियों का चिह्न सिद्धान्तानुसृत वाहन है। इनके मत में गोपात मन्त्र रात्र का वीणाकार श्रीकृष्ण का कुम्भार वीणाकार स्वरूप है। उनके ऊपर का चन्द्र बिन्दु उनका छार पूरा वाहन है। यह चन्द्र बिन्दु का वाहन ही निम्बार्कियों का चिह्न स्वरूप है। निम्बार्क सम्प्रदाय में दो प्रकार के चिह्न प्रचलित हैं -

१ - ऊर्ध्व पुच्छ चिह्न की नास्तिक के कई भाग से प्रारम्भ करके समस्त छाट पर वीणा जिया जाता है। यह सम्प्रदाय में शार्ङ्ग-मौनिक रूप से महीत है।

२ - ऊर्ध्व पुच्छ चिह्न की नास्तिक के ऊपर भाग पर मोड़ देकर समस्त छाट एवं केश पर्यन्त बिखारित होता है।

एवाकार छार संप्रदाय में ऊर्ध्व पुच्छ की मज्जान का मन्दिर कहा गया है जिसकी बाईं रेखा ज्ञान का रूप दर्शाती है -

जिन् रूप, मध्य में भी वाक्यरूप स्पष्ट रहता है वह विष्णु रूप माना जाता है। अतः बीच में ठहर कराना चाहिये। मन्वान ने स्वयं की भी ऊर्ध्व पुण्ड्र की कला मन्त्रिण करके प्रथम बारण करने की आज्ञा दी है। यहाँ तक कहा गया है कि उसके बिना दृष्टपूर्वादि और सम्प्राप्ति मन्त्रादि सभी निष्कृत हो जाते हैं। किन्तु ऊर्ध्व पुण्ड्र जिसके न ही उसका शरीर समझने के समान है और उसे पहचानना भी निश्चय है। स्थिति की भी ऊर्ध्व पुण्ड्र करना चाहिये। जिसकी उच्चाई के सम्बन्ध में निम्नार्थमें वाच्य ग्रन्थों में उल्लेख है। १० अंगुल का जिसके समीपमान माना जाता है। अन्य सब मध्यम या निम्न होते जाते हैं। जिसके सभी उमरियों से किया जा सकता है। मन्त्रु ज्ञानिना सर्व ज्ञाना देती है। मन्त्र्या है वायु कर्षा है। अंगुष्ठ है शरीर पुष्ट होता है। सभी मोटा - पायिनी है। " जहाँ नहीं नारायणाय " इन आठ कार्यों की नारायणी मुद्रा का भी उल्लेख पर लिखी का विधान है। स्त्री और पुरुषों की समानता सम्बन्ध है की जिसके करने का अधिक है।

---

१ - उदाचार चार अंगुल पुच्छ २४

२ - उदाचार चार अंगुल पुच्छ २२ शरीर ८

### कंठी

कंठी कच्चा माछा के दो रूप हैं। गले में पाए जाने की कंठी  
बीर का माछा। पवित्र कछी के पीछे है ही माछाओं का काना -  
बादल कहला गया है। फासान के नाम गुणों के ऊपर छायागति  
का दोषक भण्डा की नाम होता है।

चिह्नक, माछा, मन्त्र आदि गुरु की बीर है शिष्य की  
प्रदान शिष्य को है। इन कस्तुरी के प्रदान करने से गुरु का शिष्य में  
पुण्य प्राप्त हो जाता है। यदि वह विरक्त शिष्य ही तो गुरु के -  
पश्चात् संपत्ति का अनुमति देकर ही माना जाता है। पक्षी के -  
स्थान मार्ग विरक्त निम्नार्थों की संपत्ति कीन - बाधदाद नहीं  
होती थी। उनकी वास्तविक संपत्ति अपनी या जिना वस्तु या  
प्रदान जातीबाद रूप में शिष्य के लोभ में बट जाता था। अतान्तर  
गुरु की परीक्षा रूप में शिष्य की उत्तराधिकारी वस्तु मिलती थी।  
जैसे - बाणपादुका, धनुष, चक्र-पट, अस्त्राग की बीर पवित्र पुस्तक  
आदि। शिष्य गुरुदेव की पवित्र स्मृति की अनुमति रखने के लिए उनके  
उपवीन शिष्य को करा, मुक्ती, मोक्षा, कुरी प्रगति की पुनः स्थान  
में स्थापित कर लेते थे। निम्नार्थों में महात्माओं की आर्ती निधि -  
पक्षी है ही नहीं थी बीर का भी नहीं है। सम्प्रदाय का सर्वस्व  
समकाल उनकी कृति धार संभाल रखती जाती है। जै चिह्नक -  
ममकद पान्थर बीर गले की मुहुरी कंठी से मुक्त स्वरूपों की पापना  
की जाती है वे ही उड़ाके करवा आदि है गुरुदेव के निवास का  
आन निमा जाता है।

# षष्ठ अध्याय

रूप रसिक देव का काव्य पक्ष



### अष्ट अध्याय

#### रूप रसिक देव जी का भाष्य पदा

वर्ण्य विषय -  
रूपरसिकदेव

निष्कारं ह्युक्तं यं एतौ गुरु की मान्यता रही है ।  
की रूपरसिकदेव जी के गुरु की हरिश्चातदेव थे । हरिश्चातदेव के यश  
का मान करने के लिए उन्होंने " हरिश्चात यज्ञाश्रम " की रचना की ।  
उस सम्पूर्ण ग्रन्थ में हरिश्चातदेव के यश का गान किया गया है ।  
उनके गुरु की भक्ता, विशेषता आदि का वर्णन ही इसका मुख्य वर्ण्य  
विषय है । यश रूपरसिकदेव की प्रथम रचना प्रतीत होती है । ये -  
लिखते हैं -

जाबत है विधि मुन्ना में, ज्वाब बिना हरिनाम ।  
रूप रसिक टोरे लो, लो भो नाहिं जान ॥  
मरु मरु सब की गिरी, जमन जमन ठोर ।  
रूप रसिक हरिश्चात की, मज्ज रसिक कू जोर ॥<sup>१</sup>

हरिश्चात देव का जो एक बार भी नाम जप्ता है,  
उसके ऊपर उन मन मन जोर सर्वोच्चोत्तम दीजिये -  
जो कौन हरिश्चात की, नाम जो उच्चार ।<sup>२</sup>  
सब मन मन वा ऊपरी, दीजे लक्ष्मी वार ॥

१ - हरिश्चात यज्ञाश्रम - रूप रसिकदेव पृष्ठ २-७-८

२ - " " " " " ४-३०

श्री हरिश्चातदेव ने महाभागों की रक्षा कर सुखार  
का उपदेश किया -

जो जो श्री हरिश्चात पु, रक्षित किया सुखार ।  
महाभागों की रक्षण करें, उपदेशो सुखार ॥

उन्होंने कुन्दावन कन्द की छीछा बना कर बड़ी  
पूजा की । कुन्दावन नाम ने राधाकृष्ण उपासना है । यह हरि-  
श्चात कुन्दा बिना पूर्ण नहीं हो सकती -

श्री राधा कृष्ण उपासना, श्री कुन्दावन नाम ।  
श्री हरिश्चात कुन्दा बिना, पूरण होय न काम ॥

अप रक्षितदेव का कथन है कि यह हरि हरिश्चात बिना  
जाना नहीं एक का सन्ता :-

लौठ लौट हरि वीर्य ही मैं है, लौठ लौट हरि पञ्चन मांही ।  
लौठ लौट हरि वायल की मैं है, लौठ लौट हरि है सब भांही ॥  
लौठ लू लौट लू लू लू लू, है परित्याग की डाक न डाकी ।  
अप रक्षित विचारि लौट हरिश्चात बिना हरि जाना मांही ॥

किस रूप का भेष, जीवन, मज्जित ने भी चार नहीं  
पाया है उस रूप श्री हरिश्चात श्री ने पाया है :-

---

|     |                 |                 |            |
|-----|-----------------|-----------------|------------|
| १ - | हरिश्चात महाभाग | - रूप रक्षितदेव | पृष्ठ ६-६० |
| २ - | "               | "               | " १०-६३    |
| ३ - | "               | "               | " १५       |

ज्यास जु मेव के पारि रिते दिनहु मैसु नहीं जन को दसायो ।  
 पांच बी मेव केव जियो नवानारव बी हविहारसु मांछि विषायो ॥  
 शारव माव सुरेस जी हेण मछि नवीउहु पार न पायो ।  
 बी रह सुतेम ह्ये हें सुतेम सी रह बी हरिण्यास न नायो ॥<sup>१</sup>

बी हरिण्यास के बरणा के बाधय में जाना बाधिये —

१ मन बी हरिण्यास न, रहिकन को न प्रेन ।  
 तिनके बरणाभिय बिना, बंध्यो सल्ल का मन ॥  
 २ मन बी हरिण्यास के, बाध जन पियु नाच ।  
 तिन ही रों कीये सदा, मल्ल टल्ल की नाच ॥  
 ३ मन बा संहार में, मन कोउ प्रहार ।  
 बी हरिण्यास उदार बी, मन जार बी धार ॥  
 ४ भरी बाध की धिनु, बीसी कहीं विचार ।  
 ५ मन निवरी कर सदा, बी हरिण्यास विचार ॥  
 ६ राधा माधव निज की, बाध यहे सव जन ।  
 ७ मन बी हरिण्यास पद, बीय लगे नहिमान ॥<sup>२</sup>

बी हरिण्यास परम गुरु की के मन करने की ये  
 कही हैं किन्हींने बीनों बीनों में नाकि प्रदान की है :-

नाकी हरिण्यास परम गुरु की ।

कव ई बाधियाई। निदुलन राति बन्धवि देव पुरंकर बी ।

गुरु प्रभुति भरी जिकरी बी बी बी नाकि धिनुं पर की ।

१ - हरिण्यास यज्ञागुह - हचरचित्तमि पुष्प १६-१७

२ - " " " " ३२, ३३ - २१ से २४





बी उपरिस्थित की एक अतिरिक्त रश्मि है। दिव्य  
महाबाणी के प्रगट करने के लिए ही उनका अकार हुआ था। अतः  
ये भी प्रिया - प्रियतम की दिव्य सहचरी। साक्षात् उपरिस्थित रूप से  
मुख पर प्रगट हुए हैं। बी उपरिस्थित की को साक्षात् स्वरूप माना  
है और स्वामी स्वामी की परम प्रिया भी ऐसी ही की के परिणत की  
सहचरी माना है। बी कृष्ण उत्सव मणिमाल का प्रारम्भ इस प्रकार  
होता है —

प्रकाश पुनिरि की गुरुचरण, करन सकल अब काठ ।  
तामु कृपा-कल कल की, कुरुत्सव मणिमाल ॥  
करि वारम्भ कान्त है, अम्बिका आरति तातें ।  
रूप रश्मि का नाम को, यो अब सत्य कहातें ॥

अनुप्रास मुक्त, काव्य गुणों से संयुक्त, मधुर एवं समुदाय  
भाषा में नम किशोरी के रूप का वर्णन देखिये —

चरण सख्य करीब रीत्य पक्षरी नम रंग ररी ।  
बाज यो की ली लीकी, मैन कर मानसि गरी ॥  
पाऊँ रस डाऊँ गति मंद मंद सुपाऊँ ।  
कून कून सुपाऊँ क्षमि डाऊँ रति राऊँ ।  
नीर नीरी मुर पीरी नद किरी गायत्री ।  
कीकि कट कीर माना रंग हर उपजायत्री ॥  
लिक लिक सुसुंरि कर क लकि लका लकायत्री ।  
कंस की रति लल कं कं कुलि कुलि ललायत्री ॥

---

१ - बी कृष्ण उत्सव मणिमाल - रूप रश्मि मन्त्र पुस्तक १-१-२

कल्लांवही र मल्लांवही सुल पावेंही सब कुल म्लु ।  
 मेन मानों मोन के हें भाऊ कीरति की कियो ॥  
 फलहि यह जुगमान लाव सम्भारि कुंभारि मल्लांवही ।  
 निरति निरति कुंभारि सोभा सुखद उर उल्लांवही ॥<sup>१</sup>

जुलु उत्तम पाणिनाथ का जंघिय दोहा निम्न प्रकार

है ---

की रघुवर कंठावही पंकु सुने किछाव ।  
 रूपरसिक जिकरे सदा, सुल संपाति सरसाव ॥<sup>२</sup>

की डीठा विशंति का प्रथम दोहा निम्न प्रकार है ---

प्रथम पुनिरि हरिभास बू - सल्ल ली के पीय ।  
 तिन पव - कल्लांवही का रवी, डीठा विशंति नाम ॥<sup>३</sup>

उसके बाद चौपाई में रूपरसिकीय लिखी है ---

पांच मैवरी पांच किछाव ।  
 मायुरी पांच पांच सुल माव ॥  
 या प्रकार विशंति सदाव ।  
 निम्न निम्न पुनि कहुं सुनाव ॥<sup>४</sup>

१ - की जुलु उत्तम पाणिनाथ - रूपरसिकीय पुच्छ १०२ पद २२०

२ - " " " " " पुच्छ १००

३ - डीठा विशंति - रूपरसिकीय पुच्छ दोहा

४ - " " " " " पुच्छ २ चौपाई २

इस प्रकार हमें नम शिवा मेवरी, रस मेवरी, रसिक-  
मेवरी, रंग मेवरी, प्रेम मेवरी, पांच मेवरी, नम विद्या, नाकना -  
विद्या, नित्य विद्या, रति विद्या, फूट विद्या, पांच विद्या,  
नाम माधुरी, माधुर्य माधुरी, मुन्दावन माधुरी, सिद्धान्त माधुरी,  
हरिमति माधुरी, पांच माधुरी और चार सुख, श्रेष्ठ सुख, स्वरूप सुख,  
सुखाग सुख, खीरी सुख, पांच सुख, बीस छीछाओं का वर्णन होने के -  
कारण इसका नाम छीछा विहंगि है । मेवरीयों में रसिकरंग और प्रेम  
का वर्णन है, विद्याओं में नित्य रति वर्णन है, माधुरीयों में माधुर्य  
नामावलि वर्णन है । पांचों सुखों में चार, श्रेष्ठ स्वरूप वर्णन है ।  
यैल्लो —

नम शिवा रस मेवरी जनी ।

रसिक रंग वरु प्रेम कानों ॥

मेवरी में पांचो जून सुनिसे ।

पंच विद्या वना पुनि सुनिसे ॥

नम नाकना नित्य रति कल्लो ।

फूट विद्या पांच नो छल्लो ॥

नम माधुरी जय सनुकाई ।

नामावलि माधुर्य सुहाई ॥

मुन्दावन सिद्धान्त भक्ति हरि ।

र माधुरी पांच हिय में भरि ॥

पुनि सुख पांच सुख क भाना ।

चार श्रेष्ठ स्वरूप सुखागा ॥

होरी सुख पंचम परिभांती ।

हीठा विंतीवि हहिं विवि जानी ॥

सुने मुने समुन्ही वरा नाथे ।

हो निव मळटळ सुख पाथे ॥<sup>१</sup>

उनका अर्थ यह है कि कुन्दावन के सुख को प्राप्त करने के लिए भी हरिव्यास की भक्ता चाहिए —

१ मूल भी हरिव्यास नाथ, भक्त मंडी सब सीधे ।

कुन्दावन सुख छवन की, जोर उपाय न कीधे ॥<sup>२</sup>

प्रथम पांचवीं मंजरी परा प्रेम की राशि है ।

हरि नाथ का मान सब जनों में शिरमौर है । इसके समान कौन और नहीं है । -

ही नारय हरि नाथ है, सब जनों में शिरमौर ।

भक्ती जनि की मज्जर या सम नहीं कीउ और ॥<sup>३</sup>

भिन्न भिन्न वस्त्रों का उदाहरण वास्तविक भावुरी में स्वरचित्तवैय ने इस प्रकार दिया है ---

रस पीधे भित्ति छेव्य ही, केवळ भावहिं धारि ।

भिन्न नहीं वरु भिन्न है, ही विष्टां विचारि ॥

१ - हीठा विंतीवि - स्वरचित्तवैय पुष्प २३ । ३-४-५

२ - " " " " पुष्प ४ - १

३ - " " " " " ४५-४



जो किंता बारि की, बरसो बारि की नांदि ।  
 बांछिन में ज्यों प्यारी, र क्यु आरि नांदि ॥  
 एकैक बरस निम्न है, ज्यों नु जुसना पुन ।  
 देवा तिस न्यारेह है, है एक की स्वल्प ॥

नित्य विचार पदावली में नित्य विचार के पद  
 हैं । हमें जो विचार वर्णन है उसके वर्णन से कुछ अपरिचितों को  
 भी सुख मिलता है :-

बिछ भिछि थिछि हों हूं सुख कीकी ।  
 जति ही उदारि आरि हरिनी न कीकी ॥टेम॥  
 कोक बनाठ काठ के न बारि कीकी ।  
 कंन की भेति ज्यों उठेति कपटीकी ॥  
 बरस रसनाय ही है सब भिनि कीकी ।  
 हम रहिक मठा मयमान कीकी ॥

मल की राधिका की भति है । वह उन्ही सुख दूर  
 करने की प्राप्ति करता हुआ अपना वाचना करता है क्या क्या कल  
 करने की प्राप्ति करता है —

आरि नु कम ही नांदि बेरी ।  
 नु किना नाले दुषा हरिने नु ही  
 बेरी जम - जम की बेरी ॥टेक॥  
 ग्राम्य श्रुत न-न बलि नांदि र नु ।  
 उल्लि न तनक ही सुख की बेरी ॥

- 
- १ - लीला विहंगि - अपरिचित पृष्ठ ३८-३९-४०-४१  
 २ - नित्यविचार पदावली - अपरिचित पृष्ठ ७६ पद ३६

दीन दीन पर क्या ज़ुलम की ।  
 न तुम फिर कभी दरानि निहिं करी ॥  
 कहिं जख्मर का परदारि हीं की ।  
 न कहां दरानि गीति निहिं के नु देरी ॥  
 मन्दागर में बहिय फिरव हीं ।  
 न मलामीद दुरमति की धरि ॥  
 कुरारि परि अनुभा कीधर ।  
 न बीजे का मोनी दस्त कीरि ॥  
 रूप रसिक का पानि बाझी ।  
 न राखी बरन कमल हीं नरि ॥

स्वामी स्वाम देवाति नित्य रति रस में जो लो  
 है कसिरि उन्हीं ग्रीष्म न जलु नी दिव्य जलु हीं लगती है । उनका पिछाव  
 बर्णन देखिये ---

देखि ही देखि सखन सखी ही  
 ग्रीष्मन रितु रितु रितु हीं छायाति ।  
 प्रेम कुहार परव रहे निरादिन  
 देवाति बलि रति रस में बानाति ॥८७॥  
 बाहिन नदन का हाँसनि  
 रदन कदन हाँस लौकलोकनि ।  
 निरख बाप निरखन के वन की  
 सदा रस्य दस्त निर लौकनि ॥  
 नित्य काँव कात मुँदादन,  
 निर का का के पुरन कागहिं ।

---

१ - नित्य निहार फावली - कपरविन्दन पुस्तक ८३-पृष्ठ ७०

रूप रक्षित बचिगारि। ॐ ।

निरति निरंतर स्वांता स्वांनति ॥

जब प्रसार रूप रक्षितकेन भी स्वांता स्वांन के  
विकार को देखकर बांनदित होवे और नित्य विकार में रहती  
रही हैं ।

48 49

सब तीक्ष्ण देव के लक्ष्य में दोहों, और सोपाइयों की ओर पदों में  
 यथाया यथाय वे सम्बन्धित सुन्दर निम्न उपस्थित होते हैं। पदोंमें ज्ञान विज्ञान  
 है तथा विस्तृत होने के कारण भाव कौशल के लिये उत्तर मिल सके है।  
 हरिनाथ ज्ञान में ऐसे कालों का ज्ञान है। कदाचित् नैपुण्य में उक्तों  
 के धर्म के लक्ष्य में के लक्ष्योत्तर का ज्ञान है। निम्न विचार  
 यथायथा जाधार में छोटी परन्तु, सुन्दर भावों के भरपूर है। ज्ञानः सत्य सारी  
 की सारी का सौन्दर्य पोखी -

महोदय प्रियतम ज्ञान प्रकाश

ਧਾਰੀ ਧਾਰ ਕੇਲੇ ਕਾਫ਼ਲ, ਬੋਲੇ ਫਿਰੇ ਕੀਏ ਟਾਰੇ । ਟੇਕ:

मेरा जन्मने विभिन्न परिवारों का गुन मान सुनारे।

‘संजाना सत्तर महापुरुष पालने अर्चने ध्यान उतारे ।।’

बार बार जन्माल के पद फिर फिर वहीं दुखारे ।

प्यारी लव अम्बिकाए लिये हरि निमत केलि प्रसिद्धे । २।

हृषिकेश की जगह वायुमण्डल में नहीं है।

मानो-पूजा अर्थात् सा सुखी जन्मा के न जारे । ३।

शोभा और लोभ कवि वरुण पित न जात पिया रे।

ਸ੍ਰੀ ਹੀਰਾਭਾਈ ਜੀਵਨ ਪ੍ਰਸੰਨਾ ਕਾਵਿ ਪਿੰਡੇ ਪਾਠ ਕੀਰਤੀ ਤੇ ਭਾਵੇਂ । 41

संघर्ष राज्य और राज्य दोनों का ही और उद्देश्य था हुआ होता

दो-गो बर के शिव में भर जाये है:-

ਅਨਾ ਅਨਾ ਆਪ ਆਪ ਹੀ ਹੋਈ ਆਪ .

माय पाप पाँते पिटावा स्वाहा हो ।

कृष्ण जी जिसे आप जानते हैं ।

नाम नहीं करने जो हा पर छिड़ कर रहे 121

**एतत् सर्वं त्वं ज्ञातुं चेच्छीः तर्हि एतन्नुपायः ।**

पञ्चमः अथ पञ्चमः पञ्चमः पञ्चमः पञ्चमः पञ्चमः ।

सर्वोच्च न्यायालय के जज

श्री ८ पट्टीत का पकौ नमो भ्या ॥३॥

१- निम्न विचार पदावली का ससिद्ध देव सूत्र ३०-३१ पर १ ।



हम रक्त देव की का कला है कि है राजा हम जिकारी मे लेने  
केरिने मेरी नही जिकु यह मन मोहन का मन है -

उपर कला से मोम का मोम जुरागेरी उप  
उपर कला मोम उप पायामोपीन मन है।  
उपर कला कीर कला मेम कीर तर  
उपर कला मोम की का मन है। ॥२०॥  
मेरे कला मे निहारी का कला है।

का कला कीर का कला मन है। ॥२१॥

हम जिकारी कला, पारी कला केरि मे ,

मेरी नही मोम का मोम की का है। ॥२२॥

इयाम कला की भक्ति निहारी कला । राकिज का देव पाकिज  
कला मे। का कला मन कला मन है -

पदम प्रदीपन निहारी जिकारी का

केरिने निहारी का कला मेम का कला ।

कला कला कीर निहारी कला मे ,

कला कला मेम का कला मे भक्ति । ॥२३॥

मेम का कला का कला मेम है पु मन कीर ,

का कला कीर का कला मेम का कला ।

रक्ति कला कीर का कला मेम मन ।

का कला देव कला कला । ॥२४॥

का कला निहारी मे कला कला मेम का कला मेम का कला मेम  
का कला का कला कला कला -

का कला कीर का कला मेम का कला मेम का कला मेम

का कला का कला कीर का कला मेम का कला मेम ॥

का कला का कला कीर का कला मेम का कला मेम ।

का कला का कला कीर का कला मेम का कला मेम का कला मेम ।

का कला का कला कीर का कला मेम का कला मेम का कला मेम ।

का कला का कला कीर का कला मेम का कला मेम का कला मेम ॥२५॥

रस

निम्बार्क सम्प्रदाय के लोक जिक्रों में राधाकृष्ण की वास्तव्य छीटा का प्रतिभास निम्बा है और राधा के स्वकीया भाव पर विशेषता बत किया है । राधिकाचन्द्र मयदान की रस-स्वरूप है । श्री राधाकृष्ण उर्ध्व कृष्ण की बाह्यादिनी लीला है । श्रीकृष्ण की नाति श्री कृष्णमानु कुलार्ति का प्रोत्पन्न उर्ध्व वन्द्यार्ति बादि का वर्णन है । सुमतिशौर श्री राधाकृष्ण की पुत्रा - उपासना और उनका ही ज्ञान करने का विधान मय-पुराण के पाञ्चाङ्ग ब्रम्ह ब्रम्हाय ८२ के लीक ३५ से ५० तक पन्द्रह लीकों में लिखा है । कृष्णायन में गोपी, ज्ञान्य और उनके सम्निष्टवर्ती राधा की सत्तियां पूज्य है । उन सत्तियों में श्री राधा की परम पूजनीया है । सत्तियों की हेन्दु रूपा श्री राधा की हैं और सबकी प्राणनाथ बल्लभ श्री राधा-कृष्ण हैं । श्री निम्बार्क सम्प्रदाय में रसोपासना की प्रधानता है । इस पद्धति वाले साधक को लप्ते श्री श्रीकृष्ण प्रिया श्री राधा की सती मानकर दिव्य रास श्री सुमतिशौर की सेवा करना लीष्ट है । यह भाव सत्तियों की कर्तव्य कर्म जलता है । श्री राधाकृष्ण की छीटा और चरित्रों का ज्ञानिर्धन पुराण में पञ्चाङ्ग विवरण लिखा है । श्री नारायणकृष्ण उर्ध्व का ज्ञान है कि " निम्बार्क - सम्प्रदाय में निरुद्धवहारी राधाकृष्ण का सम्पूर्ण विस्तृत ज्ञान सम्पूर्ण स्वकीया भाव का है । निम्बार्कयि एक ज्योति है ही छीटावर्ती राधा भावक रूप में देखते हैं । लीक वेद की व्याख्या के भी करने अनुभावी हैं कि उपासना की भाव पुष्टि बादि के भाव पर श्री परकीया भाव

को कोई स्थान नहीं दिया जाता<sup>१</sup>। स्पष्ट है कि निम्नार्ध  
चन्द्रमास में स्वीकीया नाव की ही प्रशानता दी गयी है। इस  
प्रकार निम्नार्ध चन्द्रमास में ही राधाकृष्ण के स्नेहि, नित्य -  
विहार औरकीर्ती उत्सवों का विस्तृत वर्णन है श्री राधाकृष्ण के  
दायित्व जीवन, स्नेहि, नित्य विहार और उत्सवों के वर्णन  
के कारण भूगार एवं के संयोग का ही विस्तृत वर्णन है। यह  
जहाँ ही नातिक्रम्यी भावना है वैसा है। राधाकृष्ण के हीन-वर्ग  
वर्णन के वर्णन में यह किरीट ही जाता है। यदि कोई कुरा  
एवं प्रसन्न है तो वह नातिक्रम्यी है। वास्तव में संयोग भूगार की  
ही प्रशानता है।

संयोग भूगार की प्रशानता होने के रवि  
स्थादी भाव है। कृष्ण राधिका आकम्पन है। सती, पुत्री,  
स, उपस, कन्ध सांकी, पुष्प नदी वट वदि सदीपन विभाव  
है। स्वाधिकीय हीका विर्गति में लिखी है —

कीक का कुं में कुं, नागर निपट प्रीति ।  
प्रिय कुं वास्तव्यन कस, रवि एवं वाक्य हीन ॥

स्थाना और स्थान दोनों का रंग भीना वर्णन  
एवं प्रकार है —

---

१ - निम्नार्ध चन्द्रमास और उसके कृष्ण यह दिन्दी नाव -

का० नारायणकल झाँ पृष्ठ १३२

२ - हीका विर्गति - स्वाधिकीय पृष्ठ १२-८१

स्वामी स्वाम दीत रंग नीले ।

ठाठे कुंज जवन की बहियां नर वर बहियां दीनें ॥ टेक ॥

बह की क मूठ मूठ जोकि बाठ बांन निधि नाथे ।

कुन्दाक फूट्यो फूट फलियो धारंग राग सुधाधि ॥

वरुं पंथी पुन नीर भेति निर धन्य की सुनि धाडी ।

कुल निगोर नीर हवि ऊपर ह्य रचित बलि बांकी ॥

स्वामी स्वाम सहेलियों के साथ मनुष्य का है मूठ

रहे हैं —

मध्य दुपहरी मेंक निधि निधि

कूटव ह्य मनुष्य का बांकी ।

स्वामी स्वाम सहेलिय संगति

बलि ह्य रचित भेति बांकी ।

द्वि क्य निरव में ह्य राधे

ह्य पुनकी निधि की बलि बांकी ।

प्यारी परकी बहुर निध संगति

नित्यव बांकिन भेद बांकी ॥

धेन की धेन दीक का

क्य निधि का बांकिन पुनकी ।

ह्य रचित उला उला हवि

बलि ह्य निधिनी विर बांकी ॥

---

१ - नित्य विहार पदावली - उपरतिस्वीय पुस्तक ६२ पृष्ठ २३

२ - नित्य विहार पदावली - " पुस्तक ६२-२४



उज्जैन से प्राप्त श्री लीला विंशति के अन्तर्गत श्री वृन्दावन माधुरी के अन्तिम दोहे :—

कलविपरीति रूपरसिकतिनकेंदियेंवदैयुगलपदशीति॥८॥पंहरासैरुस  
तासिपामासोनमआसोज।यहप्रबंधपूरनभयोशुकलासुवदिनयोजा  
रतिहंदावनमाधुरीरसिकनजीवनप्राने।पूरणतापाईपहैदोइअसीदो  
होना॥३॥१॥दोहाअवसिदांतजुमाधुरीकरोंलिखनमुखेदाई।प्रीर

[ ८ ]

### भाषा

उपरिष्ठदेव की हरिभ्यास देव के शिष्य एवं स्वामी  
स्वामि के उपासक थे । कुछा मछि सम्पत्ती समस्त रचनायें प्रायः ब्रह्म  
भाषा में ही हैं । रूप रश्मिदेव ने भी ब्रह्मभाषा में ही कभी ब्रह्मों  
 की रचना की है । उनकी ब्रह्मभाषा परिनिष्ठित और उल्लेखीटि की  
 संस्कृत भाषा से दार्शनिक रसने वाली है । ब्रह्मदेव मणिमास के  
 छोटीछोटी प्रकरण में लय स्वादा स्वादि की शक्ति निहारने की कला  
 है - जीवन्त भुवि मधुर, मार्जुन मुखा संयुक्त भाषा के अनुप्रासका रूप  
 यही ही कवि हैं ---

भाव शक्ति में निहारो की ।

मूढनि कीड कल कलनि है जग पारी री ॥  
 शीला सुन्दर कल्प मीठर, कल कल्प निहारि ।  
 उल्लिख भागुरी मछि कछि भुवि देवि वीरि म्यारि ॥  
 मुरगनि मुरनि मीरन मुरगनि, कौडी सुन सुहार ।  
 पारन पूजा पट्टी बट्टी, पर पुछि की सुहार ॥  
 मूनि मूनि ककलनि दिनि ककलनि, रसनि रस सरसाव ।  
 कटाकि कटाकि कट क बटाकि बटाकि बट बटाकि उटाकि उटाकि ॥  
 उमां जं क जं रं रं रं कल कल के ।  
 कल कल कल कल कल कल कल कल कल रं रं ॥  
 कल कल मैं कल कल कल कल कल कल कल ।  
 कल कल निविन न कल, पानि नुरे कल री ॥

विन्द केति कथेति रेति एव कोति कोति दीप्त तात ।

परम पीय पाने क्षुराने, वरु पारु केनात ॥<sup>१</sup>

फूँटों के नुमान कान पलने, फूँटों की माता  
पलने फूँट डीठ पर खाना खान की पुत्रोक्ति धी रहे हैं देखी ---

फूँटे फूँटे राका है, फूँटन की डीठ पर,  
फूँटे फूँटे फूँट की माता उर पावें ।

फूँटन के नुमान कान फूँटे फूँटन के,  
फूँटे फूँटे फूँटन की बटे धनि वरें ॥

फूँटों प्यारी की बात फूँट के करव बात ।  
फूँटे पिय रिमि की धिरे को रंग गहरें ॥

फूँटे फूँटे वेति स्म-रति प्रवीन दीप्त ।  
फूँटे मेन पीन पर माधुरी के गहरें ॥<sup>२</sup>

एव कीड़ी की उमरा जीहें नहीं कर उमरा ---

करी किन कोटि यथन की कीहें ।  
या कीड़ी के पट्टार की कीठ के न व हुयी न कीहें ॥  
एक रंग एक कला प्रान काँ, कल मात्र वन कीहें ।  
जानेंत के-वनकी वति वति यह रूप रति का कीहें ॥<sup>३</sup>

सरत, सरत, कीकत उन्दाकी मुँह धुँधि नकुर माया  
का उदाहरण देखी ---

---

|               |        |             |                |
|---------------|--------|-------------|----------------|
| १ - कुसुमसुतन | मणिमात | - स्मरति के | पृष्ठ ३१ पद ६  |
| २ - "         | "      | "           | पृष्ठ ३१ पद ७४ |
| ३ - "         | "      | "           | पृष्ठ ३८ पद ६४ |





पाँवनि पाँवनि बरनि पुखावाँ, पाँवनि नुत्तु करंति ।  
 पाँवनि घुराँहि निम्तावाँनि निम्ताहिं, रिक्तावाँनि बस उबराँहि ॥

स्मरतिव देव का कर्म है कि उनके पिता जी ने उनका नाम रतिवत्तु रखा है और वे यह विनवत करती हैं कि - हे प्रभु प्रेम दो । वृक्ष मणिमात के परिशिष्ट का एक कविच देखिये —

भरी नाम भरी पिता बरयो है रतिवत्तु,  
 लोह सत्य करि के लोह सभे जाव जावो है ।  
 बरत दितावो लोह भरी मोहि लोहो लोहो,  
 लोह का लोहो लोह लोहो लोहो लोहो है ।  
 लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह,  
 लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह है ।  
 लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह,  
 लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह है ॥

लोक स्थानों पर उनकी भाषा बस है । लोक  
 राम रामियों का प्रयोग उनकी भाषा में हुआ है । इसलिए उनकी  
 भाषा में स्थापनात्मक रूप है वेयता लोहो है । वृक्ष उत्पन्न मणिमात  
 के परिशिष्ट के पाठों में वे लिखी हैं —

लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह,  
 लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह लोह है ।

१ - वृक्ष उत्पन्न - मणिमात - स्मरतिवत्तु पृष्ठ १२४ पद २४४

२ - " " " " परिशिष्ट पृष्ठ १२४ कविच ३

नाथ जीरि किं मुत्त जीरि रकी, ज्यो कलीरिहि भेद मुखावति है ।  
 बहि रूप निहारित बारत प्रांन प्रत्यंगन भीद समावति है ॥

गीर्वाण बारतोत्पथ में वन्द्य के जीव करने पर  
 ज्ञान जाकाष्ठ में भेष धार जाते हैं जो ज्ञान व्यंजना से भर्षी की मज्जा  
 तथा मयंकता का एक चित्र बनाने जानी जा जाता है । भक्ति ---

अनन्य एव ही अन्त सब भेष पाये ।

वराति वराति वराति वराति, वराति वराति वराति जाये ॥  
 वाक्य वाक्य वरु वणिन क वनवर्ध वस्तु प्रकट प्रव पर प्याये ।  
 वीर कर वीर कर वीर कर वीर कर वीरकर वीर कर कराये ॥  
 उठका पाव जावाप वापाव का कर कैवलय का दूटि दायी ।  
 डोरि कौरि डोरि ताकुरि डोरि ताकुरि वरु तकाये ॥  
 भक्ति में भीत है पाणि प्रव का वने जाय गोपाठ की वन पुनाये ।  
 वरी विनि कही ज्ञान रूप रहित सु प्रभु, उपाधिराव बनकी कथाये ॥

दूर में भेष वर्णन लोक प्रचार से किया है और  
 भर्षी की विविध तुलनायें की हैं । परन्तु रूप रहितत्व का भी भेष  
 वर्णन वर्णनीय है और भेष वर्णन की सुन्दर वर्णन में उनकी भाषणा  
 का भी योगदान है ---

तेजा है नीके हैं र कंका है नीके हैं

कुरंगन है नीके हैं र मैं जाति नीके हैं ।

हैं न सुख ही के हैं र भेष सब ही के हैं,

र और पिय ही के हैं वरन हरि ही के हैं ॥टेका॥

१ - मुकुट उत्पथ - नागनाथ - उपरिख्येय परिशिष्ट पृ० १४

२ - " " " " पृष्ठ १४२ पद २०४

वीन राखी के डी ३३ रजनी के रूप

रखिक रही के प्राँन जीवनि र की के हैं ।

टोना र कही के हैं निर्मोना मोहनी के हैं

किठोना राखि -पी के हैं कि दोना के की के हैं ।

वी चार स्थानों पर जग्या कहीं कहीं पेवरी फल  
विशाल देता है जहाँ पर पेवरी माया के कुररण पर माया का  
प्रवीण कुवा है । वी राया कमीत्सव का वर्णन देती ---

सादा दिल्ल भित्ता के कीवा जाव ।

जणी के लोटे र मरीच निवाव ।

पूरिया किन्न कमाइया नन्दराव कुमान्ना ।

जुके राया उपनिषदां कीर लुके उपनां कनां ॥

वीमण के कल सल्ले उज्या मुक्त लोटे मनां ।

जारी कुं कलती वी मल्ला माणियां कुं मुं जनां ॥

सालू २५-रखिक वी रंजी मनी लाम कडांवा ।

वी राधियां जूनी मेलना वी निधिर कडां पांवा ॥

पेवरी के लाम लू के फुट का उदाहरण देती है ---

१ - नित्य विचार पदावली - स्परसिन्धु पृष्ठ ७७-७८ - ४७

२ - मुकुटस्थव - माणिक्य - स्परसिन्धु पृष्ठ ८२- १६४

बरबुरवार रही घेंडी कर बंदी याँ है ।  
 बेरा फिकर वक्त की बुद्धियाँ ज्ञान कलम पिछेंदी यानि ॥  
 व्याँन जुल की जीकी पछी जुब की जुब हाँवाँन्याँ है ।  
 कब रहिक गरीब- बरबर है बंदी पहाँ परं दीया है ॥<sup>१</sup>

यह पुनार हम अब समी है कि उनकी भाषा पित्रात्मक  
 है ।

बुद्धूत्त्व मजिमाड में हरबीत्त्व के बर्णन में सुन्दर  
 बर्णन है साथ कब सुन्दर कब भयंकरा एवं कभीक नाया का  
 प्रयोग बलीय है :-

मुब करजनि वरजनि कंयुकि कम कुरि नु रहे कुरि कं ॥  
 कुंछ कडक डल- वीसनि की, नरक मात जनि हैव ।  
 फलक ठलक नन कलक, कलक मुड, कलक संगीत लोत ॥  
 का कटजनि पट कटजनि बटजनि नृमान का बटजनि ।  
 कटजनि धार मुल की कटजनि, जे जे कटजनि ।  
 कं कंजनि नील की कजनि नु कजनि जनि कन कूठ ॥  
 रखन कान कन पिच्छि नु बकल, किरनि किरन है कूठ ॥<sup>२</sup>

---

१ - बुद्धूत्त्व मजिमाड - हपरिचर्येन पृष्ठ ६२-१०६

२ - " " " " पृष्ठ १२४-१५४



स्वरसिद्धि के नायक थे। उनके काव्य में जीक राग रागिनिर्घोष का प्रयोग हुआ है। राग-रागिनिर्घोष के प्रयोग के कारण उनका काव्य संगीत मधुर एवं सरल है। उनके काव्य की लयावली बड़ी संयत एवं परिष्कृत है। जीक रागिनिर्घोष के प्रयोग से उनका काव्य और मधुर बन गया है।

हरिध्यास यज्ञापुर में रामकान्ध, राग कल्या, राग-विष्णुवत्, राग केव मंदार, राग का नीराधार, रागमन्य, राग-ब्रह्मवर्मा, राग म्दार, राग मेरु, राग धीरु एवं राग मङ्गोरी, आदि राग जाये हैं।

बृहद उत्तर मणिमात में भी जीक राग जाये हैं। इन्हीं राग कल्या, रागजफरी, राग विष्णुवत्, रागकान्धी, राग-काया, राग कावरी, राग धारं, राग धेनी विह, राग काकवत्, राग नीती, राग जन्तो, राग परव, राग काया विन्धु, राग काया-वरी, राग नीती, राग कल्लि, राग नीव को, रागपञ्च, राग जन्वी, रागपिराक, राग विष्णुवत्, राग कंठा, राग काच्छी, राग बरावी, रागिराव, राग कटवारी, राग विष्णुवत्, राग विष्णुवत्, राग कल्याण, राग धेनीवी, राग विष्णुवत्, राग धारं, रागनीरठराग, काकि-वरी, रागमान, रौक सं, रागनीरठ, रागकाजिरी, राग पाव, राग परव, राग कायावरी, रागनीरठ, राग धारं आदि राग जाये हैं।

हीठाविर्धोष और नित्य विहार यज्ञापुर के पद्यों की भी जीक राग-रागिनिर्घोष के आधार पर रचना हुई है। इन्हीं राग भरम राग केव मंदार, राग रागिनिर्घोष, राग कावरी, रागकान्धी, राग धारं, राग नीती, रागकान्धान, राग कंठानी, राग वेदारी, एवं राग मङ्गोरी आदि राग जाये हैं। इसे स्पष्ट है कि उन्हें राग-रागिनिर्घोष का कदा ज्ञान था। उन्होंने भाषा की उनके अनुसार संवीया है।

### छन्द- विधान

स्य सत्तक ने अपने ग्रन्थों का प्रथम प्रायः दोह, चौपाई, और पदों में किया है। प्रत्येक ग्रन्थ पदों में लिखा है ।

छंदर व्यास काव्य में पद दोहा, चौपाई, के अतिरिक्त मोरठा, जगज और लक्ष्मी का भी प्रयोग हुआ है और छंदर व्यास काव्य में इनको के सन्ध्या में लिखते हैं -

श्री छंदर व्यास छंदप्रिया स्य लिखी कृपा भाव ।

श्री छंदर व्यास देव का अमृत सागर लिखी भाव ॥

सामे काव्य छन्द नामा विविध तो जगदी कृपा ।

कृपा रत्न दाई यह काई स्य सत्तक का भाव ॥ ॥॥

कृपा उत्तम भविष्य की रचना भी प्रायः पदों में की है। तीना चिह्नित की रचना भी दोहे तथा चौपाई में की है। तीना चिह्नित का प्रथम दोहा इस प्रकार है -

प्रथम छंदर छंदर व्यास पु, सज्जन की के धाम ।

सिख पद कर्मणि का रचो, तीना चिह्नित नाम ॥ ॥२॥

चौपाई का उदाहरणदेखिये -

पाँच गैली पान, लिखाव। जगदी पान पान पु भाव ॥

या प्रकार चिह्नित कृपा । भिन्न भिन्न छंद पद कृपा । ॥३॥

नित्य चिह्नित पदावली की रचना पदों में हुई है। ये पद गैय है और राग रागिनी यह है, देव्य भाव से बोल प्रीत निम्न पद देखिये -

जगदी पु कृपा की नीति मेरी ।

कृपा छंद कीर्ये दूध कीर्ये पु छंद ।

तेरी काम काम की मेरी अष्टक ॥

१- छंदर व्यास काव्य - स्य सत्तक देव कृपा ।-१

२- तीना चिह्नित - स्य सत्तक देव कृपा । दोहा ।

३- \* \* \* \* \* कृपा २-२

भ्रमिन्ना जगत्तं यत्तं नाना वीर्यं जातिं पदं,  
 जित्वा न तत्र दोषं न तत्र दोषं [1]  
 दानं दानं च दया दया की,  
 पुण्यं पुण्यं कर्मात्तरीनं जित्वा [2]  
 जित्वा जित्वा जित्वा पदं पदं [3]  
 पुण्यं जित्वा जित्वा जित्वा [4]  
 भ्रमिन्ना जगत्तं यत्तं नाना वीर्यं जातिं पदं,  
 जित्वा न तत्र दोषं न तत्र दोषं [5]  
 दानं दानं च दया दया की,  
 पुण्यं पुण्यं कर्मात्तरीनं जित्वा [6]

नित्य विशद पराकाशी में अनुभास एक सुन्दर एक वीर्य होखे ।  
जिसे उनकी सुन्दर हृदय योजना एवं ज्ञान का एक प्रकाश होता है :-

जोड़ नम केरनी करीब कुतियों का ,  
 केवर कीर केर केरि कुल में ।  
 नील निरी नली नाकरी पेशी बंध में,  
 पूरी में कुनय बाप कुनो के जल में । ऐक  
 की की माधुरी के भोसल में भूमि भूमि ,  
 छूमि छूमि सदा सुखान के मन में ।  
 जरा नो का मोहन को का नवा,  
 तिक्रि भीरी रोरे लाल लाल में ।

1- विद्यया विहार पदावली रूप संस्करण देव प्रकाश 83 पृष्ठ 70

2- \* \* \* १५४ १७ ज २४

### जंभार बीजा

स्वरसिद्धि के लक्ष्य में जंभारों की मारना है । जीव स्थानों पर बहुत से जंभार स्वाभाविक रूप से ही प्रकट होते हैं । कुप्रास, रूप, उत्प्रेक्षा आदि जंभार की बहुत प्रकट होती हैं । कुप्रास जंभार के अविषय उदाहरण दृष्टव्य हैं —

विष्णु को नामर नक्त, निरावि निरावि निम मेन ।  
बुद्धि मदन मद म्बं, नहिं बीनत दिन रेन ॥

इसमें पुनरावि प्रकाश की जाया है । मंजु मनि किछ-  
किछाही कुं पुन की बीनत करी है —

मंजु मनि कछमछांवि छछि मॉवि नरम पांवि ।  
विम विरांवि कछि कांवि कैठि कछा कं ॥

मुक्त रूप पर सीधे कुं बीनोच्चरत समर में वक्त है —  
विन विन प्रवि प्रवि प्रविष्टि प्रविष्टि प्रेम विष्णुविं पावि पावि ।  
रूप रचित रह वरणत वरणत कुराणी कुरावि रावि ॥

छोनी का बीननी मंजु मनि की पाछा की पुन में  
वारण वि वि है —

छोनी छोनी का बीननी मंजु मनि की पाछ ।  
करी वि म्बारी प्राम है वर कछि वा ॥

---

१ - बी बीन विष्टि - स्वरसिद्धि पुस्तक १४-५

२ - " " " " ५५-१९

३ - " " " " ६२ - पद १३

४ - " " " " ६६ - २४



राधिका के सुगन्धित तन और रूप के ऊपर का -  
मोहन का मन मेंहरा रहा है । उनकी वाक्यांश और उवाचों का सुंदर  
वर्णन देखिये ---

कोकनद केवली कंचन कुराबंद कुंद,  
केसर कलीर धेरि केसरि सुमन मे ।  
मोहधरि माछी माछी मीछी मंचल मे,  
जुही मे सुपाय जाय सुखी से छल मे ।  
कं कं माधुरी के कौरन मे कूनि कूनि,  
सुनि सुनि सरस सुगन्ध के मन मे ।  
रहें मेहरानों मन मोहन की मन मवा,  
रसिक मधोरी धी रूप का का मे ।<sup>१</sup>

कनक स्वाम की जी मी कंजित किया उस लगी मे  
राधे का रकार कावा है ---  
मोर मंडिता मे विमरा मे मारु मोहर मे,  
के हरि की लीरि मे लरीहं तस्किहं ली ।  
केसर करन मे करी मे कुटु मंडिता मे,  
मुल्ली मे निठि ली मुर सुपा ली ॥टेका॥  
पीठांबर मे प्रीति करि ररि मुर मे  
जति ही मनु रसिक की ली ।  
कीर कीर कंजित कीनीं कुन स्वामि लामे  
राधे लू के नाम की रकार सब मे ली ॥<sup>२</sup>

---

१ - छीटा पिटोडि - रूपरसिकेय पुष्प ७७-५४

२ - नित्य विहार पदावली - रूपरसिकेय पुष्प ७६-८० पद ६१

देखी चीनी रंगमल्ल में भी सुलोमित हो रहे हैं -

राज्य रंगिष्ठ बीच रंगमल्ल रखनी ।

मुद्र - मुद्र मुद्राव महा-गौर न समाय का

बाव बतराव बाव बाव गुनन में भी ॥ टेका ॥

जोड़े पट एक पौड़े गौर किंक के निपट

मानव सुव - सत्तर में छे मुक्त मयंक है ।

स्पर्शिक नव किरीर कुंर और स्थाप गौर

काहु उरति गौर गौ किरीर करव रति ही ॥

देखी प्यारी पीड़ कर भी प्रीतम की केत में

मरती है ---

कपि रौ बचीली हैत कट कट करिके

प्रीतम की गौर प्यारी कीमें केत मरिक्के ॥

क विहारीत्तव का वर्णन देखी ---

सुमन सुकम चरीवर में निहित करव केत कट कुंन विहारी ।

बस परव बरसव बसनि बहि बिपुल पुलक का मोव महारी ॥

सनकादिन और नारद के वागमल का वर्णन देखी ---

गौर गौरी नमुर गौरी नव किरीरी मांयकी ।

कोनिका कट कीर नाना रंग दुर उपकायकी ॥

✦ ✦ ✦ ✦ ✦ ✦ ✦

---

१ - नित्य विहार पदावली - स्पर्शिकीय पुष्क ८१ पद ६६

२ - मुद्र उत्सव मणिमाल - स्पर्शिकीय पुष्क ९०

३ - " " " " " " ३६

कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु ।

कबहु तथा तथा कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु ।।<sup>१</sup>

मुकुन्दलाल मणिमाल के मकल मकलीलाल का वर्णन

देखिये :-

मकली मकल मकली मकली मकली मकली मकली ।

कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु ।।<sup>२</sup>

मुकुन्दलाल मणिमाल के उत्तरार्द्ध में भीराम कन्धीलाल  
वर्णन में मकली के स्थान के लिए कबहु में भीराम के उत्तरार्द्ध की बात करते  
हैं —

कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु ।

मकल कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु ।।<sup>३</sup>

भीराम के जन्म के उपरान्त कामिनी सुन्दर भील  
नारदी है । उनके पुत्र में ऐसा आनंद उत्पन्न रहा है कि उन्हें नाकी में  
कोई उल्लास नहीं आती —

नायक भील सुनील कामिनी कबहु कबहु कबहु कबहु ।

उर आनंद उदायि भील कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु ।।<sup>४</sup>

कैहीं स्थान पर उत्पन्न उत्तरार्द्ध का सुन्दर प्रीति  
हुआ है, राधिका के निश्चितता को पर कैहीं की कबहु कबहु कबहु  
कबहु कबहु है भावों मुकल कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु कबहु —

१ - मुकुन्द लाल मणिमाल - उत्तरार्द्धिक पुस्तक १०२ पृष्ठ २२७

२ - " " " " " " १३८-२२५

३ - " " " " " " १४२-१६

४ - " " " " " " १४३-५५ ६





सीमा शिवा नु की की की उज्जारी रूप खात ही ।  
 किन लंक मानी मयंक , जई वपुदेता हाथि मात ही ॥  
 की नीर म् नु फेरव नयन, मनु उद्धरि वरि ये वीर ही ।  
 सुक नासिकापर निम्ब फल, विविध परमानि अने बायो वीर ही ॥  
 सुनु सुकसीरानि मानि, काऊ भुवि सुमन नटिब बराय ही ।  
 विविध विभुस स्वामि विष्टानि म् वरि हानि रखी लुभाय ही ।  
 लंक सुष्ट सुपीरि वनि का वान विविध विभाय ही ॥  
 सुक लंक पर हाथि देव म् विष्टा सुष्ट सुलभाय ही ॥<sup>१</sup>

वीरों के सुत हरि वपु के रूप वात है । उनके  
 हरि की वरि वपु के रूप वीर की वरि हैं । वीरों के हरि की  
 वपु है रूप यीजा देखि —

वरुण दीर सुत के विभु हरि ।  
 स्वांमा स्वांम स्वरुण उज्जगर नागर मुन मंवीर ॥१॥  
 का का लंक वरि हाथि उमं मेव रूप वीर ।  
 रूप रचित का लम्बा है निर्वि सुस सुभा की वीर ॥<sup>२</sup>  
 उममा लंकार वीर रूप लंकार का हांवा देखि—  
 सुस पैम पीका कृत वन  
 मेव वरि वरुणा लपटानी ॥<sup>३</sup>

- 
- १ - सुक उल्लस नागनात - उपरलिखित पुष्क २-२६  
 २ - नित्य विहार पदावली - उपरलिखित पुष्क ६१ पर १२  
 ३ - नित्यविहार पदावली - उपरलिखित पुष्क ७४-पर ७८

स्वामि हाथ से दर्पण दिखा रहे हैं और स्वामि  
चिर के नीचे संभार रही हैं । सवि कन राधा की ज्योति को  
स्वामि एक टक देख रहे हैं :-

कर ते दर्पण स्वामि दिखाकर  
स्वामि ने संभारते ही के नीचे ।  
एक टक रहे निरति सुंदर घर  
सुख सुख सचिबन्दी की नीचे ॥<sup>१</sup>

सुख उत्सव मणिमाल में एक देखी -

मो घर सुन रहे की डारत की ।  
कर केका गरि गरि निबन्दी, क्यों केरि की मारति की ।<sup>२</sup>

सुख रस के पेदा होने पर सुख का ऐसे उमड़ रहे हैं  
मो डारत उमड़ रहा की । अपना बलीय के -

दीन प्रान सुख का नाची, क्यों को सुख रस ।  
सुख सुख का सुन क्यों डारत क्यों, परति प्रकाश क्यों ॥<sup>३</sup>

प्राण चारी राधा के कल सुख के रस के समान हैं  
उपमा देखी -

---

१ - नित्य धिक्कर फाकड़ी - अरविन्द - पृष्ठ ८० पद ६३

२ - सुख उत्सव मणिमाल - अरविन्द - पृष्ठ ३ पद १३

३ - " " " " " " पृष्ठ ७० पद १०२



### मृग

स्वामा स्वाम के जीव उत्सर्ग, भेदि प्रंगों, रस प्रंगों एवं रूप वीर्य के वर्णन के कारण रूप रसिक के काव्य में प्राप्य और भाव्य मृगों की परम्परा है। वास्तव में प्रकाशा का भाव्य का साक्षर है। उनका काव्य कंगरी और जीव राम रामनिर्वा है वृत्त है। राम रामनिर्वा द्वारा वह वीर्य के कारण उनके काव्य में भाव्य मृग की और भीष्टि हो गई है। जहाँ पर भी वर्ण विनाय की वरुणा है काव्य मुक्ति है वहाँ प्राप्य मृग की प्राप्ति स्वाभाविक है। हरिश्चात वशाकृत में भी जहाँ जनि मृग की गरिमा गई है वहाँ पर प्राप्य एवं भाव्य मृग स्वाभाविक रूप से प्राप्य हुए हैं यद्यपि :-

ज ज हरिश्चात देव देव्यादिक कृत देव जानक दे

देव परमा करण रामें ।

वस्तु वृत्त निधान जनि कृत कृत प्रकृत मान नैक

मरुत जनि उर वशात विनिर्वा पानि ॥

नित्य रसवि रस विनाय वस्तु न विन कृतावत

परम पद निधान वात वीर्ययो न पानि ।

वाति वन्धी वस्तु जनि भरी वीर्य पानि जनि

भरी है रस जनि भरी वस्तु जनि ॥

१ - हरिश्चात वशाकृत - कपटिलिखित पुस्तक ५० पद १



### प्राद पुण देखी —

प्राद पुण हरिध्यास नाम लीये सल्ल कंसल सारी ।  
 जिसी नाम पाव पड़ये की पाव कान्ध पाव जरि पारी ।  
 सम्पूर्ण हरिध्यास नाम की पाविया जियल कही नहिं पारी ।  
 हरिध्यास वन्द्य पर हम रहित नम पुन कबहारी ॥

### एक अन्य पद देखी —

पाव हरिध्यास महा पुन धामर ।  
 पाव पुन पुकाराणि स्वायी वन्द्यानी काव उजगर ।  
 एव पुन धरण करण कान्ध नम उरण धरण पुन पर जामर ।  
 की हरिध्यास धरण नम का में धर धरण जामर की धामर ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

- 
- १- हरिध्यास यज्ञानुस - स्मरतिमैव पुण्ड ५६ पद २  
 २- " " " " पुण्ड ७७ पद १

## ः स्व तत्त्व देव जी का निम्नार्क साहित्य में स्थान

स्व तत्त्व देव जी छिंदयास देव के ज्ञान के चिन्हों में महावाणी की रक्षा की। महावाणी निम्नार्क सन्ध्या के सिद्धांत का ही सम्बन्धी रखती है। महावाणी का निम्नार्क सन्ध्या का अर्थ महत्व है। एक प्रकार से स्व तत्त्व देव महावाणी के अन्तर्गत आये जाते हैं। स्व तत्त्व देव ने छिंदयास सन्ध्या में अपने गुरु जी और महावाणी की महत्ता का ज्ञान दिया है। उन्होंने कहा है :-

भक्त भक्त सखी निवे, अपनी अपनी छोर । [1]

स्व तत्त्व छिंदयास जी, भक्त तत्त्व का छोर ॥

जो छोर का छिंदयास जी, जान की अवसर ।

जान का जान का उपदे, दीये अवसर ॥ [2]

जी छिंद यास का छोर, स्व तत्त्व का जाति ।

नीचे है ऊँचे जियो दीयो लोह र पानि ॥ [3]

जी राधा कृष्ण उपासना, जी मुन्दावन धाम ।

जी छिंद यास का ज्ञान, पूरा होय न ज्ञान ॥ [4]

ऊपर लिखा है कि छिंदयास ज्ञान ऊपर कीर्ति नहीं है। छिंदयास देवापनम देव के मन कावरे। किन्तु नेह के भारी प्रियम को प्राप्त किया जा सता -

छिंद यास देवमम ए नम कर के ।

किन्तु नेह नीच पाएय भारी प्रियम नेह ॥ [5]

है मन का छिंदयास किन्तु तेरी नाचि न होय ।

जान का लोह, भारी प्रियम होय ॥ [6]

---

|    |                |                      |             |
|----|----------------|----------------------|-------------|
| 1- | छिंद यास कावरे | स्व तत्त्व देव पृष्ठ | 2-8         |
| 2- | "              | "                    | पृष्ठ 4-30  |
| 3- | "              | "                    | पृष्ठ 8-7   |
| 4- | "              | "                    | पृष्ठ 10-25 |
| 5- | "              | "                    | पृष्ठ 20-6  |
| 6- | "              | "                    | पृष्ठ 21-11 |

---

छीर व्यास जी जिनका नाम सदा साधुओं का नाम करने वाला है -

जहाँ नाम छीरव्यास का, वहाँ सब जाना है ।

साधुओं का पुरा साधुओं का नाम ।

॥३॥

जिसे छीर व्यास भक्त के योग, ज्ञान, कर्म, विद्या सबकी ज्ञानिनी सभी का देव पूज्य है ।

योगी ज्ञानी ज्ञानविद्या, योगी विद्या ज्ञानिनी ।

जिसे हरण छीर व्यास पद, सब दर्शन सब ज्ञानिनी ॥ ॥३॥

हे प्रिया मेरे ऊपर तुम करो निश्चय मेरी देह निश्चय मेरे वस्त्रों-मेरी पत्नी रहे -

जहाँ प्रिया मेरे पर करो, वहाँ ज्ञान का ।

निश्चय मेरी तुम वस्त्र की, ज्ञान पत्नी मेरे देह ॥ ॥३॥

ही प्रजापति हरण ने, सब उपाय विद्या की भूमि में प्रिया है -  
ही सब संसार देव की एक ही-ही संसार है । प्रिया महापत्नी की प्रणत  
करने के लिये ज्ञान का पूजा का ।

॥३॥

सब संसार देव ने छीरव्यास देव की ओर उनको महापत्नी का बहुत  
प्रकार प्रकार प्रिया करके उनका निश्चय सम्प्रदाय में बहुत महत्त्व पूर्व और  
विशिष्ट ज्ञान है। छीर व्यास देव निश्चय सम्प्रदाय के पितामही और  
निश्चय सम्प्रदाय के प्रदाता रहे हैं। उनकी विद्या साधुओं में विशिष्ट  
ज्ञान है। निश्चय सम्प्रदाय में महापत्नी एक ही-ही ज्ञान माना जाता है।  
सबको विद्या ही सब देव का भी निश्चय सम्प्रदाय में एक महान ज्ञान है।  
महापत्नी में सबको ज्ञान की स्पष्ट प्रिया प्रिया है।

१- छीर व्यास का नाम सब संसार देव पृष्ठ ११-२३

२- " " " " पृष्ठ - १२-१

३- " " " " पृष्ठ ३१-३

४- सब उपाय विद्या की भूमि पृष्ठ ३ प्रजापति हरण ।

### स्व सत्त्व जी की अन्य कृतियों के तुलना

स्व सत्त्व देव जी का कार्य अज्ञान है। जोक अज्ञान पर उनकी उम्मीद और भावना हिन्दी के प्रमुख कृतियों से मिलती है। सुदाम ने नेत्र धर्म जो सुदामाजी में किया है उसकी तुलना में स्व सत्त्व देव जी का नेत्र धर्म है। प्रिय प्रियेश के प्रियेशजी से निम्न धर्म करता राज है, प्रिय प्रियेशजी में जाया है- प्रीति की नित्य रंगितों के जाने ।

अपि अज्ञान जोक कृतियों में दोन अज्ञान माने ,

स्व सत्त्व देव जी की जाजाकृतियों की प्रेम मीरों में धर्म है -

सत्त्व जोक कृतियों अपि जाजा प्रीति ।

अपि प्रीति प्रेम के जाने है रहे दोन ॥ [1]

विहारी नाम सत्त्वधर्म के प्रमुख धर्म है। उनके दोनो के सत्त्वधर्म में प्रीति है कि माया में माया भर है। उनके दोनो \* देव में छोटे की जाय अज्ञान मीर \*।

स्व सत्त्व देव के जोक पद विहारी के दोनो से सत्त्व सत्त्व है ।

नाये का उदाहरण दण्ड्य है \* विहारी का दोन है -

प्रिय प्रिय कर्मों पदों कि प्रीति भवि अज्ञान ।

ना निरु वेद प्रीति नहि अज्ञान किओकन मान ॥ [2]

स्व सत्त्व देव निरु विहारी पदा जी में मिलते है -

विहारी प्रीति कर्मों कि प्रीति ।

विहारी प्रीति के प्रिय प्रिय ठारे भवि सत्त्व निरु जी ।

विहारी प्रीति के जान जो जान दण्ड्य जी ॥ [3]

विहारी नाम ने विहारी कर्मों में मिलते है-

तो पर प्रीति ठारों, जो सत्त्व प्रीति ।

दु मोहन को ठार जी , है ठारों कर्म ॥ [4]

- 
- 1- जाजाकृतियों प्रेम मीरों स्वसत्त्व देव पृष्ठ 9-2
  - 2- विहारी कर्मों - विहारी नाम दोन 356 विहारी सत्त्वधर्म ।
  - 3- निरु विहारी पदाजी स्व सत्त्व देव पद 39
  - 4- विहारी कर्मों विहारी नाम दोन -25 विहारी सत्त्वधर्म
-



स्य संतक देव विजारी है =

जान उर की उरवारी प्यारी ।

यनि भुवन ली धरत उरवारी प यन्तु की प्यारी ॥ [1]

विजारी जान मे नेनों का कर्म करते हूँ विजारी है।

सा विजारी गंजु लिये कंजु गंजु देन ।

कंजु रंजु द विजारी कंजु गंजु नैन ॥

[2]

उज्ज है नीचे है प उज्ज है नीचे है ।

धुरंग है नीचे है प नि नीचे है ॥

[3]

सा प्रजोर हम देखते हैं कि स्य संतक देव के ओर कर्म विजारी साहित्य  
के उच्च जोड़ के वीरों के कर्म से कमाती है। सा प्रजोर हम यह देखते हैं  
कि स्य संतक देव उच्च जोड़ के वीर है और उनकी वीरता उच्चजोड़ के  
विजारी वीरों के कर्म से कमाती है जिस प्रजोर हम नहीं है ।

---

1- विजारी विजारी प्यारी स्य संतक देव पद -43

2- विजारी कर्म विजारी जान दोन 46- विजारी रत्नाकर

3- जीना विजारी नित्य विजारी प्यारी स्य संतक देव पद 96

---

## हिन्दी साहित्य को हम सत्सक देव जी का प्रदेव

हम सत्सक देव ने हरिब्यास यज्ञिक की रचना की जिसमें अपने गुरु हरिब्यासदेव के का जो गान किया । निर्गुण भक्ति परम्परा में गुरु के प्रति बड़ा भाव रहा है और गुरु को उस क्षेत्र को दिखाने जाता जहाँ उससे भी बड़ा होता है । वह प्रकार हरिब्यास यज्ञिक की रचना से गुरुओं के प्रति बड़ा जो भावना की बीबीड हुई और बड़ी के प्रति आदरभाव बड़ा । वृद्ध उत्तम विभास में हम सत्सक देव जी ने ओह उत्तम का वर्णन किया है।

उन उत्तमों में ब्यासा ब्यास सब क्षेत्र छोड़ा करते हैं और जानिन्दत होते हैं।

उसके अनुसार साहित्य की बीबीड होती है और जीवन में बारी का बारी भावना का जन्म का विकास होता है जिससे जीवन भी माल माल होता है । भारतीय संस्कृति के प्रति ओह उत्तम जीवन में उत्तम का जानन्द की बीबीड करते हैं। जीवन में उत्तम माल विकास का निर्माण करते हैं । साहित्य का उद्देश्य जीवन को माल का जानना और जानिन्दत करना है । जानन्द की उत्तमों में जानना बड़ी । जोता विज्ञान में बीस बीसवीं का वर्णन है । उसके बीस विज्ञान सम्बन्धी साहित्य का प्रकार प्रकार हुआ । नित्य विचार ब्यासा में नित्य विचार का वर्णन है। उसके अनुसार पर नित्य विचार सम्बन्धी साहित्य का प्रणय का प्रकार प्रकार हुआ ।

नि-वार्ड सम्प्रदाय में महाकाव्य का बीबीड सम्प्रदाय है । एक प्रकार से यह विज्ञान ग्रन्थ है। महाकाव्य के प्रकार प्रकार के कारण निम्नार्ड सम्बन्धी साहित्य के प्रणय में हम सत्सक देव ने बड़ा योगदान किया । वे प्रतिभाशाली की हरिब्यास देव के विषय में बारीको निम्नार्ड सम्प्रदाय सम्बन्धी साहित्य का वर्णन उनके कारण हुआ और निम्नार्ड सम्प्रदाय का और अधिक प्रकार प्रकार हुआ ।

हम सत्सक देव की भाषा की बीबीडत ग्रन्थ भाषा भी बारीको प्रभाषा की बीबीड उनके कारण हुई । प्रभाषा के बीबीड का विकास हुआ । हिन्दी साहित्य की बीबीड हुई ।

अ सत्त्व देव के पदों तथा काव्य में लोक रागरागिनीयों का प्रयोग हुआ है जिससे यह समझते हैं कि उनका काव्य गैर है । ब्रजभाषा के लोक कवियों के काव्य में उनके अनुसंधान पर रागरागिनीयों को स्थान मिला । उनका काव्य रागरागिनीयों से सम्बन्ध है क्योंकि हिन्दी साहित्य में गेयता का आभाव है ।

अ सत्त्व के काव्य से निम्नार्थ दर्शन एवं सिद्धान्तों का प्रकार प्रसार हुआ । इस प्रकार हिन्दी साहित्य में देवादेव सिद्धान्त का समावेश हुआ तथा प्रकार प्रसार हुआ । उनके साहित्य के कृत्यों से निम्नार्थ सम्बन्धी अनुसंधानों की शैली में बूँद हुई ।

इस प्रकार हम यह समझते हैं कि अ सत्त्व देव का हिन्दी साहित्य को अधिक योगदान है। यहाँ एक और उनके साहित्य में हिन्दी साहित्य में देवादेव सिद्धान्त सम्बन्धी भाषा का प्रकार प्रसार किया गयी ब्रजभाषा को रंग रागिनीयों की ओर अनुसंधान किया । उनके ग्रन्थों के समावेश से ब्रजभाषा तथा हिन्दी साहित्य का भेद ही भेद ही साथ ही भाषा की बूँद में सुधार हुआ । इस प्रकार हिन्दी साहित्य का अ सत्त्व देव ने लोक प्रकार से उन्मूलन किया हिन्दी साहित्य को अ सत्त्व देव का प्रयोग माना है ।

सहायक ग्रन्थ सूची  
सहायक ग्रन्थ सूची

संस्कृत ग्रन्थ

श्रीवाचस्पतिनिष्पाद

रवीन्द्र प्रकाश

संस्कृत ग्रन्थ

मैत्रेय उपनिषद्

मन्त्रोपनिषद्

मन्त्रोपनिषद्

मीमांसासूत्र नीति - नीतिशास्त्र नीतिपुर

नारद शक्ति सूत्र

सूत्र

रस्य नीति

मैत्रेय नीति

मैत्रेय रत्नाञ्जलि - हरिश्चन्द्र

हरिश्चन्द्र रत्नाञ्जलि - स्व नीतिशास्त्री

निष्पाद नीति - सूत्र

नारदशक्ति सूत्र

निष्पादित्य वरुणी - हरिश्चन्द्र



## हिन्दी-ग्रन्थ संस्करण

महावाणी - हरिश्चन्द्र

कल्याण वर्ण - १६ वॉल ५

बीमारक्त्य - डॉ. ज्ञान्य वाचस्पति

युक्त कृत - बी. पट्ट

सुखी वृत्ति - डा० कदम्बराव मिश्र

वृत्तान्त और वृत्त सम्प्रदाय - श्री. वी. नारायण गुप्त

विहारी रत्नाकर - श्री. ज्ञानाकाश रत्नाकर

वृत्तान्त और वृत्त

नृप वाचस्पति का वृत्तान्त - डा० वल्लभ

निम्बार्क सम्प्रदाय विद्वान्त और वाचस्पति - डा० प्रेमारायण बी. वाचस्पति

मि. वन्धु विनीत

बी. वृत्त वृत्तान्त मणिपाठ - श्री. वृत्तान्त

नित्याविहार पदावली - वृत्तान्त

सम्प्रदाय प्रदीप

मराठी वाचस्पति का वृत्तान्त - डा०. पानीपत्त

परमपराकाशी - डा०. रत्नपूजा कर्मा

निम्बार्क चम्पूदास - कुम्भामर्तु किम्बी कवि - डा० नारायणदास झा

परशुरामदास - धर्मनाथदास बाई प्रवि

श्री लालमोहन - सम्पादक कुम्भाराम शरण

मानन्द १ गुम्भावर्त १ स० डा० विश्वनाथदास मिश्र

निम्बार्क देवानन्द - अध्यापक ललितकुम्भार गोस्वामी

कबीर गुम्भावर्त - कबीरदास

निम्बार्कनाथ पञ्चानन - रामचन्द्र कुम्भ

परशुराम पदावर्त - रामचन्द्रदास झा

परशुराम देव बाणी - रामचन्द्रदास झा

परशुराम दास - उद्गातृ - सम्पादक डा० डी० पी० श्रीलाल

उपक - श्री विद्यामणि विश्वेश्वर

विश्व श्रीराम - विश्वेश्वरदास